अंधेरे के दीप

लेखक
ओमप्रकाश शर्मा

भूमिका लेखक
डा० राम विलास शर्मा

भूमिका



इस उपन्यास मे दो तरह के मानव-सम्बन्ध दिखाये गये है। एक तरह के सम्बन्ध उन इन्सानो के हैं जो धनी हैं और सभ्य कहे जाते हैं। ये लोग साधारण जनता को ही धोखा नही देते, आपस मे भी एक-दूसरे को धोखा देते है। इनका पारिवारिक जीवन टूट रहा है; प्रेम की जगह बेहयाई और व्यभिचार ने ले ली है। दूसरी तरह के सम्बन्ध उन लोगो के है जिनको समाज मे ऊँचा दर्जा नही मिला, जो गरीबी मे दिन काटते हैं, जिन्हें समाज मे पतित समझा जाता है लेकिन जिनके हृदय मे प्रेम की निर्मल धारा बहती है। इन दोनो तरह के लोगो की तस्वीर खीच कर लेखक ने आज के समाज की बहुत अच्छी जानकारी का परिचय दिया है।

नवाब, मैना, छदम्मीलाल वगैरह के चरित्र एक बार उपन्यास पढ़ने पर बहुत दिनो तक याद रहेंगे। जहाँ छदम्मीलाल जैसे लोगो की हैवानियत देखकर पाठक को घृणा होती है, वहाँ प्रेम, नवाब और मैना के स्नेह सम्बन्ध देखकर उसका हृदय खिल उठता है और इन्सानियत मे उसका विश्वास दृढ होता है।

इस उपन्यास में हास्य और व्यंग्य की छटा के साथ-साथ प्रेम और भावुकता का प्रकाश भी है। लेखक मे यह ताकत है कि वह आप को हँसाता है, और हृदय मे करुणा भी जगाता है। साथ ही आज के राजनीतिक जीवन की असलियत प्रकट करके उसने पाठक को यह शिक्षा दी है कि मौजूद जनतन्त्र भी पैसे वालो के हाथ में कठपुतली की तरह नाचती है। जनता को अपना जीवन सुखी बनाने के लिए अभी बहुत उद्योग करना पड़ेगा। भाषा सरल और प्रवाह पूर्ण है। इस तरह के और उपन्यास ओमप्रकाश जी लिखेंगे, ऐसी आशा है।

रामविलास शर्मा

जवाहर चौधरी को

'आदर्श' में प्रकाशित अपनी प्रारम्भिक

रचनाओं की स्मृति में ।

—ओमप्रकाश शर्मा



१

जब लाला छदम्मी लाल की कहानी कहनी ही है तो बेहतर यही होगा कि पहिले उनका चौखटा दर्ज कर दिया जाय।

आज के वर्णसंकर समाज की असल माँ कौन है? यह बात अभी विवादग्रस्त है, सैकड़ों प्रस्तावित माँ हैं···छोड़िये, जब धर्मगुरुओं की मंडली इस विषय में एक मत से अपना फैसला दे देगी तब देखा जायगा।

वर्तमान मानव और प्राणी समाज के तीन आदि पिता हैं—ब्रह्मा, विष्णु और महेश। तीनों ने अलग-अलग दिमाग पाया है, अलग-अलग स्वभाव है, और उनके काम भी अलग-अलग बँटे हुए हैं। तीनों में—कौन बनायेगा, कौन बिगाड़ेगा, और कौन मिट्टी के बने हुए खिलौने से चराचर जगत में अच्छे बुरे का अभिनय कराकर कुशल निर्देशक जैसा रौब पैदा करेगा···?

परम पिता नम्बर दो, अर्थात् श्री ब्रह्मा जी की सनक के बारे में कुछ कहना है !

'परन्तु बात तो लाला छदम्मी लाल के चौखटे की चल रही थी ?'

घोंघेपन से काम नहीं चलेगा, अपनी सन्तानों के चौखटे बनवाने के लिये क्षीर सागर की तह में बाकायदा कारखाना खोलने वाले आदि पिता नम्बर दो की उपेक्षा आप कैसे कर सकते हैं। मानते हैं कि लाला छदम्मी लाल के चौखटे की चर्चा हो रही है, किन्तु बात की पूंछ यहीं से आरम्भ होती है कि—

परम पिता नम्बर दो को आदि काल से एक सनक रही है कि उनकी प्रत्येक कृति में कुछ न कुछ नवीनता अवश्य रहे। असमानता उनका ध्येय रहा है—कभी उन्होंने चूहे और ऊँट को बराबर नहीं बनाया। ऐसे अस्वीकृत प्रार्थना-पत्रों की मनों रद्दी वह बेच चुके हैं जिसमें खरगोश और बकरी समाज ने हाथी की काया मांगी थी। प्रार्थना पत्र सीधे रद्दी की टोकरी में पहुँचे और फिर रद्दी के भाव उस लोक के बनियों को बेच दिये गये।

असमानता का ध्येय धीरे-धीरे दस्तकारी और पच्चीकारी का शौक बनकर रह गया। और तो और, आदमी की दस उंगलियों के लिए भी दस उलट और दस पलट बीस सांचे बनवाये जाने लगे।

खैर, यह सब तो सभी के लिए है किन्तु लाला छदम्मीलाल का सांचा निस्सन्देह किसी सीखतोड़ कारीगर ने बनाया होगा। अपनी-अपनी अकल ही तो है; उस कारीगर ने विषयवस्तु का तो ध्यान रखा, किन्तु रूप के बारे में वह वर्तमान हिन्दी कवियों की भाँति प्रयोगवादी ही रहा।

उदाहरण के लिए लाला छदम्मी लाल की ऊँचाई पांच फुट एक इंच है, किन्तु उस सीखतोड़ कारीगर की कृपा से आपकी कमर और पेट का क्षेत्रफल पांच फुट नौ इंच है। इस बेतुकी तोंद और बंजर जमीन की तरह फैली हुई कमर के कारण लाला एक युवा पुरुष की बजाय गोल गेंद मालूम होते हैं। भारी भरकम टांगें, तोंद के ऊपर पहाड़ की चढ़ाई

जैसी बेतरतीब छाती के ऊपर छोटा-सा सिर—मतलब यह कि होने को तो सभी कुछ है किन्तु कुछ इतना बेतरतीब, मानो पूरे बदन पर पेट महाशय की तानाशाही हो। बदन के सारे हिस्से यूँ ही लुंज-पुंज, बस अगर है तो तोंद—देखने दिखाने लायक !

रंग के बारे में भी गड़बड़ रही। उस दिन जब कि लाला के ढाँचे पर रोगन किया जाने वाला था, हिन्दुस्तान के इन्सानों को रंगने वाला गेहुआँ पेन्ट आउट आफ स्टाक हो चुका था। फलस्वरूप कारीगर ने काला और थोड़ा-सा बचा लाल मिलाकर 'डार्क ब्राउन' लाला पर फेर दिया।

नौसिखिये प्रयोगवादी कलाकार-कारीगर के कारण हमारेश्रु श्याम-हृदय सेठ जी के होंठ ऐसे हैं मानो किसी सुघड़ कुँआरी कन्या द्वारा छोटे-छोटे उपले थापे गये हों। दाँत सामान्य दाँतों से कुछ अधिक लम्बे हैं, किन्तु भारी-भरकम होंठों की कृपा से वह अपना स्थान छोड़कर होंठों से बाहर नहीं निकल सके। अलबत्ता कलाकार द्वारा प्रेषित क्षीर सागर रेडियो स्टेशन की विज्ञप्ति के अनुसार लाला की छोटी-सी चाँद पर सूअर के बाल इसलिये लगाने पड़े कि जगत् पिता नम्बर दो के कारखाने के लिये कच्चा माल लाने वाला जहाज अकस्मात् तूफान में फँसकर डूब गया था। *बढ़िया रंग-रोगन के पीपे, स्वर्ग लोक में पैदा होने वाला पटसन, जिससे* रेशमी लच्छेदार बाल बनाये जाते हैं—सभी कुछ उसमें था; स्टाक में अब केवल सूअर के बाल ही शेष बचे थे।

जगत् पिता अपनी इस प्रयोगवादी कृति के साथ अधिक अन्याय नहीं कर सके। उन्होंने लाला की हाथ की रेखाओं में कुबेर का धन लिखा, दिमाग में हिटलर और नैपोलियन के इरादे रक्खे, और *चलायमान हृदय* में इन्द्र """"राजा इन्द्र बनने की लालसा भर दी।

किन्तु ठहरिये, कहानी का सिलसिला उल्टे क्रम से चल गया है। *किसी बड़े आदमी के बारे में अगर लिखना हो तो सही तरीका यह है* कि सर्वप्रथम उसके वंश का परिचय देना चाहिये। होना था सो हो

गया·······अब लाला छदम्मी लाल के वंश का परिचय लीजिये।

बरसों पैरतुड़ाई के बाद लाला के कुल की तीन पीढ़ियों का परिचय मिल पाया है। लाला भीखूराम का जन्म सन् अठारह सौ सैंतीस में जिला करनाल में हुआ। बीस साल तक वह भीख मांगते रहे या पालने में झूलते रहे, इसका विवरण प्राप्त नहीं हो सका। सन् अठारह सौ सत्तावन में जब उनकी आयु बीस वर्ष की थी तब वह करनाल से कुछ मील दूर जहाँ पानीपत और सोनीपत की सीमा करनाल से मिलती है—दिल्ली से आने वाली सड़क के किनारे भुने हुए चने और मूंगफली बेचा करते थे। लोकोक्ति है कि गदर के उन बीस-पच्चीस दिनों में, जबकि अंग्रेज बहादुर बाग़ी हिन्दुस्तानी सिपाहियों से दिल्ली में मार खाकर करनाल भागे आ रहे थे, लाला लखपति बन गये। कैसे बन गये, यह कोई नहीं जानता।

अठारह सौ अट्ठावन में जब अंग्रेज बहादुर का अटल एकछत्र राज्य दिल्ली में बाकायदा जम गया, भीखूराम तीन ऊंट, दो शिकरम और अठारह नंगी तलवार वाले जाटों के काफिले को लेकर दिल्ली आये। किराये के ऊंट, शिकरम और जाट किराये के थे, वापस चले गये। लाला फिर अकेले थे एकदम अकेले। विश्वास नहीं होता, किन्तु पता यही चलता है कि उनकी शादी अठारह सौ अठहत्तर में हुई, तब लाला की उम्र इकतालीस साल की थी, और उनकी धर्मपत्नी गेंदों देवी की उम्र भांवरे पड़ते समय केवल सोलह साल दो महीने की।

लाला भीखूराम पर अंग्रेज हाकिम की सदैव कृपा रही। एक डिप्टी कमिश्नर ने उन्हें प्रोत्साहन देकर विलायती कपड़े की दूकान खुलवाई, दूसरे ने उन्हें मानचेस्टर मिल्स का उत्तर भारत के लिए सोल-एजेन्ट बनवा दिया, और तीसरे ने······? लोगों का कहना है कि सन् अठारह सौ पिच्चासी में उत्पन्न होने वाली गेंदो देवी का एकमात्र सन्तान कहने को तो भीखूराम की कहलाती थी, किन्तु वास्तव में वह तीसरे डिप्टी कमिश्नर की थी। एकदम गोरे गुलाबी रंग के शिशु का नाम

फकीरचन्द रखा गया।

पूरे सन् उन्नीस सौ में लाला फकीरचन्द का विवाह उस समय दिल्ली के सबसे बड़े लोहे के व्यापारी सेठ छंगा मल की इकलौती पुत्री अशरफी देवी से हुआ। अशरफीदेवी ने कई सन्तानों को जन्म दिया किन्तु गोद भरी न रह सकी। अन्त मे सन् उन्नीस सौ अठारह में एक चिरंजीव जन्मे, नाम रक्खा गया छदम्मीलाल। यह बात कहना उचित नहीं है कि आमतौर से लाला फकीरचन्द के हम-उम्र लोग कहा करते थे कि फकीरा "अपनी मोटी तोंद के कारण स्त्री के अयोग्य है। उसके घर में छदम्मी सहित जितनी भी औलादें जन्मी, सबकी सब कलुवा कहार की थी।"

लाला फकीरचन्द की इच्छा थी कि चिरंजीव अंग्रेजी कालिज में पढ़कर नाम रोशन करे। किसी तरह ले देकर लाला ने उसे दसवीं श्रेणी तक तो पहुँचा दिया, किन्तु यहाँ जाकर गाड़ी ऐसी रुकी कि तीन साल तक खिसक ही न सकी।

अन्त में मजबूर होकर लाला ने छदम्मीलाल को भी लाला बनाकर दूकान पर बैठाना शुरू कर दिया। इस समय लाला की तीन दूकानें थी, दो कपड़े की दूकानें, एक खरीज और एक थोक, और एक लोहे की बड़ी दूकान जो उन्हें ससुराल से मिली थी। लाला छदम्मीलाल कपड़े की दूकान पर बैठने लगे।

अब जगह-जगह से लाला छदम्मीलाल के रिश्ते आने लगे। लाला फकीरचन्द बेटे के ब्याह के बाद व्यापार के दुगने-चौगुने होने के सपने देख रहे थे। लोग रिश्ता लेकर आते। लाला फकीरचन्द कहते तीन लाख लूँगा। लोग ठिठक जाते, एक बार लाला छदम्मीलाल के श्री मुख को निहारते और फिर लाला फकीरचन्द को साष्टांग दण्डवत करके लौट जाते। लाल फकीरचन्द मन ही मन घुले जा रहे थे, एक तो उन्हें लड़के के बेडौल चेहरे और आबनूसी रंग से पहिले ही चिन्ता थी कि शायद उनके सपने पूरे न हों, दूसरे अब लाला छदम्मीलाल दिनों दिन फूलते जा रहे थे।

किन्तु एक दिन की बात है कि बिल्ली के भागों छींका टूट पड़ा। लाला किरोड़ी मल आये। आपके दिल्ली, पंजाब और उत्तर प्रदेश में कुल मिलाकर छोटे बड़े पच्चीस कारखाने थे। बिना किसी भूमिका के उन्होंने अपनी छोटी पुत्री रम्भा से छदम्मीलाल के विवाह का प्रस्ताव रक्खा। वैसे तो अपने से हेकड़ किरोड़ी मल को सामने देखकर लाला फकीरचन्द मोम बन कर पिघलना शुरू हो गये थे, फिर भी लाख मन की लगाम खींचते-खींचते मुंह से निकल ही गया—"लोग छदम्मी के लिये तीन लाख दे रहे हैं।" उत्तर में किरोड़ी मल ने चांदी के लीतरे की बजाय फकीरचन्द की खोपड़ी पर सोने का पम्प शू रसीद करते हुए कहा—'छः लाख दूंगा।'

बात पक्की हो गई। उसी समय सेठ किरोड़ीमल ने छदम्मी लाल के माथे पर तिलक करके तीन लाख रुपये का चैक दे दिया।

एक उड़ती हुई अफवाह आई कि सेठ किरोड़ीमल की बी.ए. पास बेटी रम्भा किसी कालेज के लौंडे के साथ भाग गई थी, और पूरे बीस दिन उसके साथ रही। किन्तु अब लाला फकीरचन्द ने बेकार की बातों पर कान देना उचित न समझा, और पहली अप्रैल सन् उन्नीस सौ चवालीस के दिन सेठ किरोड़ीमल की पुत्री रम्भारानी का विवाह लाला फकीरचन्द के सुपुत्र छदम्मीलाल के साथ हो गया। कुल मिलाकर छः की बजाय आठ लाख का माल दहेज में मिला। दिल्ली में मूंगफली का तेल जमाने वाली एक फैक्टरी छदम्मीलाल के नाम दी गई, पिचहत्तर हजार की क़ार भी दहेज में दी गई जिसमें बैठकर वर वधू घर लौटे।

यह सब पास-पड़ोस वालों ने देखा, मुहल्ले-टोले में सभी ने देखा और रम्भा के रूप को देखकर सब सहम कर रह गये। क्या हुआ कि किसी दिलजले ने रम्भा और सेठ छदम्मीलाल की जोड़ी देखकर कह दिया कि—'हूर के पहलू में लंगूर खुदा की कुदरत।'

परन्तु बेचारे छदम्मीलाल के भाग्य! सुहागरात की रात उन्हें हूर के साथ कमरे में बन्द कर बाहर से चटखनी लगा दी गई।

जैसे ही लाला गद्‌गद् होकर दुलहिन के गले में बाहें डाल रहे थे, वैसे ही मानो दुलहिन को किसी ने बिजली का तार छुआ दिया। पलंग से उछलकर वह खड़ी हो गई और क्रोधित शेरनी की तरह लाला पर झपटकर उन्हें धराशायी कर दिया—'पहिले अपनी शक्ल देखो शीशे मे !' आँखें निकालते हुए मिसेज छदम्मी लाल बोलीं—'खबरदार जो पलंग पर कदम रक्खा तो।' इसके बाद मिसेज आराम से पलंग पर लेट गई, और मिस्टर घंटों धरती पर सुबकते-सुबकते सो गये।

इसी प्रकार दिन दौड़ते रहे। फकीरचन्द छदम्मी लाल एण्ड कम्पनी दूसरे महायुद्ध की छाया में दिन दूनी और रात चौगुनी तरक्की करती रही। किन्तु लाला छदम्मी लाल को रात के शयनकक्ष से सदैव झिड़कार ही मिलती रही। क्या हुआ कि कभी छठे-चौमासे रम्भा देवी ने दया करके किसी विशेष कारणवश छदम्मी लाल को कुछ क्षणों के लिये निहाल कर दिया। जब कभी भी ऐसा हुआ, रम्भा की आँखें मुँदी होती थी और मन बाप को गाली देता रहता था, जिसने जो कुछ भी दिया छदम्मीलाल को दिया, करोड़पति होते हुए भी बेटी को भिखारिन ही रक्खा।

ऐसे सुहाने क्षण तभी आते थे जब रम्भारानी को अपने निजी खर्च के लिये चैक लेना होता था, अथवा कोई मन पसन्द सैक्रेटरी रखना होता था।

ऐसे सुहाने क्षणों को पाने के लिये लाला ने अपनी नई कोठी नई दिल्ली में बनवाई, रम्भारानी के दोस्तों को प्रसन्नतापूर्वक वहां हर समय आने की आज्ञा दी, बाहर जाने, दूसरे के साथ घूमने-फिरने की जो पाबन्दी लाला फकीरचन्द ने अपने बेटे की बहू समझकर लगाई थी, वह अपनी ओर से कतई हटाली। लोगों का कहना है कि कुत्ते की पूँछ कभी सीधी नहीं होती। कौन जाने, बात सच है या झूठ, अलबत्ता मिस्टर और मिसेज छदम्मी लाल के आपसी व्यवहार नहीं बदले। वह उन्हें अधिकाधिक सुविधा देते रहे, वह उन्हें अधिकाधिक झिड़कती रही।

दिन बीतते रहे—महीने बीते, और साल बीते। छदम्मीलाल का व्यापार चारों दिशाओं में फूलता-फलता रहा, बैंकों में रकम जमा होती और तोंद बढ़ती रही, किन्तु रात सदा उनके लिए वेदना का कारण बनी रही।

रम्भारानी दिनों दिन खराद पर चढ़ती गई। सेठ छदम्मीलाल से बेमज़ा सहवास के बदले में जो चैक मिलते, उनसे खूबसूरत दोस्तों को पालती और क्लब के जीवन में छदम्मी लाल का नाम रोशन करती।

सेठ छदम्मीलाल का विवाह हुए चार साल बीत गये।

सोलह दिसम्बर उन्नीस सौ अड़तालीस में बूढ़े लाला फकीरचन्द चारपाई पर पड़े तो ऐन पच्चीस दिसम्बर को दूसरे लोक की यात्रा के लिये टिकट कटा गये। हाँ, शायद आप उनकी पत्नी अशरफी देवी के बारे में सोच रहे होंगे; वह तो इनसे आठ साल पहिले ही ठंडे-ठंडे में खिसक गई थी।

दो जनवरी सन् उन्नीस सौ उनचास, आज लाला की तेरहवीं है। यहीं से लाला छदम्मीलाल के जीवन में नया मोड़ आरम्भ होता है।



२

लाला फकीरचन्द की तेरहवीं बड़े ठाठ से हुई। इस अवसर पर लगभग एक हजार व्यक्तियों का प्रीति भोज हुआ।

'सन् उन्नीस सौ उनचास मे दिल्ली मे बड़ी सख्ती से राशनिंग लागू था। कोई भी आदमी पचीस आदमियो से अधिक को एक साथ भोजन नही करा सकता था ?'

छोड़िये साहब यह नई दिल्ली का मामला था। उस दिन राशनिंग कन्ट्रोलर भी वहाँ आये और बड़े शौक से बादाम की बरफी, और बरफ के कूंजे चट्ट करके लाला फकीरचन्द की आत्मा को दुआयें देकर चले गये।

रात के लगभग नौ बजे लाला साँवलचन्द आये। आप दिल्ली के प्रमुख कपड़ा व्यापारियों में थे। खाना-पीना उस समय निपट चुका था। साँवलचन्द को देखते ही लाला छदम्मीलाल ने हाथ जोड़कर उनसे भोजन

करने का निवेदन किया।

लगभग पचास वर्ष के अधेड़ किन्तु तबीयत से रंगीले सांवलचन्द बोले—"छोड़ रे, खाने को तेरा ही दिया खाता हूँ। मैं तो इसलिये चला आया था कि तुझ से यह कह दूं कि भाई, फकीरचन्द के मरने का गम मत करियो। दिल में रंज करने से फायदा ही क्या है? भगवान जिसे भेजेगा आना होगा, जिसे बुलायेगा जाना होगा। बेकार रो-झींक कर हम क्यों भगवान के बुरे बनें।"

इतना सुनते ही सेठ साहब के आँसुओं का बाँध टूट गया। इतनी आत्मिक सांत्वना देने वाला कभी कोई न आया था। पहिली हल्की-हल्की सुबकियां बँधीं और फिर सांवलचन्द के लाख पुचकारने के बावजूद फफकते हुए बोले—"चाचा, मुझे घर काटने को दौड़ता है।'

आर्य-महर्षियों की भाँति ये वाक्य लाला छदम्मी के दिल में उठने वाले रेगिस्तानी बवंडर की विस्तृत व्याख्या का संक्षिप्त सूत्र था, जिसका अर्थ हर व्यक्ति अपनी योग्यता के अनुसार अलग-अलग लगा सकता है। जब लाला फकीरचन्द थे, तब क्या घर छदम्मीलाल को लोरी देकर सुलाता था?

"हिम्मत से काम ले, छदम्मी। पुराने जमाने लद गये। आजकल आदमी की जिन्दगी सिर्फ चार दिन की होती है। अगर जिन्दगी की यही चार दिन रोने-पीटने में गवाँ दिये तो बाकी क्या बचेगा। जरा घूम फिर कर देख तो भरी जवानी में कैसा गेंद की तरह फूल गया है; बैठे-बैठे तेरा जी नहीं उकताता। चल उठ, जरा घूम आयें। गाड़ी चलाना जानता है ना?"

"ड्राईवर है न अपना, ओ लौंडे....!" आँसू पोंछते हुए छदम्मीलाल ने नौकर को आवाज दी।

"क्यों चिल्ला रहा है, ऐसा मौका ड्राईवर को साथ ले जाने का नहीं होता। उठ मेरी गाड़ी में ही चला चल। और हाँ, दो-चार दिन काया को कष्ट देकर सीख ले मोटर चलाना।"

अस्त-व्यस्त-सी बंधी धोती और कुर्ते के ऊपर अचकन पहिनकर बिना कुछ किसी से कहे-सुने छदम्मीलाल अबोध बालक की भाँति सांवलदास की बगल में जा बैठा। सांवलदास ने कार स्टार्ट की और पाँच मिनट बाद नई दिल्ली के मुख्य बाजार कनाट सरकस की जगमगाती हुई सड़क पर जा रोकी।

"कभी दारु पी है, छदम्मी ?"

"नहीं तो चाचा।"

"तभी तो तुझ से छोटा-मोटा दुख भी नहीं झेला जाता। उठ, आज तुझे जिन्दगी की रंगीन तस्वीरें दिखाऊँगा।"

फुर्ती के साथ छदम्मीलाल धोती सम्भालते हुए कार से उतर गये।

यह था 'बार' अर्थात् शराबखाना, बड़े आदमियों का शराबखाना। बड़े-बड़े सरकारी अफसर और लखपति व्यापारी यहाँ संयुक्त मोर्चा बना कर शराब पीते हैं—एक-दूसरे के पापों पर पर्दा डालकर खालिस और शुद्ध हृदय से यहाँ एक-दूसरे के स्वास्थ्य के लिये जाम पीये जाते हैं।

"तो तूने कभी नहीं पी ?" धीमे स्वर से सांवलदास ने पूछा।

"नहीं।" छदम्मीलाल ने कम्पित स्वर में उत्तर दिया।

"फकीरा ने तुझ में एक भी आदत लौंडे जैसी नहीं डाली, और वह खुद भी कहाँ का रुस्तम था""बैरा, दो पैग व्हाइट हार्स।"

"हार्स तो घोड़े को कहते हैं ना, चाचा ?"

"हाँ, व्हाइट हार्स याने सफेद घोड़े वाली।"

बैरा दो पैग व्हिस्की ले आया। साथ में एक प्लेट भुने हुए काजू भी थे।

सांवलदास के संकेत पर एक सांस में ही छदम्मीलाल प्याला चढ़ा गये।

"बड़ी कड़वी है सुसरी""।"

"धीमे बोल, लोग सुनेंगे तो हंसेंगे। काजू खा, जायका ठीक हो जायगा।" मजा लेकर एक-एक घूंट पीते हुए सांवलदास ने कहा।

एक-एक पैग पीकर दोनों कथित चचा-भतीजे बाहर निकल आये। सांवलदास कार स्टार्ट कर रहा था कि छदम्मीलाल ने पूछा—"अब कहां चलोगे, चाचा ?"

"आज इन्दर-सभा दिखाऊंगा तुझे। देखी है आज से पहले कभी ?"

"नहीं, पर चलो, आज देख लूंगा।" स्वर में दृढ़ता थी, मानों प्याले का भूत सिर चढ़कर बोल रहा हो।

दो-तीन मिनट बाद कार पुरानी और नई दिल्ली की सीमा पर स्थित जी० बी० रोड की एक बिल्डिंग के नीचे रुकी। कार के रुकते ही एक आदमी दरवाज़ा खोलने लपका ही था कि दूसरा पनवाड़ी की दूकान से उठता हुआ बोला—"पीछे हटजा वे मंगत, लाला सांवलदास की कार है। हीराबाई के यहां जायेंगे।"

पहला व्यक्ति चुपचाप पीछे हट गया। दूसरे ने कार का दरवाज़ा खोलते हुए कहा—"आज कुछ देर से आ रही है सेठ साहब की सवारी ?"

"हूं।" उतरते हुए सांवलदास ने पूछा—"कौन-कौन है ऊपर ?"

"सेठ जुवेद जी हैं और रतनलाल हैं, एक कोई नया आदमी है रतनलाल के साथ।"

"हूं, ये साला रतनलाल नौ सौ रुपल्ली का सरकारी बैल हमारे मुकाबले में आता है। आ भई छमम्मी....अरे नत्थर, ज़रा सम्भाल तो सेठ जी को।"

करेला और नीमचढ़ा—एक तो पहले ही लाला छदम्मीलाल के भारी भरकम पैर आपे से बाहर रहते थे, ऊपर से खोपड़ी पर 'व्हाइट हार्स' चढ़ा बैठा था। पायदान से फिसलते-फिसलते बचे।

"अबे हट भी।" नत्थर की पकड़ से अपनी बांह छुड़ाते हुए लाला बोले—"मैं कोई नशे में हूं क्या ? यह चाचा की कार भी सुसरे किसी अनाड़ी कारीगर की बनाई हुई है, और कुछ नहीं तो हरामजादा पायदान लगाना ही भूल गया।"

तबले की थाप और घुंघरुओं की झंकार तो नीचे से भी सुनाई दे

रही थी, ज़ीने में चढ़ते-चढ़ते गजल के बोल भी सुनाई देने लगे।

कमरे में घुसते ही सावलदास के सम्मान में गाना बन्द हो गया। हीराबाई, तबले वाले बूढ़े उस्ताद जी और हारमोनियम बजाने वाले छैल-छबीले मास्टर साहब, तीनों ने बड़े करीने से झुक कर आदाब बजाया।

"हीराबाई गाम्रो, बन्द क्यों कर दिया। यह हैं लाला छदम्मीलाल और यह हैं'''।" ज़ीना चढ़ने के कठोर परिश्रम के कारण कुछ हाँफते हुए छदम्मीलाल को सांवलदास ने नाम और उपनामों सहित सब का परिचय दिया।

ह्वाइट हार्स के भूत ने अपना काम जारी रखा, वरना आम तौर से व्यापारिक मुलाकात के अतिरिक्त तकल्लुफदार मुलाकातों में लाला झेंप जाया करते थे, वैसे दिल तो आज भी कुछ तेज़ी से धड़क रहा था। फिर भी बिना खीसें निपोरे एक कूटनीतिज्ञ की भाँति मन्द मुस्कराहट सहित लाला ने सब तमाशबीनों से झटके के साथ हाथ मिलाया। किन्तु अफसोस, चार कदम के फासले पर खड़ी हीराबाई तक चल कर हाथ मिलाने का साहस लाला नहीं बटोर सके, यथास्थान खड़े-खड़े ही एक बार प्रौढ़ता की ओर दौड़ती हुई जवानी के नाज़ो-अन्दाज़ को निहारा और खीसें निपोर दीं।

"बैठो, छदम्मी। हीराबाई, शुरू करो। कोई बढ़िया-सी चीज़ होगी।"

ग़ज़ल का अभी पहला बन्द भी पूरा न हुआ था कि सांवलदास ने पर्स में से सौ रुपये का नोट निकाल कर हीराबाई की ओर फेंक दिया। फिर दूसरा, और गजल समाप्त होते ही तीसरा।

गाना खतम होते ही रतनलाल उठता हुआ बोला—"माफ कीजियेगा, मैं तो भूल ही गया था। मुझे सीधा पालम के हवाई अड्डे पर पहुँचना चाहिये—तुर्की के राजदूत आ रहे हैं।"

"कोई बात नहीं, कल मुलाकात होगी। तुर्की के राजदूत से हमारी

भी राम-राम कह देना।" सांवलदास ने मूंछें मरोड़ते हुए कहा।

रतनलाल और उसका साथी दरवाज़े से बाहर निकले ही थे कि सेठ जुवेद हसन भी उठ खड़े हुए।

"मियां सांवलिया, लो हम भी चल दिये। आज कुछ जोश में मालूम होते हो"''ऐश करो।"

"बैठिये जुवेद साहब, वह तो जरा रतनलाल को उखाड़ना था। बड़ा साला मिनिस्टरी का सेक्रेटरी बना फिरता है। तुम उस्ताद लोगों का मुकाबला भला मैं क्या खाकर करूँगा।"

"वल्लाह, क्या बात कही है, मियां सांवलिया! भई, मैं नाराज कतई नहीं हूं, आज ज़रा मोतीबाई से भी एक ठुमरी सुन लूं। तुम जमो ठाठ के साथ।"

जुवेद हसन के बाद छदम्मीलाल बोले—"चाचा, मैं भी दूं कुछ गाना सुनने का?"

"रहने दे। अरे हीराबाई, अपना माल है, और फिर मेरे रिश्ते से वह तो वैसे भी तेरी चाची लगती है। तू कुछ देगा भी तो यह नहीं लेगी। हीराबाई?"

"हुक्म लाला जी!"

"इस बिल्डिंग में कोई अच्छी-सी छोकरी भी है हमारे भतीजे के लिए। चंचल और हंसमुख होनी चाहिये, जो लौंडे का ग़म गलत कर दे।"

"हां-हां, अभी लीजिये, अरे उस्ताद!" हीराबाई ने तबलची की ओर देखकर कहा—"सेठ साहब को ऊपर राजो के पास ले जाओ। और देखो, कहना कि सेठ जी हमारे खास मेहमान हैं, हुज्जत कतई न करे। जो दे चुपचाप ले ले।"

"जाओ बेटा छदम्मी, सुबह चार बजे चलेंगे तब तक जवानी की बहार देखो, और हां, अगर छोकरी पसन्द न आवे तो लौट आना। एक से एक बढ़िया माल है यहां।"

बिना कुछ कहे-सुने छदम्मीलाल उस्ताद तबलची के पीछे-पीछे चल दिये। पतला-दुबला तबलची तो खरगोश की भाँति पलक मारते ही सीढ़ियाँ चढ़ गया, किन्तु लाला छदम्मीलाल के लिए सोलह पैड़ी बैकुण्ठ यात्रा के समान हो गई।

किन्तु ऊपर कमरे में प्रवेश करते ही लाला निहाल हो गये, बड़ी-बड़ी आँखों वाली परी की तरह सजी छरहरे बदन की राजो ने मुस्करा कर लाला की छोटी-छोटी आँखों में आँखें डाल कर कहा—"धन्य भाग्य मेरे जो आज आप पधारे, उस्ताद! हीराबाई से जाकर कह दो कि यूँ तो लोगों से मैं रात-भर के सौ से कम नहीं लेती। सेठ जी खास मेहमान ठहरे, अगर कुछ भी न देंगे तो गिला नहीं करूँगी।"

"देंगे क्यों नहीं।" व्हाइट हार्स का उतरता हुआ भूत बोला—"दूसरे सौ देते हैं तो हम डेढ़ सौ देंगे, किसी सुसरे से कम खाते हैं क्या।" लाल धम्म से पलंग पर गिरकर ऐसे बैठे कि बेचारा पलंग भी चरमरा उठा।

"कहिये, कुछ पीजियेगा क्या?" पलंग पर लेटे हुए लाला से एकदम सटकर बैठते हुए और उनके सूअर जैसे बालों को अपनी नाजुक उंगलियों से सहलाते हुए राजो ने पूछा।

"जो पिलाओगी पियेंगे, यह लो।" पर्स निकालकर लाला बोले—"एक दो''''''दो सौ तुम लो।" कांपते हुए हाथों से लाला ने सौ-सौ के दो नोट राजो के ब्लाउज के अन्दर डाल दिये। क्षण-भर बाद कुछ सोचकर एक सौ का नोट और निकाल कर फेंकते हुए कहा—"यह लो वही मंगाओ सफेद घोड़े वाली।"

राजो अपनी जगह निश्चल बैठी रही। उस्ताद तबलची की ओर देखकर बोली—"बड़े मियां, लाला के लिये व्हाइट हार्स की एक बोतल लाओ, साथ में बढ़िया-सा नमकीन लाना।"

उस्ताद तबलची सौ का नोट उठाकर नौ-दो ग्यारह हो गये।

लाला सोच रहे थे कि अब क्या करें। दिल मचल रहा था कि इस

अंगारे को दोनों बाहों में भरकर छाती से चिपकालें। किन्तु बदकिस्मत को यहां भी रम्भा का तमतमाता चेहरा नज़र आ रहा था कि कहीं इस ने भी दुत्कार दिया तो ?

किन्तु उसी क्षण राजो ने स्वयम् ही लाला की मनोकामना पूरी कर दी। लाला की ढाई मन की लोथ को अपनी बाहों में समेटने का प्रयत्न करते हुए उनके उपले-से होठों पर अपनी गुलाब जैसी पंखुडियां रखते हुए उसने पूछा—"क्या सोच रहे हैं, सेठ जी ?"

"कुछ नहीं।" लाला ने कृतार्थ होकर दांत निपोरते हुए कहा—"दरवाजा बन्द कर देती ना ?"

"ऐसी क्या जल्दी है। सारी रात पडी है, बूढ़ा बोतल लेने गया है, पहिले थोड़ी सी पी तो लो।"

"मुझे पीनी नहीं आती।" लाला ने दिल खोलकर राजो के सामने रखते हुए कहा—'मैंने तो तुम्हारी खातिर.......।"

"सरकार की चौगुनी उम्र हो, मैं पीना सिखाऊँगी। पूरी रात पड़ी है, जो चाहो सीखना।"

बात राजो ने सच्ची कही थी। रात के एक-एक क्षण में राजो ने अपने को लाला पर कुरबान कर दिया।

सुबह चार बजे, राजो और सांवलदास से विदा होकर जब लाला घर पहुंचे तो पहिली बार रम्भा के इस प्रश्न का कि, "रात भर कहाँ रहे ?" उपेक्षा से "सत्तर काम हैं, तुम्हें क्या मतलब" उत्तर देकर लाला लेट रहे।

काफी देर तक लाला बिस्तरे पर पड़े सोचते रहे—एक बाप था जिसने जीते जी दौलत में गाड़कर दुनियां की हवा भी न लगने दी। एक रम्भा है जिसने पांच मिनट दिल गरम करने की कीमत तीस हजार से ज्यादा भी वसूल की.......और राजो ?

यूं ही रातें आती और जाती रहीं।

जी० बी० रोड पर बसने वाली राजो और उसकी अन्य बहिनें लाला

इदम्मीसाल की हसरतें निरन्तर पूरी करती रही। लाला ठहरे कुशल व्यापारी, अब वह एक रात में तीन सौ खर्च नही करते थे। दो दिन के तजुर्बे के बाद इस मार्केट की,मन्दी भी उन्होंने सफल सटोरिये की तरह भांप ली।

अब लाला पचास, पिचहत्तर''''' बहुत ज्यादह जोर मारा तो सौ से अधिक एक रात के नहीं देते।

अगर बैंक में करोड़ों पड़े सड़ रहे हैं तो लुटाने के लिये थोड़े ही हैं।



३

नव्वन और मैना की जोड़ी लखनऊ से आई है इतना तो लोगों को पता था। किन्तु इससे अधिक जानकारी किसी को नहीं थी। अट्ठाइस-तीस साल का छरहरे वदन वाला नव्वन, वातचीत में असल लखनवी, तवीयत से एकदम नवाब जैसे नित नये आसामी मैना के लिये कहाँ से फांस लाता है, यह कोई नहीं जानता था। दूसरे दलाल नत्थन, मुवारक, लाहौरी-सिंह, सव चक्कर में थे। किसी के ग्राहक को उसने सड़क पर नहीं टोका, फिर भी लोग आते हैं और पूछते हैं कि भई ज़रा नव्वन का पता वताओ, आज उसकी पहाड़ी मैना भी देख ली जाय।

नव्वन को यहां आये गिनती के पन्द्रह दिन हुए हैं, और वादशाह की तरह ठाठ करने लगा। सुवह मैना को टैक्सी में वैठाकर सैर कराने ले जाता है। कई आदमी देख चुके हैं कि दोपहर का खाना दोनों नई दिल्ली

के अंग्रेजी होटल में खाते हैं—और रात का खाना जो ठीक कोठे से नीचे जुगनूलाल पंजाबी के होटल से आता है, पूरे नौ रुपये का होता है। जल-भुनकर एकदम सींकिया नवाब बनी दलालों की मंडली को जुगनूलाल पंजाबी रोज ही यह किस्सा सुना देता है कि—"भई यह तो मैं नहीं जानता कि नब्बन ने मैना का लायसेंस कैसे लिया, पर मुबारक को उस ने जरूर उल्लू बनाया। मुबारक को उसने कमरे की पगडी के हज़ार रुपये तीसरे दिन दिये और यहीं से, खास दिल्ली से, कमाकर दिये। जिस दिन दोपहर को मुबारक ने उसे कमरा दिया था, उसके कोई घण्टे भर बाद ही वह मेरे पास आकर बोला कि 'आठ रोटी और आठ आने की सब्जी दे दो।' रुपया जो उसने दिया वह खोटा था। मैंने रुपया लौटाया तो कहने लगा कि रहने दो, दूसरा रुपया मेरे पास नहीं है। वह तो मैंने उसे रोटियाँ यह समझकर दे दी कि जब बस ही गया है तो रुपया लेकर भाग थोडे ही जायगा। सच जानो, खोटे रुपये के अलावा उसके पास छदाम भी नही था।"

आज भी नित्य की भाँति जुगनूलाल पंजाबी के होटल में दलालों की मण्डली में चोंचें हो रही थीं। वही नब्बन और उसकी मैना का किस्सा। दोपहर का खाली समय आमतौर से दलालो की मण्डली धन्धे की अलोचना और समालोचना में बिताती थी, किन्तु अब""""! बात चल रही थी कि आज नब्बन और मैना घूमने क्यो नहीं गये। मुबारक कह रहा था—कोई न कोई बात जरूर है आज तो नब्बन""""दो बजने आये कोठे से नीचे भी नहीं उतरा। क्यों पजाबी तुझे पता है कुछ ?"

"सुबह जमूरा चाय तो लेकर गया था, क्यों बे जमूरे क्या देखा था ?" बैरे का काम करने वाले लड़के जमूरे से पंजाबी ने पूछा।

आदत से लाचार जमूरे ने बात का उत्तर मरियल-सी हँसी हँसकर केवल—हिं"हिं हिं हिं हिं करके दे दिया।

"चुप बे लाडो के, चोट्टी का हर वक्त हिं हिं करता रहता है, जब तू

चाय लेकर गया, क्या कर रहा था नव्बन ?" मुबारक तैश में आकर बोला ।

जमूरे को उत्तर देने की जहमत उठानी नहीं पड़ी । मुबारक अपना वाक्य समाप्त भी न कर पाया था कि बग़ल के ज़ीने से गुनगुनाने की आवाज़ आई—

"क़ैदे-हयात् औ बन्दे-ग़म
अस्ल में दोनों एक हैं.........।"

ज़ीने से उतरते समय नव्बन आम तौर से यही शेर गुनगुनाया करता था । "वह आ रहा है ।" नत्थन ने धीमे स्वर से कहा और दलाल मंडली की चखचख रुक गई ।

"बुजुर्गों के हुज़ूर में आदाब अर्ज़ पेश करता हूँ ।" बढ़िया मलमल का कुर्ता और एकदम बगुले जैसा सफेद चूड़ीदार पाजामा पहिने घुंघराले बालों वाले नव्बन ने भड़के हुए भैंसों को पहिली पुचकारी में ही मोम की तरह पिघला दिया ।

मारपीट में सबसे तेज, तवे की तरह काला और भयंकर दिखने वाला लाहौरीसिंह जो अभी कुछ देर पहिले नव्बन को गालियाँ दे रहा था पानी-पानी होकर बोला—"आइये नव्बन साहब, असीं सोचदे ये कि गल्ल की है, आज तो नव्बन साब सैर दे वास्ते भी थल्ले नहीं उतरे ।"

बैठते हुए नव्बन ने कहा—"जनाबे वाला क्या अर्ज़ करूँ, कल शाम से ही कुछ सर में दर्द था । तबीयत कुछ ऐसी अलील थी कि हुज़ूर को सलाम बजाने भी न आ सका,......मैंने कहा जनाब पंजाबी साहेब ।" आँखों में ही दलालों की गिनती करते हुए नव्बन ने कहा—"सात प्याले चाय भिजवाइये और साथ में एक-एक अण्डे का सात जगह आमलेट...।"

"छडो जी छडो, सब बन्दे हुने पी के चुक्के ने ।"

"कोई बात नहीं जनाब, एक बार मेरे ऊपर भी नवाज़िश फरमायें ।"

मुबारक समझ नहीं पा रहा था कि क्या बात करे, यूँ ही बोला—"भाई नव्बन, अगर तुम चाहो तो दो-चार और जवान लड़कियाँ तुम्हें

सौंप दें। दो आने रुपये पर सौदा रहा ?"

"मियाँ भाई जान ज़माना कुछ ऐसा नाज़ुक चल रहा है कि गाहक ही नहीं मिलते, क्या फ़ायदा बेकार सर खपाने से—मेरा तो तुजरबा ये है कि एक औरत रक्खो और सारे दिन में बजाय दस गाहक लाने के एक ऐसा गाहक लाओ जो औरत, दलाल और दूकानदार सबके हिस्से का एक ही बार में मामला चुका जाय।"

जमूरे ने आमलेट की प्लेटें लानी शुरू कर दी। सबके सब खा रहे थे, और मन ही मन नब्बन के बारे में सोच रहे थे कि एक दिन में एक औरत के लिये एक ही आदमी लाने वाला दलाल क्या नवाबी जिन्दगी जी रहा है।

चाय आदि हो जाने के बाद नब्बन ने उठकर सबका अभिवादन करते हुए पंजाबी से कहा—"सेठ साहेब, मैं आज खाना नहीं खाउँगा। उनका खाना आप भिजवा दीजिये। ये लीजिये।" दस का नोट काउन्टर पर फेंकते हुए बोला—"सुबह की चाय से लेकर अब तक का हिसाब बेबाक कर लीजिये।"

पंजाबी ने दस के नोट में से क्या लौटाकर दिया, नब्बन ने क्षण भर को भी नहीं देखा। जो कुछ दिया लापरवाही से जेब में डालकर—'कैदे-हयात और बन्दे गम' गुनगुनाता हुआ बाहर आया और एक खाली तांगे को रुकवाकर उसमें बैठते हुए बोला—"चावड़ी बाजार चलो।"

"ताड़ने वाले कयामत की नज़र रखते हैं।" ये नब्बन लखनवी ही था जो दो दिन की चलती फिरती इन्क्वारी करके लाला छदम्मी लाल की पूरी दिनचर्या का सुराग लगा चुका था। लाला की तशरीफ इस समय यहीं चावड़ी बाज़ार में अपनी लोहे की होलसेल दुकान में थी।

आधुनिक ढंग से बनी दूकान के दरवाज़े पर बैठे एक नौजवान चपरासी को नब्बन ने सम्बोधित करते हुए कहा—"भाई जान ज़रा लाला साहब को खबर करने की तकलीफ करोगे कि एक अदना खिदमतगार उनकी कदमबोसी के लिए हाज़िर हुआ है।"

"के खबर करनी सै, न्युंअई चला ना भाई, भीत्तर बैठ्ठा सै लाला।" लखनऊ की नफ़ासत से हरियाने की अकड़शाही संस्कृति ने मुलायम हो कर कहा।

"कोई है तो नहीं उनके पास ?"

"मैनिजर तो गोदाम में गया सै······वकील बैठ्ठा दिक्खै सै, तैं जाभी वकील का के सै'''उसनै तो रोज ही आकै झूठ-साँच मिलाई हुई।"

"शुक्रिया।" इतना कहकर बड़े अन्दाज़ से कदम बढ़ाता हुआ नब्बन अन्दर चला गया।

"जनाब सेठ साहब।" बड़ी अदा से झुककर नब्बन ने लखनवी ढंग से दिल्ली दरबार की कोरनिस की—"आप से तन्हाई में कुछ अर्ज करना चाहता था बन्दा परवर।"

नब्बन की नफासत से इन्कमटैक्स के माहिर वकील पण्डित कुंजीलाल कुछ ऐसे रुआब में आये कि उठते ही बने।

"अच्छा लालाजी मैं चलता हूँ, आप फिक्र न करें। पचास हज़ार से एक कौड़ी भी फालतू नहीं देनी पड़ेगी गवर्मेन्ट को, अबकी बार मेरे भी दाँव देखिये। दो कौड़ी का सरदार इन्कमटैक्स आफीसर क्या बन गया है हमारे मवक्किलों पर रौब झाड़ता है, बच्चू से इन्कमटैक्स की आफीसरी छुड़वाकर अगर अमृतसर वाले गुरुद्वारे की ग्रंथीगीरी न करवाई तो मेरा नाम भी कुंजीलाल नहीं।"

वकील साहेब चलते-चलते छदम्मीलाल पर अपना दबदबा धकेल देना चाहते थे किन्तु छदम्मीलाल ने उत्तर में धन्यवाद तक नहीं कहा। वकील कुंजीलाल जैसे ही दरवाज़े से बाहर हुए छदम्मीलाल बोले'''''' भाई जी बैठो न।"

"शुक्रिया।" बैठते हुए नब्बन ने कहा—"हुजूर सेठजी की खिदमत में एक तोहफा पेश करना चाहता हूँ।"

"हि, ही ही ही।" लखनऊ की नफासत के आगे सोनीपत, पानीपत,

करनाल, की सीमा के वंशज ने दाँत निपोरते हुए कहा—"भाई जी मैं तो सेवक हूँ।"

"अजी साहेब आप हमारे आक़ा हैं, बन्दा नव्वन तो आप का गुलाम है, पर सेठ जी वह तोहफा लाया हूँ कि जिन्दगी भर नव्वन लखनवी को याद कीजियेगा।"

एक तो पहेली, ऊपर से लखनवी अन्दाज। लाला के पल्ले खाक भी नहीं पड़ा। लाला केवल मुँह बाये नव्वन की ओर देखते रहे।

"सही है लाला जी कि मैं जी० बी० रोड की गन्दी नाली पर ही सर छुपाने की जगह ढूंढ़ पाया हूँ, पर जो बेनज़ीर तोहफा मैं आपकी खिदमत में पेश करना चाहता हूँ, जब उसे देखियेगा तो कहियेगा कि कमाल है। खुदा की कुदरत ही कुछ अजीब है हुजूर वाला कि वह कमल जैसा हसीन फूल कीचड़ में पैदा करता है।'

अब लाला की खोपड़ी वाली मशीन ने हरकत करनी शुरू की, तो ये बात। ये हजरत दलाल हैं। कुछ भी हो आदमी काबिल है, "क्या नाम है, भाई जिसकी तुम इतनी तारीफ कर रहे हो। अपने राम तो तीसरे-चौथे दिन उधर जाते ही रहते हैं। क्या नई लाये हो?"

"जी हुजूर, नाम है मैना। अभी एक-डेढ हफ्ता ही हुआ है।"

छदम्मीलाल ने मेज पर रखे हुए टीन में से सिगरेट निकालकर टीन नव्वन की ओर बढ़ा दिया। सिगरेट सुलगाकर वेहूदा ढंग से धुआँ उड़ाते हुए बोले—"क्या रेट है?"

"लाहौल विलाकुव्वत, हजूर क्या फरमा रहे हैं। कद्रदानी पैसे से बड़ी चीज है। आपकी खिदमत मे मैं इसलिये हाजिर हुआ था कि बाजार में कुछ लोगों से आपकी हुस्न की कद्रदानी का चर्चा सुना था। शाम को तशरीफ लाइये, और तोहफा कबूल फरमाइये।"

"कौन-सी बिल्डिंग में है।" नव्वन की नफासत ने लाला को रुपये-पैसे की इज्जत छोड़ने को मजबूर कर दिया।

"चाँद बिल्डिंग की तीसरी मंजिल पर कमरा नम्बर सात, जमादारों

यह वह कली है जो कि हिमालय की गोद में पैदा हुई। इस सचाई से मुल्क के किसी भी आला-दिमाग़ इन्सान को गुरेज़ नहीं होगा कि मैदानों से दूर पहाड़ों की वादियों में जो हुस्न-ओ-जलाल कुदरत पैदा करती है उससे मैदान हमेशा महरूम रहे हैं। अलबत्ता ये कुदरत की बेइन्साफी ज़रूर है कि इस वादियेजन्नत को कोई तहज़ीब का मरकज़ उसने अता नहीं फरमाया। लेकिन हज़ूरेवाला, जो तोहफा मैं आज आपको पेश करूँगा वह महज़ आप जैसे कद्रदानों के खातिर जब कली थी तब ही दूर-दराज़ पहाड़ों की चोटियों से उतार कर हिन्दुस्तान के तहज़ीबी मरकज़ लखनऊ में लाई गई, और फिर नफासत के शहर लखनऊ में वह कली परवान चढ़कर खिले हुए गुलाबी फूल में तबदील हुई।.........मैं तारीफ़ नहीं करूँगा, खुद हज़ूर जब देखेंगे वाह-वाह कर उठेंगे।"

"मैं......मैं ज़रूर आऊँगा। दिन छिपने के बाद......साढ़े आठ या नौ बजे तक। तुम तो जानते ही हो कि ज़रा लोगों का भी ध्यान रखना होता है, कुछ लोगों का काम ही यह है कि शरीफ आदमियों के बारे में झूठी-सच्ची उड़ाते रहें।"

"अच्छा तो अब इजाज़त दीजिये......"

"अरे भाई बैठो भी। सोहन, सोहन।" लालाने बेताब होकर घंटी टनटनाते हुए कहा।

हड़बड़ाया-सा पूर्व-परिचित देश हरियाने का चपरासी आ खड़ा हुआ।

"कहो भाई जी, दूध पिओगे या फल मंगाऊँ?"

"तकलीफ न कीजिये लाला साहब, आपका ही दिया खाता हूँ। दर-असल कल शाम से कुछ ज़ुकाम हो गया है, वरना आपका हुक्म टालने की ज़ुर्रत गुलाम में न थी।"

"तो फिर चाय पिओ, सोहन बढ़िया वाली चाय लाओ और उसके साथ वह मक्खन लगी जो चीज़ आती.........वो भी ला, और बढ़िया वाले बिस्कुट भी लाना।"

"सेठ साहब क्या ज़रूरत......।"

"अरे भाई किसी दिन तुम्हारी खातिर भी करेंगे। तुम भी आये तो जुकाम लेकर—यह मुअरी चाय-वाय मुझे अच्छी नहीं लगती, वरना लखनऊ वाले हो। सुना होगा कि दिल्ली वाले मेहमान को सिर पर बैठाते हैं।"

सोनीपत, पानीपत और करनाल का बरसाती नाला राह की सारी गंदी नालियों को मिलाता हुआ दिल्ली पहुचा। पाण्डवों के इन्द्रप्रस्थ, शाहजहाँ की दिल्ली, और ग़ालिब के उजड़े हुए चमन में घास फूस के झाड़ जमाकर पूरे चमन का उत्तराधिकारी बन जाने वाले ने जब यह बात कही तो नन्हन मुस्कराकर रह गया।



४

स्वर्गीय अथवा नर्कधारी जो उचित समझो कहो, लाला फकीरचन्द का ये दस्तूर था कि कोई काम ऐसा न किया जाय जिससे गाँठ का पैसा बेकार जाय। श्मशानघाट पर मन्दिर बन रहा था, तब धर्मसंघ वाले कई बार उनके पास आये थे। लाला ने यह कहकर कि मुर्दाघाट पर मन्दिर बनाकर क्या कुत्तों और गिद्धों को आरती में बुलाना है, उन्हें साफ टरका दिया था। एक बार हिन्दू-सभा वाले उनसे चन्दा माँगने आये। घण्टों वह लाला को हिन्दू-सभा के सिद्धांत समझाते रहे पर तब भी लाला टस से मस नहीं हुए तो उन्हें बताया गया कि हमारा नेता वीर सावरकर है, जो अंग्रेजों की संगीन के नीचे से निकलकर जहाज से छलांग मार गया था, और मीलों समुद्र में तैरता चला गया। तब लाला ने भी अपनी मनोवृत्ति उन्हें साफ बता दी थी कि, "अपनी जान सब को प्यारी होती

है, इसमें सावरकर ने कौन तीर मार दिया ? अगर हमारी जान पर ऐसी मुसीबत आ जाय तो हम यहीं दूकान के सामने वाले गटर का ढक्कन उतारकर कूद पड़ें और जमीन के नीचे तैरते-तैरते जमना जी में जा मिलें। क्या समझे ? श्रोखले के जाल को पार करके अगले दिन हम तुम्हें मथुराजी में भजन करते मिलेंगे।" इस दलील का बेचारे हिन्दू सभाइयों के पास कोई जवाब नहीं था।

दंगे के दिनों में जब राष्ट्रीय स्वयम् सेवक संघ चढ़ते तवे पर अपने भी दो पराँठे सेंकने की फिकर में था, तब लाला फकीरचन्द अपनी शहर वाली पुरानी हवेली में ही रहते थे। मुहल्ले के शाखा संचालक लाला गूदड़मल वैसे रिश्ते में उनके साले लगते थे। उनके लाख समझाने पर भी उन्होंने चार पैसे गुरु-दक्षिणा में चढ़ाने स्वीकार नहीं किये। उलटे उन्हें डाँटते हुए कहा—"गूदड़ तुम्हारी तो अकल मारी गई है जो उस दो कौड़ी के गुरु के कहने में आकर अपनी जात की साख डुबोने पर तुले हो। अपने सकड़ों बिरादरी भाई बनज-व्योहार करके मुसलमानों से करोड़ों रुपये साल में ब्याज के लेते होंगे, अगर सारे मुसलमान कब्रिस्तान पहुँच गये तो बिरादरी का नुकसान क्या गुरु अपनी दक्षिणा में से दे देगा ?" रही कांग्रेस वालों की बात, सो उन्हें लाला ने कभी मुँह नहीं लगाया। कांग्रेस का राज हो जाने पर लाला जरा कांग्रेसियों से दुआ सलाम तो रखने लगे थे, पर इससे अधिक उन्होंने कभी कदम नहीं बढ़ाया था। लोगों ने, खासकर मार्केट वालों ने बहुतेरा जोर लगाया कि फकीरचन्द गाँधी-फंड में कुछ दे दें। पर लाला ने किसी को कानी कौड़ी भी न दी।

लाला फकीरचन्द ने जिन्दगी में एक ही चन्दा दिया था, और वह था पच्चीस हजार का वार-फंड। वह भी इसलिये कि अगर उसे न देते तो कपड़े और लोहे की दूकान का डिब्बा ही गुल हुआ जा रहा था।

खैर छोड़िये, अब तो लाला प्रभु के प्यारे हो चुके हैं, भगवान् उनकी आत्मा को शान्ति दे।

ज्यों-ज्यों चुनाव की चर्चा जोर पकड़ती जा रही थी, लाला गूदड़मल

टमटम के कोठी से बाहर होते ही लाला पैदल ही बाहर आये। घर की मोटर में लाला जी० बी० रोड नहीं जाते थे। कुछ क्षण सड़क पर खड़े हुए टैक्सी का इन्तजार करते रहे। जैसे ही टैक्सी आई बैठते हुए लाला छदम्मीलाल बोले—"अजमेरी गेट चलो।"

जब लाला छदम्मीलाल चांद बिल्डिग के नीचे टैक्सी से उतर रहे थे तब नत्थन और मुबारक, पंजाबी के होटल के बाहर खड़े बाजार के रुख के बारे में बातचीत कर रहे थे। नव्बन अभी एक सरकारी अफ़सर को आसामी बनाकर विदा करके अन्दर चाय पी रहा था।

"अरे वह तेरा मोटा वाला लाला.......।"

"आइये लाला साहब आइये। आज आपको नया माल दिखाऊँ....।"

"भई आज तो वह कोई मैना आई है ना, लखनऊ से.......नव्बन वाली मैना।"

"हत तेरा सत्यानाश हो, नव्बन को मन ही मन कोसते हुए नत्थन ने वहीं खड़े होकर पुकारा—"भाई नव्बन, यार लालाजी तुम्हें याद कर रहे हैं।"

एक नजर उठाकर नव्बन ने छदम्मीलाल को देखा और बैठे-बैठे ही पुकारा—"आइये सेठ साहब तशरीफ लाइये।"

'कच्चे धागे से बँधे आयेंगे सरकार मेरे' करोड़पति सेठ नव्बन का हुक्म पाते ही पंजाबी के होटल में घुस गये।

"देखो मियां मुबारक।" नत्थन दबी जबान से बोला—"लखनवी क्या ठसके से दलाली करता है। लाला को तो वहां बुला लिया पर अगला खुद अपनी जगह से नहीं उठा।"

"छोड़ यार, अबे मातम मना भूतनी के तेरा एक आसामी उसने फोड़ लिया।" मुबारक ने कहा।

"अमां हटाओ।" नत्थन ने लापरवाही प्रदर्शित करते हुए कहा—"यह भी कोई गाहक में गाहक था। एक नम्बर का मक्खीचूस है ये मोटा,

गुड़-तेल की तरह भाव तय करके घुसता है और एक छदाम भी फालतू नहीं देता।"

उधर नब्बन कह रहा था—"पंजाबी लाला साहब के लिए चाय लाग्रो।"

"अरे छोड़ो भाई चाय को, तुम तो जानते ही हो मैं इस मुसरी के पीने का आदी नहीं हूँ।"

"कोई बात नहीं लाला साहब, आज नब्बन पर बतौर अहसान के एक प्याली पी लीजिये। हम भी याद करेंगे कि लाला साहेब ने हमारे साथ बैठकर चाय पी थी।"

बड़ी बेताबी से लाला ने चाय समाप्त की। जीने में चढ़ते समय लाला नब्बन की समझदारी पर गद्‌गद् हो रहे रहे थे। दूसरे दलाल फटाफट जीना चढ़ जाते थे और लाला पीछे से हाँफते हुए पहुँचते थे, किन्तु नब्बन लाला से दो पैंडी नीचे बड़ी धीमी चाल से चढ़ रहा था।

केवल जब कमरा निकट आ गया तब नब्बन ने आगे कदम बढ़ाकर दरवाज़े के किनारे खड़े होते हुए कहा—"आइये लाला साहेब, यह हैं बेगम मैना।"

आसमानी रेशम का गरारा, सफेद रेशम का काश्मीरी ढंग में सिला हुआ कुरता और सितारों से कढ़ा हुआ गहरा गुलाबी दुपट्टा''''''''गोल चाँद से चेहरे पर मानो चाँद शरमा रहा हो।

"आइये हुजूर।" जरा झुककर इकहरे सुडौल बदन की मैना ने छदम्मीलाल का स्वागत किया।

यूँ तो लाला छदम्मीलाल अब इस बाजार की हर औरत से बेतकल्लुफ से हो गये थे। किन्तु मैना के अंदाज देखकर सचमुच वह कुछ झेंप से गये।

"अंदर तशरीफ ले आइये।" मैना ने तनिक मुस्कराकर कहा, एक बारगी मोती से दाँत चमककर लाला पर एक और नया जादू चला गये।

बिना कुछ कहे-सुने सेठ साहब अंदर पलंग पर जा बैठे।

"अच्छा हुजूर इजाजत हो तो चलूं.......।"

"भई दोस्त एक-आधा पैग पीने की इच्छा थी।"

"आपकी जरूरत का तमाम सामान यहाँ पहिले से ही लाकर रख दिया हुजूरेवाला, आपको किसी किस्म की दिक्कत नहीं होगी।" आदाब बजाकर नव्वन कमरे से बाहर चला आया। दो-चार कदम चला था कि खट्ट से दरवाजा बंद होने की आहट हुई। मानो छुट्टी हुई। नव्वन तेजी से गुनगुनाता हुआ जीना उतरने लगा।

"मियाँ ताँगे वाले।" हाथ के इशारे से सड़क के दूसरे छोर पर खड़े ताँगे वाले को बुलाते हुए नव्वन बोला।

"नई दिल्ली की तरफ चलो।" इत्मीनान से पैर पसार कर पिछली सीट पर बैठते हुए नव्वन पुनः गुनगुनाने लगा—

कैदे-हयात औ बन्दे-गम अस्ल में दोनों एक हैं,
मौत से पहिले आदमी गम से निजात पाये क्यों।

पहिले सिनेमा के रास्ते में आते ही नव्वन ने ताँगा छोड़ दिया, और अंदर खिड़की से टिकिट लेकर पुनः बाहर आ गया। घड़ी देखी अभी केवल नौ बजे थे, शो शुरू होने में अभी आधा घंटा बाकी था। सामने ही पार्क था, वह वहाँ जा बैठा। सोच रहा था अपने भूत और भविष्य के बारे में, और निरर्थक ही शून्य की ओर ताक रहा था, दूर सितारों और नक्षत्रों में वह कुछ ढूंढ पाने का अभिलाषी नहीं था केवल कुछ समय के लिये दुनिया से निगाह हटाकर उसने आसमान निहारने का प्रयत्न किया, इसलिये कि दुनिया की कठोर वास्तविकता से कुछ क्षण के लिये आँखें हटाई तो जा सकती हैं, मूंदी नहीं जा सकतीं। ऐसी परिस्थिति में नक्षत्रों और ग्रहों का हमारे इर्द-गिर्द बसने वाला विशाल परिवार साधारण प्राणी के लिये वास्तविक शून्य के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

काफी देर तक यही व्यापार चलता रहा, फिर उसे ध्यान आया कि उसने सिनेमा का टिकिट खरीदा है। वैसे ही अनमना-सा वह हाल में जा बैठा। चित्र की ओर उसका ध्यान नहीं था। बस बैठा रहा।

चित्र समाप्त होने पर वह पैदल ही चल दिया। आज उसके दिल मे अजीब तरह के प्रश्न अपने जीवन के विषय में उठ रहे थे।

चाँद बिल्डिग तक पहुँचते-पहुँचते एक बज गया, बाजार को चहल-पहल समाप्त हो चुकी थी। जुगनूलाल पंजाबी अपनी होटल कही जाने वाली दूकान बंद कर रहा था।

"पंजाबी साहब, एक तकलीफ आपको देनी है। आज हम अपना बिस्तरा कमरे से बाहर निकालना भूल गये थे, और रोज तो ऊपर ही कहीं पड़ रहते थे आज ऐसा मौका नही है। अगर कोई चादर-वादर हो तो दीजिये यहाँ बाहर आपके तख्ते पर तीन-चार घण्टे बिता देंगे।"

"अजी वाह नव्बन साहेब अंदर आइये। दरी भी है और कम्बल भी, आराम से लम्बी मेज पर बिस्तरा लगाइये।"

"नहीं नहीं, इसकी जरूरत नहीं है। अंदर दूकान मे सोने की जिम्मेदारी बहुत बड़ी होती है पंजाबी साहेब।"

'छोड़ो यार, और फिर जमूरा भी तो यहीं सोता है, आ जाइये अदर। आज की बिक्री मेरी जेब मे है। दूकान में केवल बरतन हैं, आलू-टिमाटर की सब्जी बची है, कुछ आटा होगा थोडी-बहुत चीनी होगी। बस।"

लाख मना करने पर भी पजाबी नव्बन को बिस्तर लगाकर दूकान ही में लिटा गया। हर परिस्थिति मे खुश बना रहने वाला नव्बन आज उदासी का बोझ सिर मे न हटा सका। करवटें बदलता रहा, परन्तु नींद न आई।

प्रात: चार बजे नव्बन ने उठकर मैना का दरवाजा खटखटाया।

छदम्मीलाल भी जाग चुके थे। मैना ने दरवाजा खोला—"आइये नवाब साहेब।" नव्बन को सम्बोधित करके उसने कहा। स्वर में दया थी, और दया से अधिक ममत्व था।

छदम्मीलाल कोट पहिन चुके थे। जूता पहिनते हुए बोले—"हा तो नव्बन भाई क्या दूँ, यह तो कुछ लेती ही नहीं।"

"कुछ नही सेठ साहेब! आपकी कद्रदानी चाहिये, आज हम लोग लखनऊ जी रहे हैं।"

"क्यों !" आश्चर्यचकित होकर छदम्मीलाल बोले—"नव्वन जी ऐसी बात करोगे तो मेरा गुर्दा फट जायगा ।"

"मजबूरी है सेठ साहेब, दिल्ली के दलालों की तरह मुझे पैसा बटोरना नहीं आता। डेढ़ हजार रुपये की पगड़ी देना तय करके यह कमरा लिया था, आज सत्रह दिन हो गये कुल डेढ़ सौ इकट्ठा हो पाया है। कहाँ से दूँगा डेढ़ हजार.......।"

"मैं दूँगा.......इतनी सी बात के लिये घबरा रहे हो।"

"नहीं सेठ साहेब मैं आपको लूटना नहीं चाहता......।"

"अरे भाई भगवान का दिया हुआ बहुत कुछ है...... आज दोपहर को कोठी पर आ जाना, चैक बुक वहीं रह गई है। यह लो पता।" छदम्मीलाल एकदम मोम की तरह पिघले जा रहे थे जेब में हाथ डालकर बोले—"यह लो, इस कार्ड पर मेरा नाम भी है और पता भी, और हाँ यह कुछ पैसे भी हैं एक दो तीन, यह लो तीन सौ, यह तो ले नहीं रहीं। जरा मेरी ओर से मनाकर दे देना।"

तीन सौ रुपये के तीन नोट लाला ने पलंग पर फेंक दिये।

"अच्छा जी कल मिलेंगे।" मैना की ओर लाला ने दोनों हाथ जोड़कर कहा, "चलो भाई नव्वन जरा नीचे तक, कोई तांगा मोटर देख देना जरा।"

नीचे जल्दी में एक रद्दी-सा तांगा मिला, लाला उसी पर बैठ गये। किन्तु बैठते-बैठते भी उन्होंने नव्वन से कहा—"दोपहर को एक बजे तक मैं घर ही रहूँगा। आना जरूर।"

लाला विदा हो गये। एक कड़वी-सी मुस्कराहट नव्वन के चेहरे पर आई और चली गई।

'कैदे-हयात ओ बन्दे......।' गुनगुनाते हुए नव्वन जीने पर तेजी से चढ़ गया।

कमरे में मैना नहीं थी। शायद स्नानगृह में चली गई थी। पलंग के नीचे से नव्वन ने अपना लिपटा हुआ बिस्तर निकाल कर फर्श पर

बिछाया। कई मिनट तक वह उसकी सिलवटें निकालता रहा, फिर सिगरेट सुलगाकर इत्मीनान से लेट गया। रात भर जागते बीती थी, नींद आने में पांच मिनट भी न लगे।

पन्द्रह मिनट भी न सोया था कि मैना आई और उसने झंझोड़कर जगा दिया। नब्बन ने देखा कि साधारण-सी साड़ी में लिपटी हुई मैना उससे कह रही थी—"उठो नवाब साहेब, अब तुम्हें मुझे जलाने में खास मजा आने लगा है, चलो ऊपर पलंग पर लेटो जाकर।

"नहीं मैं यहीं ठीक हूँ.......।"

"क्या हो गया है तुम्हें, जब से मैं मुन्नीबाई से अलग होकर तुम्हारी सर-परस्ती में आई हूँ तुम एकदम बदल गये हो, उठो न सरकार।"

"देखो बेगम।" गम्भीर और नम्र स्वर में नब्बन ने कहा—जब तुम मुन्नीबाई के यहाँ थी तब हमारे तुम्हारे ताल्लुक वह नहीं थे जो आज हैं। अब मैं तुम्हारा अदना नौकर हूँ जब मर्जी हो तुम मुझे निकालकर दूसरा रख सकती हो। नौकर और मालिक के ताल्लुक बराबरी के नहीं हुआ करते।"

"तुम मुझे मारकर छोड़ोगे नवाब साहेब।" रुआंसी-सी होकर मैना खड़ी हो गई और मुँह ढककर पलंग पर लेट गई।

"क्यों !" आश्चर्यचकित होकर छदम्मीलाल बोले—"नव्वन जी ऐसी बात करोगे तो मेरा गुर्दा फट जायगा।"

"मजबूरी है सेठ साहेब, दिल्ली के दलालों की तरह मुझे पैसा बटोरना नहीं आता। डेढ़ हजार रुपये की पगड़ी देना तय करके यह कमरा लिया था, आज सत्रह दिन हो गये कुल डेढ़ सौ इकट्ठा हो पाया है। कहाँ से दूँगा डेढ़ हज़ार·······।"

"मैं दूँगा·······इतनी सी बात के लिये घबरा रहे हो।"

"नहीं सेठ साहेब मैं आपको लूटना नहीं चाहता······।"

"अरे भाई भगवान का दिया हुआ बहुत कुछ है······आज दोपहर को कोठी पर आ जाना, चैक बुक वहीं रह गई है। यह लो पता।" छदम्मीलाल एकदम मोम की तरह पिघले जा रहे थे जेब में हाथ डालकर बोले—"यह लो, इस कार्ड पर मेरा नाम भी है और पता भी, और हाँ यह कुछ पैसे भी हैं एक दो तीन, यह लो तीन सौ, यह तो ले नहीं रहीं। ज़रा मेरी ओर से मनाकर दे देना।"

तीन सौ रुपये के तीन नोट लाला ने पलंग पर फेंक दिये।

"अच्छा जी कल मिलेंगे।" मैना की ओर लाला ने दोनों हाथ जोड़कर कहा, "चलो भाई नव्वन ज़रा नीचे तक, कोई तांगा मोटर देख देना ज़रा।"

नीचे जल्दी में एक रद्दी-सा तांगा मिला, लाला उसी पर बैठ गये। किन्तु बैठते-बैठते भी उन्होंने नव्वन से कहा—"दोपहर को एक बजे तक मैं घर ही रहूँगा। आना जरूर।"

लाला विदा हो गये। एक कड़वी-सी मुस्कराहट नव्वन के चेहरे पर आई और चली गई।

'कैदे-हयात ओ बन्दे······।' गुनगुनाते हुए नव्वन जीने पर तेजी से चढ़ गया।

कमरे में मैना नहीं थी। शायद स्नानगृह में चली गई थी। पलंग के नीचे से नव्वन ने अपना लिपटा हुआ बिस्तर निकाल कर फर्श पर

बिछाया। कई मिनट तक वह उसकी सिलवटें निकालता रहा, फिर सिगरेट सुलगाकर इत्मीनान से लेट गया। रात भर जागते बीती थी, नींद आने में पांच मिनट भी न लगे।

पन्द्रह मिनट भी न सोया था कि मैना आई और उसने झंझोड़कर जगा दिया। नब्बन ने देखा कि साधारण-सी साड़ी में लिपटी हुई मैना उससे कह रही थी—"उठो नवाब साहेब, अब तुम्हें मुझे जलाने में खास मजा आने लगा है, चलो ऊपर पलंग पर लेटो जाकर।

"नहीं मैं यहीं ठीक हूँ""""।"

"क्या हो गया है तुम्हें, जब से मैं मुन्नीबाई से अलग होकर तुम्हारी सर-परस्ती में आई हूँ तुम एकदम बदल गये हो, उठो न सरकार।"

"देखो बेगम।" गम्भीर और नम्र स्वर में नब्बन ने कहा—जब तुम मुन्नीबाई के यहाँ थी तब हमारे तुम्हारे ताल्लुक वह नहीं थे जो आज हैं। अब मैं तुम्हारा अदना नौकर हूँ जब मर्जी हो तुम मुझे निकालकर दूसरा रख सकती हो। नौकर और मालिक के ताल्लुक बराबरी के नहीं हुआ करते।"

"तुम मुझे मारकर छोड़ोगे नवाब साहेब।" रुआंसी-सी होकर मैना खड़ी हो गई और मुँह ढककर पलंग पर लेट गई।



५

प्रेम नारायण की उम्र मुश्किल से चौबीस-पच्चीस साल की थी। प्रेम के पिता देवनारायण का किसी ज़माने में अच्छा खासा कपड़े का कारोबार था, परन्तु सन् १९३२ से ३६ तक की मंदी ने उनकी जड़ें एकदम खोखली कर दीं। देवनारायणजी जाति के खत्री थे, जब एकदम आर्थिक ढांचा लड़खड़ा रहा था तब भी उन्होंने यह पसन्द नहीं किया कि दस बीस हज़ार बचाकर दूकान का दिवाला निकाल दें। हर लेनदार का उन्होंने मय-सूद रुपया चुकाया। फलस्वरुप न घर बचा न दर,. ज़ेवर के नाम पर पत्नी के शरीर पर एक कील भी बाकी न रही। तब अव्वल दर्जे के मक्खीचूस लाला फकीरचन्द भी उनकी दशा देखकर पसीज उठे थे, एक मुहल्ले में रहने के कारण देवनारायणजी से उनका अच्छा खासा पारिवारिक सम्बन्ध था। देवनारायणजी को उन्होंने अपनी कपड़े की

दूकान में तीस रुपये मासिक पर मुनीम रख लिया था। किन्तु यह सब भी पाँच साल से अधिक नहीं चला। पाँच साल के अंदर-अंदर देवनारायण जी और उनकी पत्नी दोनों परलोक सिधार गये बचा प्रेम……जो उस समय सातवीं कक्षा में पढ़ता था—दया ही कहिये कि लाला फकीरचन्द ने दूकान में ऊपरी काम-काज के लिये उसे नौकर रख लिया। महंगी का जमाना शुरू हो चुका था फलस्वरूप प्रेम की तनख्वाह ५०) रुपये माहवार लगाई गई।

चार साल बीते तब साधारण से परिवार में उसका ब्याह हो गया था, ब्याह खर्च के लिये लाला फकीरचन्द ने चार सौ रुपये खैरात में नहीं बल्कि उधार में दिये थे। इस समय प्रेम को तनख्वाह ८० रुपये थी। ५ रुपये कर्ज की किस्त के कट जाते थे। बाकी बचते थे पचहत्तर।

आज सुबह से ही प्रेम लाला छदम्मीलाल की कोठी के बाहर बैठा था, एक बार दरबान के हाथों उसने खबर भिजवाने का प्रयत्न किया तो दरबान ने आकर बताया कि लाला सो रहे हैं।

नब्बन जिस समय लाला की कोठी पर पहुँचा तब एक बज चुका था। लाला का दिया हुआ कार्ड दरबान की ओर बढ़ाते हुए नब्बन ने कहा—"ये लीजिये जनाब, अपने लाला साहेब से, कहियेगा कि नब्बन लखनवी' आये हैं।"

"लालाजी अभी सो रहे हैं।" दरबान ने कहा।

"तो फिर हम जाते हैं, उन्होंने हम से बारह बजे आने को कहा था और हम एक बजे आये हैं। अगर वह हम से पूछेंगे तो हम उन्हें जवाब देंगे कि आपके दरबान ने एक बजे हमें आपके बिस्तर पर होने की इत्तला दी थी।"

"तो फिर ठहरिये, एक मिनट जरा मैं देख आता हूँ……।" कुछ परेशानी-सी अनुभव करते हुए चौकीदार महाशय ने कहा।

"हाँ-हाँ शौक से।"

नब्बन ने क्षणिक दृष्टि कोने में उदास से बैठे हुए प्रेमनारायण पर

डाली और सिगरेट सुलगाकर अन्दर लॉन में टहलना शुरू कर दिया। चौकीदार दुलकी चाल से कोठी की ओर चला जा रहा था।

लगभग पांच मिनट बाद वह लौटा। शायद छदम्मीलाल का आदेश था, अत्यन्त ही विनम्र स्वर में चौकीदार जी बोले—"वह जाग गये, चलिये आपको अन्दर बुलाते हैं।"

चौकादार के पीछे नव्वन ने पांच सात कदम ही बढ़ाये थे कि प्रेम बदहवास-सा दौड़ता हुआ आया। पैरों की आहट सुनकर चौकीदार ने मुड़कर देखा—"ठहरो भाई, तुम जरा अभी वहीं बैठो। लालाजी ने इन्हें ही बुलाने को कहा था। तुम्हारे लिये भी मैं अभी थोड़ी देर बाद पूंछ लूंगा।"

"भाई साहेब।" प्रेम के चेहरे पर अत्यन्त ही हीनता के भाव थे—"मेहरबानी करके लालाजी से कहियेगा कि कपड़े की दूकान वाला प्रेमनारायण दो मिनट के लिए मिलना चाहता है।"

"प्रेम·······नारायण। अच्छा बैठो, मैं अभी बुलवाता हूं।" नव्वन ने उसे धीरज देते हुये कहा।"

छदम्मीलाल अभी सोकर उठे ही थे कि चौकीदार ने नव्वन के आने की सूचना दी। चौकीदार दरवाजे से निकला ही था कि रम्भा सोलहों सिगार से लैस होकर आ धमकी और कहा कि—"मुझे रुपये चाहियें।"

अगर नव्वन के तुरन्त पहुँच जाने का खतरा न होता तो लाला उसे साफ़ टरका देते। किन्तु अब मौका दूसरा था, मनमार कर वह उठे—टेबल की दराज में से चैक बुक निकालकर सोफे पर पसर गये।

"देखिये एक हजार······।" आँखें मटकाते हुए रम्भा ने कहा।

एक शंका का समाधान आवश्यक है। जब घर और बाहर दोनों ही जगह पैसे की माया है, तब लाला छदम्मीलाल अपनी धर्मपत्नी को पैसा देते हुए क्यों झींकते हैं?

पहली बात तो यह कि लाला जानते हैं कि यह पैसा किस तरह खुले दिल से क्लब के दोस्तों को खिलाया जायगा। दूसरी बात, जब आदमी

की किसी भी कारए तोंद जरूरत से ज्यादा बढ़ जाती है तब स्त्री के प्रति अयोग्यता का बढ़ जाना भी स्वाभाविक है। रम्भा ठहरी लाला की पत्नी परवश होने पर भी वह ताने-उलाहने देने से बाज नहीं थी। स्वाभाविक था कि ऐसी हरकत से मुट्ठी में करोड़ों रखने वाले लाला छदम्मीलाल के पुरुषत्व को ठेस पहुँचती थी। बाजारू औरतों की बात दूसरी थी उन्हें केवल पैसे से गरज होती थी आज भी और आज के बाद कल भी। फलस्वरूप पुरुष की अयोग्यता एवं योग्यता से उन्हें कोई सरोकार न था। अयोग्यता भी वाह-वाह, और योग्यता भी वाह वाह। ...... और लाला छदम्मीलाल को देखने में स्थूल किन्तु पैनी दृष्टि यह भली प्रकार देखती थी कि सती सावित्री रम्भा से लेकर मैना तक कोई भी नहीं हैं।

रम्भा टले जल्दी से, यह सोचकर लाला ने एक हजार का चैक फाड़कर रम्भा की ओर फेंक दिया। रम्भा चैक उठा ही रही थी कि कि इतने में मय चौकीदार के नब्बन भी आगया।

"आइये-आइये जनाब विराजिये।" लाला ने कनखियों से देखा कि रम्भा अभी कमरे में ही मौजूद है ...... और मटर-मटर नब्बन की ओर देख रही है।

"हैं हैं ....।" खिसियानेपन से दांत निकालते हुए लाला बोले— "यह हैं मेरी धर्मपत्नी रम्भा देवी " यह हैं मेरे दोस्त मिस्टर लखनवी।"

"ओह लखनवी साहेब शायर मालूम होते हैं।" लाला नब्बन की नीची दृष्टि देखकर रम्भा की ओर, आँख निकाल रहे थे किन्तु रम्भा आँखें चुराकर निर्लज्जता पूर्ण ढंग से नब्बन के सामने खड़ी होकर बोली—"नमस्ते।"

नब्बन ने पूर्ववत् नीची दृष्टि किये लखनवी सलाम करके छुट्टी पा लेनी चाही किन्तु रम्भा ने कहा—"बैठिये, कहिये मेरा ख्याल गलत तो नहीं है। शायर ही हैं ना आप?"

"जी हाँ यूँ ही कुछ कह लेता हूँ।" बठते हुए नब्बन बोला।

"फिर तो सुनाइये कुछ?"

अब नव्वन ने दृष्टि उठाकर पहिले लाला को देखा, जो नज़रें चुरा रहे थे, फिर रम्भा को देखा जो नज़रें मिला रही थी।

"देखिये मेरी शायरी में खुदगर्जी ज्यादह होती है, मैं नहीं चाहता कि बेकार आपको नाराज करूँ।"

"ऐसे हम आपको नहीं छोड़ेंगे। हैं ना लालाजी........।"

अब लाला ने भी चुप रहना उचित न समझा—"हां-हां, क्या हर्ज है, कुछ याद हो तो सुना दीजिये।"

"सुनिये, शेर अर्ज है—

यार ने पूछा किधर जाता है तू,
अर्ज की मैंने हलाकत[1] की तरफ।
पूछा इस जानिब लिये जाता है कौन,
मैंने देखा उसकी सूरत की तरफ॥

"खूब क्या कहने हैं, बहुत खूब।" रम्भा बोली।

"हैं हैं हैं।" लाला ने भी दांत निकाल दिये, उन्हें खुशी हुई कि नव्वन ने मामले को सम्भाल लिया।

"एक और होगा, वाकई बहुत खूब रहा........।"

"और सुनिये।" मन ही मन नव्वन ने सोचा देखें क्या होता है—

"शेर अर्ज है :—

बोसा कैसा कि गिलौरी भी नहीं पाता हूँ,
बस कलाम अपना यहाँ आके सुना जाता हूँ।
वह यह फरमाते हैं क्या खूब कहा है वल्लाह,
मैं यह कहता हूँ कि आदाब बजा लाता हूँ।*

"वाह, वाह क्या कही है।" अबकी बार छदम्मीलाल ने दाद दी। राम जाने वह 'बोसा' किसे कहते हैं। जानते भी थे या नहीं अलबत्ता

[1]बरबादी।
*ये दोनों शेर स्वर्गीय अकबर 'इलाहाबादी' के हैं।

शेर का मतलब वह समझ गये थे। बड़े ही रोमांटिक मूड में उन्होंने रम्भा से कहा—"समझी कि नहीं, अब शायर साहब की खातिर करो।"

शेर सुनकर रम्भा के गालों पर लाली आगई। मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए वह उठी और झपट कर बाहर चली गई।

फौरन चैक भर कर फाड़ते हुए वह बोले—"ये लो बियरर चैक है दो हजार रुपये का, आज ही भुना कर जिसका लेना-देना हो निपटा देना।" चैक नब्बन की ओर बढ़ाते हुए लाला गौरवपूर्ण हँसी हँसे।

तभी चौकीदार प्रेम सहित उपस्थित हुआ। हाथ जोड़कर तने हुए स्वर में द्वार पर खड़े होकर प्रेम बोला—"जैराम जी की भाई साहेब।"

नजर उठाकर छदम्मीलाल ने प्रेम की ओर देखा और देखते ही त्योरियां चढ़ गईं—"क्या है ?"

"भाई साहेब''''''वह''''''''बच्चा''''''''कल मैंने आप से'''''''' कहा था ना''''''मुनीमजी ने साफ इन्कार''''''''।"

"कैसे आदमी हैं।" छदम्मीलाल ने आपे से बाहर होते हुए कहा—"घर में भी पीछा नहीं छोड़ते, जब देखो छाती पर चढ़े रहते हैं। जाओ यहाँ से। घण्टे भर बाद मैं दूकान पर आ रहा हूं।"

"भाई साहेब''''''।"

"कह दिया कि नहीं''''''''।" चिंघाड़ते हुए छदम्मीलाल बोले।

प्रेम उलटे पाँव लौट गया। इस दृश्य से नब्बन को हार्दिक क्षोम हुआ, यहाँ आकर वह उसकी अत्यन्त ही विनयपूर्वक कही हुई बात को बिल्कुल भूल गया था।

"मुल्लन।" छदम्मी ने कहा।

लौटता हुआ चौकीदार पलटकर बोला—"जी लालाजी।"

"किसने कहा था तुमसे इस आदमी को यहाँ लाने के लिये ?"

"सेठजी सुबह से जान खा रहा था''''''''।"

"खबरदार जो फिर कभी इस तरह किसी को लाया तो, जा भाग जा।"

अब नव्वन ने दृष्टि उठाकर पहिले लाला को देखा, जो नजरें चुरा रहे थे, फिर रम्भा को देखा जो नजरें मिला रही थी।

"देखिये मेरी शायरी में खुदगर्जी ज्यादह होती है, मैं नहीं चाहता कि बेकार आपको नाराज करूँ।"

"ऐसे हम आपको नहीं छोड़ेंगे। है ना लालाजी·······।"

अब लाला ने भी चुप रहना उचित न समझा—"हाँ-हाँ, क्या हर्ज है, कुछ याद हो तो सुना दीजिये।"

"सुनिये, शेर अर्ज है—

यार ने पूछा किधर जाता है तू,
अर्ज की मैंने हलाकत[1] की तरफ।

पूछा इस जानिब लिये जाता है कौन,
मैंने देखा उसकी सूरत की तरफ॥

"खूब क्या कहने हैं, बहुत खूब।' रम्भा बोली।

"हैं हैं हैं।" लाला ने भी दाँत निकाल दिये, उन्हें खुशी हुई कि नव्वन ने मामले को सम्भाल लिया।

"एक और होगा, वाकई बहुत खूब रहा·······।"

"और सुनिये।" मन ही मन नव्वन ने सोचा देखें क्या होता है—"शेर अर्ज है :—

बोसा कैसा कि गिलौरी भी नहीं पाता हूँ,
बस कलाम अपना यहाँ आके सुना जाता हूँ।
वह यह फरमाते हैं क्या खूब कहा है वल्लाह,
मैं यह कहता हूँ कि आदाब बजा लाता हूँ।*

"वाह, वाह क्या कही है।" अबकी बार छदम्मीलाल ने दाद दी। राम जाने वह 'बोसा' किसे कहते हैं। जानते भी थे या नहीं अलबत्ता

---

[1] बरबादी।

*ये दोनों शेर स्वर्गीय अकबर 'इलाहाबादी' के हैं।

शेर का मतलब वह समझ गये थे। बड़े ही रोमांटिक मूड में उन्होंने रम्भा से कहा—"समझी कि नहीं, अब शायर साहब की खातिर करो।"

शेर सुनकर रम्भा के गालों पर लाली आ गई। मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए वह उठी और झपट कर बाहर चली गई।

फौरन चैक भर कर फाड़ते हुए वह बोले—"ये लो बियरर चैक है दो हजार रुपये का, आज ही भुना कर जिसका लेना-देना हो निपटा देना।" चैक नब्बन की ओर बढ़ाते हुए लाला गौरवपूर्ण हँसी हँसे।

तभी चौकीदार प्रेम सहित उपस्थित हुआ। हाथ जोड़कर तने हुए स्वर में द्वार पर खड़े होकर प्रेम बोला—"जैराम जी की भाई साहेब।"

नजर उठाकर छदम्मीलाल ने प्रेम की ओर देखा और देखते ही त्यौरियाँ चढ़ गईं—"क्या है ?"

"भाई साहेब·········वह·········बच्चा·········कल मैंने आप से·········कहा था ना·········मुनीमजी ने साफ इन्कार·········।"

"कैसे आदमी हैं।" छदम्मीलाल ने आपे से बाहर होते हुए कहा—"घर में भी पीछा नहीं छोड़ते, जब देखो छाती पर चढ़े रहते हैं। जाओ यहाँ से। घण्टे भर बाद मैं दूकान पर आ रहा हूँ।"

"भाई साहेब·········।"

"कह दिया कि नहीं·········।" चिंघाड़ते हुए छदम्मीलाल बोले।

प्रेम उलटे पाँव लौट गया। इस दृश्य से नब्बन को हार्दिक क्षोभ हुआ, यहाँ आकर वह उसकी अत्यन्त ही विनयपूर्वक कही हुई बात को बिल्कुल भूल गया था।

"भुल्लन।" छदम्मी ने कहा।

लौटता हुआ चौकीदार पलटकर बोला—"जी लालाजी।"

"किसने कहा था तुमसे इस आदमी को यहाँ लाने के लिये ?"

"सेठजी सुबह से जान खा रहा था·········।"

"खबरदार जो फिर कभी इस तरह किसी को लाया तो, जा भाग जा।"

नव्बन ने उठते हुए कहा—"अच्छा लाला साहेब मैं चलूं ?"

"क्यों......क्यों बैठो ना, चाय मंगवाता हूं तुम्हारे लिये।"

"जी आपकी ही चाय पीता हूं, देर करने से फिर चैक आज न भुन पायेगा।"

"ओह हां तो ठीक है।" पैर फैलाकर जमुहाई लेते हुऐ छदम्मीलाल बोले—"रात को मिलेंगे।"

"ज़रूर, अच्छा आदाब अर्ज़।'

उत्तर में लाला ने कुछ कहना चाहा किन्तु फिर जमुहाई आ गई, जब तक फटा हुआ मुंह अपनी पूर्ववत् अवस्था में आया नव्बन दरवाज़े से बाहर हो चुका था।

अभी नव्बन सीढ़ियां ही उतर रहा था कि सामने से रम्भा आती दिखाई दी।

"अरे शायर साहेब कहां चले नाश्ता आ रहा है, बैठिये ना।"

नव्बन ने देखा कि सामने से दो नौकर स्वच्छ कपड़े से ढकी हुई ट्रे लिये आ रहे हैं।

"देखिये मैं इतना सस्ता शायर नहीं हूं कि नौकरों के ज़रिये लाई हुई चाय पिऊं।" मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए नव्बन ने कहा—"शुक्रिया, एक जरूरी काम से जाना है। फिर किसी वक्त आपको तकलीफ दूंगा।"

"यह तो हुई नहीं शायर साहेब......।" रम्भा ने आग्रह किया।

"यकीन मानिये, मैं बिल्कुल सच अर्ज़ कर रहा हूं।"

"अच्छा तो फिर ऐसा कीजिये कि आज शाम को न्यू इंडिया क्लब में तशरीफ लाइये, इसी रोड के आखिर में है।"

"जी बहुत अच्छा मैं ज़रूर हाज़िर हूंगा।" चलते हुए नव्बन ने कहा। [व]ह बाहर पहुंचने के लिये उतावला था। प्रेमनारायण कौन है, छदम्मी-[ला]ल से क्या चाहता था ? ये जानने की उसे बेहद उत्सुकता थी।

दरवाज़े पहुंचकर उसने चौकीदार से पूछा—"यह नौजवान जो लाला [सा]हेव से मिलने आया था किधर गया ?"



६

चौकीदार का अनुमान ठीक निकला। तांगा अभी मुश्किल से एक फर्लांग ही चला होगा कि फुटपाथ पर प्रेम सिर झुकाये तथा उदास-सी मुखमुद्रा बनावे चलता दिखाई दे गया।

"भाई साहेब······प्रेम साहेब······।" नब्बन ने तांगे में से ही पुकारा—"प्रेम नारायण साहेब।"

"जी।" प्रेम तेज कदमों से चलकर तांगे के निकट पहुँचा।

"आइये बैठिये···कहाँ जाइयेगा ?" प्रेम को कुछ कहने का अवसर दिये बिना ही नब्बन ने तांगे वाले कहा—"जनाब। हाँ भाई साहेब कहाँ जाइयेगा ?"

"बाजार सीताराम, वहीं रहता हूँ मैं।"

"अजमेरी दरवाजे से कितनी दूर है ?"

नव्वन ने उठते हुए कहा—"अच्छा लाला साहेब मैं चलूं ?"

"क्यों.....क्यों बैठो ना, चाय मंगवाता हूं तुम्हारे लिये ।"

"जी आपकी ही चाय पीता हूँ, देर करने से फिर चैक आज नह
भुन पायेगा ।"

"ओह हाँ तो ठीक है ।" पैर फैलाकर जमुहाई लेते हुऐ छदम्मीलाल
बोले—"रात को मिलेंगे ।"

"जरूर, अच्छा आदाब अर्ज ।'

उत्तर में लाला ने कुछ कहना चाहा किन्तु फिर जमुहाई आ गई, जब तक फटा हुआ मुँह अपनी पूर्ववत् अवस्था में आया नव्वन दरवाज़े से बाहर हो चुका था ।

अभी नव्वन सीढ़ियाँ ही उतर रहा था कि सामने से रम्भा आती देखाई दी ।

"अरे शायर साहेब कहाँ चले नाश्ता आ रहा है, बैठिये ना ।"

नव्वन ने देखा कि सामने से दो नौकर स्वच्छ कपड़े से ढकी हुई ट्रे लिये आ रहे हैं ।

"देखिये मैं इतना सस्ता शायर नहीं हूँ कि नौकरों के जरिये लाई हुई चाय पिऊँ ।" मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए नव्वन ने कहा—"शुक्रिया, एक जरूरी काम से जाना है । फिर किसी वक्त आपको तकलीफ दूंगा ।"

"यह तो हुई नहीं शायर साहेब.......।" रम्भा ने आग्रह किया ।

"यकीन मानिये, मैं बिल्कुल सच अर्ज कर रहा हूँ ।"

"अच्छा तो फिर ऐसा कीजिये कि आज शाम को न्यू इंडिया क्लब
ं तशरीफ लाइये, इसी रोड के आखिर में है ।"

"जी बहुत अच्छा मैं जरूर हाजिर हूँगा ।" चलते हुए नव्वन ने कहा ।
ह बाहर पहुंचने के लिये उतावला था । प्रेमनारायण कौन है, छदम्मी-
ल से क्या चाहता था ? ये जानने की उसे बेहद उत्सुकता थी ।
दरवाज़े पहुँचकर उसने चौकीदार से पूछा—"यह नौजवान जो लाला
व से मिलने आया था किधर गया ?"



६

चौकीदार का अनुमान ठीक निकला। तांगा अभी मुश्किल से एक फर्लांग ही चला होगा कि फुटपाथ पर प्रेम सिर झुकाये तथा उदास-सी मुखमुद्रा बनाये चलता दिखाई दे गया।

"भाई साहेब""""प्रेम साहेब""""।" नब्बन ने तांगे में से ही पुकारा—"प्रेम नारायण साहेब।"

"जी।" प्रेम तेज कदमों से चलकर तांगे के निकट पहुँचा।

"आइये बैठिये"'कहाँ जाइयेगा ?" प्रेम को कुछ कहने का अवसर दिये बिना ही नब्बन ने तांगे वाले कहा—"जनाब। हाँ भाई साहेब कहाँ जाइयेगा ?"

"बाजार सीताराम, वहीं रहता हूँ मैं।"

"अजमेरी दरवाजे से कितनी दूर है ?"

"पास ही है। तकरीबन आधा-एक फर्लांग होगा, आप अजमेरी गेट जा रहे हैं?"

"जी हाँ।"

पाँच मिनट मौन रहा, तांगा कनाट प्लेस की गोल सड़क पर दौड़ रहा था।

"अगर एतराज न हो तो एक बात पूछूं?" नत्थन ने कहा।

"कहिये।"

"लाला साहब के पास आप किसलिये आये थे?"

"जी मैं उनकी कपड़े की दुकान पर काम करता हूँ। बच्चा बीमार था, बीस रुपये तनखाह में से पेशगी चाहता था। कल इनसे कहा तो इन्होंने कहा मुनीम से कहो. मुनीम से कहा तो उसने साफ जवाब दे दिया कि जब तक पिछला कर्जा नहीं चुक जाता पेशगी नहीं मिलेगी। आप ही कहिये जब मैं बराबर कभी दस कभी पांच कर्जे की किस्त कटवाता रहा हूं तो वह ऐसा क्यों सोचते हैं कि मैं उनका रुपया लेकर भाग जाऊंगा?"

"जो आप दुरुस्त फरमाते हैं—कितना बड़ा बच्चा है?"

"मुश्किल से दो साल का होगा। चार दिन से तेज बुखार में तड़प रहा है, डाक्टर का कहना है कि बिना इन्जेक्शन लगाये बच्चा ठीक न होगा। इन्जेक्शन के दो रुपये देने होते हैं। सोचता था बीस रुपये मिल जाते तो शायद बच्चा बच जाता।"

"खुदा उसे लम्बी उम्र दे। किसी मुहल्ले के डाक्टर का इलाज चल रहा है क्या?"

"नहीं जी, जामा मसजिद के पास एक सरकारी हस्पताल है।"

"खुदा की मार पड़े इन पर, क्या सरकारी अस्पताल वाले भी इन्जेक्शन लगाने के रुपये लेते हैं।"

नत्थन ने प्रेम से मुस्कराने का प्रयत्न किया, किन्तु मुस्करा न सका।

अजमेरी गेट पर तांगा छोड़ नत्थन और प्रेम नोट बाजार के चौराहे पर खड़े हो गये।

"कितनी दूर है आप का घर ?" नब्बन ने कहा।

"जी पास ही है, शुक्रिया।" प्रेम ने विदा लेनी चाही।

"शुक्रिया अभी रहने दीजिये, आप यहाँ किसी अच्छे से डाक्टर का दूकान पर लाकर बच्चे को दिखा दीजिये। रुपये मेरे पास हैं।"

प्रेम कोई उत्तर न दे सका। कृतज्ञतावश उसकी आँखें भर आईं।

"देखिये तकल्लुफ से काम नहीं चलेगा और देर करने से काम बिगड सकता है। कहाँ हैं डाक्टर की दूकान ? कोई अच्छा डाक्टर होना चाहिये।"

लगभग पन्द्रह मिनट तक नब्बन और प्रेम चावडी बाजार और बाजार सीताराम में डाक्टर को खोजते रहे, किन्तु सभी दूकानें बन्द थी।

"शायद चार बजे शाम को खुलेंगी……।"

"चार बजने मे तो अभी डेढ घण्टा है, आप तो इसी मुहल्ले के रहने वाले हैं, जानते होंगे किसी अच्छे से डाक्टर को घर से ही ले चलिये।"

"रहने दीजिये, दूकान खुलने पर……।"

"साहब कहना मानिये, चलिये कहाँ है डाक्टर का घर ?"

डाक्टर को लेकर दोनो चले। एक छोटी-सी गली के आखिर मे प्रेम का मकान था। नब्बन चाहता था कि उसके घर न जाकर बाहर गली में ही खड़ा रहे। किन्तु खडे होने के उपयुक्त जगह भी न थी; मकान के बाहर ही छोटी-सी चारपाई पड़ी थी जिस पर तीन औरतें बैठी सीना-पिरोना कर रही थी।

दूसरी मंजिल की एक छोटी-सी कोठरी मे प्रेम की गृहस्थी थी। छोटे से खटोले पर बच्चा लिटाया हुआ था, पास ही प्रेम की पत्नी बैठी सिसक रही थी, बच्चा बेहोश था।

डाक्टर ने देखा—बच्चे को डबल निमोनिया बताया। एक इन्जेक्शन लगाकर डाक्टर ने कहा—"थोड़ी देर बाद आकर दूकान से दवा ले आना, एक इन्जेक्शन भी और लगेगा शाम को।"

नब्बन और प्रेम डाक्टर को छोड़ने बाहर सड़क पर आये, शाम

के इन्जेक्शन समेत डाक्टर साहब का चौदह रुपये का बिल नव्बन दे चुका था।

लौटकर फिर दोनों घर आये। प्रेम की पत्नी अब कुछ प्रसन्न-सी दिखती थीं। बच्चे के ठण्डे हाथ-पैरों में पुनः गरमी आ गई थी।

लाख मना करने पर भी प्रेम ने चाय आदि बनवा कर नव्बन का आतिथ्य किया। जब नव्बन चलने को हुआ तो प्रेम ने कहा—"भाई साहब, ये आप रख लीजिये।"

"क्या है ?"

प्रेम ने छोटी-सी जंजीर लगा एक लाकेट नव्बन की हथेली पर रख दिया—"तनख्वाह मिलते ही मैं आप के पैसे पहुँचा दूंगा।"

"लेकिन ये किस लिए ?"

"ये आप रख लीजिये।"

"तुम क्या समझते हो ?" नव्बन ने तनिक तीखे स्वर में कहा—"चन्द रुपये मैंने तुम्हें इस लिए दिये हैं कि बदले में बहिन का जेवर गिरवी रखूं ! चाहे मैं कितना ही नीच और कमीना क्यों न हूं, सूदखोर बनिया नहीं हूँ। लो बहिन रक्खो इसे।" मुंह फेरे बैठी हुई प्रेम की पत्नी की ओर नव्बन ने लाकेट फेंक दिया। कहा—"मैं चलता हूं प्रेम साहब।"

प्रेम उसे छोड़ने हौजकाजी के चौराहे तक आया। विदा होते समय नव्बन ने दस रुपये का नोट निकाल कर प्रेम की जेब में डालते हुए कहा—"ये आप रखिये, बीमार बच्चा है जरूरत पड़ सकती है।" और प्रेम को कुछ कहने का अवसर दिये बिना ही वह चल दिया।"

कुछ कदम चलने के बाद नव्बन ने अपनी चाल धीमी कर दी। परिचित लोग एक-एक करके दृष्टि के सामने चल-चित्र की भाँति आने लगे। एक बड़ा सरकारी अफसर जो उसका पहिला आसामी था, उसके बाद कोई एकदम बढ़ा सेठ फिर छदम्मीलाल और फिर···! मैना और प्रेम की पत्नी दोनों स्त्री हैं। एक औलाद के प्यार में किस तरह सिसक

रही थी, दूसरी किसे प्यार करती है···पैसे को ? कहने की बात है आज तक उसने अपनी कमाई पर कभी अपना दावा नहीं किया। फिर ? क्या वह उससे प्यार करती है ? यह विचार मन में आते ही नब्बन मुस्करा दिया। अगर वह उससे प्यार करती तो आज इस तरह कोठे पर न बैठती। तो फिर ? शायद वह किसी को भी प्यार नहीं करती। एक रेंगने वाले कीड़े की भाँति जीवन का बोझ अपने ऊपर लादे जी रही है। बस जी रही है।

विचार के ताने-बाने का तार इस समय टूटा जब कि जीने में चढ़ते समय पंजाबी ने टोका—"मैंने कहा साहब खाना नहीं खायोगे।"

"जी हाँ।" फिर कुछ सोचकर नब्बन ने कहा—'यार रहने दो घंटे भर बाद अब शाम का ही खाना होगा। हाँ, जरा जमूरे मियाँ को ऊपर भेज देना।"

ऊपर मैना दो और हमजोली औरतों के साथ धूप में बैठी थी। इन दोनों औरतों से नब्बन की अभी तक कोई बोलचाल नहीं थी। किन्तु आज शायद दोनों को मैना ने उसके बारे में बताया होगा। एक बोली—"नवाब साहेब नमस्ते।" दूसरी ने कहा—"नवाब साहेब सलाम।"

और मैना ने कहा—'भूख लग रही है नवाब साहेब खाना नहीं खिलाइयेगा ?"

"क्या मतलब, क्या अभी तक आप बिना खाये ही····?"

'जी मैं आपका इन्तजार कर रही थी, उम्मीद थी कि शायद आप जल्दी ही लौट आयेंगे।"

"ये तो बड़ी ज्यादती है आपकी, आपको खाना खा लेना चाहिये था। जिस वक्त मैं उठा था आप सो रही थी, मैंने आपके आराम में खलल डालना मुनासिब नहीं समझा। इसकी इतनी बड़ी सजा तो मुझे नहीं मिलनी चाहिये थी।"

"सजा कैसी नवाब साहेब, कम से कम खाना तो दोनों का साथ ही

होना चाहिये। मैं शर्त लगाकर कह सकती हूं कि आपने भी अभी तक कुछ नहीं खाया है।"

"........लेकिन।"

तभी जमूरा आ गया, बात बदलकर नब्बन ने कहा—"मियां जमूरे खाना लाओ, जल्दी से, और हां दोनो बेगमों के लिये चाय और कुछ नाश्ता......।"

"ना ना, नवाब साहेब आप खाना खाइये, हमारी चाय उधार रही फिर पियेंगे, मैना आपका इन्तजार बड़ी बेसबरी से कर रहीं थीं। जरा इनकी तसल्ली कीजिये।" एक ने कहा और दोनों मुस्कराती हुई वहां से भाग गई।

"सुनिये तो.......।" नब्बन पुकारता ही रह गया।

"जाने भी दो।" नब्बन का हाथ पकड़कर खींचते हुए मैना ने कहा।

"एकदम बेगाने से हुए जा रहे हैं आप तो नवाब साहेब बैठिये ना।"

बैठते हुए नब्बन ने कहा—"यह आप क्या फरमा रही हैं बेगम साहिबा, आपका नौकर हूं! नमक हलाल रहूंगा ये वायदा करता हूं। यह लीजिये दो हजार आज लाला छदम्मीलाल से ले आया हूं, कल बैंक में जमा करा दूंगा। अब आपके नाम में चार हजार के करीब रुपये हो जायेंगे।"

"यह मेरी बात का जवाब नहीं है, मैं पूछती हूं कि तुम्हें हो क्या गया है?"

"क्यों कोई गलती हुई मुझ से?"

"उफ, आप मुझे मार क्यों नहीं देते.... " मैं तो तंग आ गई हूं इस जिन्दगी से।" कहते-कहते मैना की आंखें छलछला उठी।

"आखिर बात क्या है?"

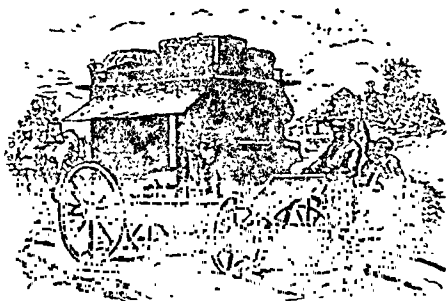
"बात पूछत हो।" मैना ने नब्बन की बांह से मुख छिपाने का प्रयत्न करते हुए कहा—"बात करते हैं जैसे नौकर किया करते है, नवाब साहेब आप मेरी जिन्दगी हैं। एक रोज आपने कसम खाई थी कि जिन्दगी-भर

मेरे बनकर रहेंगे। क्या इसी तरह किसी का बनकर रहा जाता है ?"

"मुझे अपनी कसम याद है बेगम, और जिन्दगी-भर याद रहेगी। जब भी जैसे आपने रखना चाहा वैसे ही मैं रहा हूँ। लखनऊ में आपने चाहा कि दिल्ली चलकर रहें, मैं आपके लिये अच्छे पैसे वाले ग्राहक लाया करूँ। खूब पैसा आये, आराम से जिन्दगी बसर हो। हर वक्त इसी काम में लगा रहता हूँ फिर भी आप खुश नहीं हैं। आखिर क्यों ?"

"इसलिये कि मेरी सबसे बड़ी तमन्ना आप हैं, आपकी मुहब्बत है।"

"शुक्रिया।" नब्बन ने मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए कहा—"आपकी इस मेहरबानी का मुझे अहसास है, और इसीलिए आपका दिया हुआ काम मेहनत और दिल से करना अपना फर्ज समझता हूँ। लो जमूरे साहेब खाना ले आये। चलो अंदर चलें। खाना अंदर रखो मियां जमूरे।"



७

लाला गूदड़मल हाथ में आई आसामी को पर कैंच करके रखने वाले संघियों में से थे। शाम के चार बजे से उन्होंने टमटम जुतवाकर लाला छदम्मीलाल की टोह लेनी शुरू की, कोठी देखी, उसके बाद कपड़े की दूकान, फिर चावड़ी वाली लोहे की दूकान, और आखिर में घी वाली फैक्टरी में उन्होंने छदम्मीलाल को ढूंढ़ ही लिया।

कैसा जनसंघ और कैसी सभा। सुबह ही नव्वन को दो हजार दिये थे। लाला आज रात को आने वाले खास लुत्फ के बारे में सोच रहे थे कि लाला गूदड़मल के पधारने की सूचना पाकर जल-भुनकर खाक हो गये। मजबूरी थी, गूदड़मल कोई मांगते-खाते आदमी नहीं थे कि उन्हें बाहर से ही टरका दिया जाता। अलबत्ता बड़े ही गोल और मीठे शब्दों में एक बार छदम्मी ने प्रयत्न अवश्य किया कि किसी तरह ये बला बैरंग ही वापिस चली जाय।

फलस्वरूप गूदड़मल का अच्छा-खासा बीस मिनट का उबा देने वाला लेक्चर सुनना पड़ा। बड़े विस्तार और धैर्य के साथ गूदड़ ने बताया कि हम हिन्दू हैं। आज हमारा धर्म-संकट में है, सैंकड़ों जरूरी काम छोड़कर हमें अपने धर्म को बचाना होगा।..........और फिर गूदड़मल अपनी ही टमटम में बैठाकर लाला को अपने घर ले गये।

घर पहुँचकर गूदड़मल ने अपनी मनोवृत्ति बिल्कुल साफ कर दी—"देखो बेटा छदम्मी, हो सकता है कि ज्यादह काम के कारण तुम असेम्बली का मैम्बर बनना पसन्द न करो, परन्तु तुम्हें जनसंघ को सफल बनाने में हर प्रकार की सहायता करनी पड़ेगी।"

लाला, गूदड़मलद के पहिले ही लेक्चर से बहुत ऊब चुके थे, कहीं फिर लेक्चर न शुरू हो जाय इस से उन्होंने तुरन्त कहा— "तो मामा मैं कब बाहर हूँ। जैसा तुम चाहोगे वैसा ही होगा।

किन्तु गूदड़मल ऐसी भांईदार बातों से बहलने वाले पंछी नहीं थे, बोले—"यह तो मैं जानता हूँ। खैर पैसे-धेले की बात फिर कर लेंगे, पर एक बात अभी से कहे देता हूं। भगवान की दया से तुम नई-दिल्ली की कोठी में रहते हो, चुनाव तक के लिये अपनी मुहल्ले वाली हवेली जनसंघ को देनी होगी। तुम जानो भैया, यह तो ब्याह से भी अधिक काम फैलेगा।"

"मामा हवेली तुम्हारी है, जब जी चाहे खुलवा लो। तुम तो मुझसे इस तरह बातें कर रहे हो मानो मैं कोई गैर हूँ?"

"ना भैया गैर भला कैसे समझूंगा। मेरे लिये घर के लौंडे पीछे हैं, पहिले तुम हो।" मन ही मन अपनी सफलता पर मुग्ध होते हुए गूदड़मल ने कहा।

"लाला हैं क्या?" बाहर से आवाज आई।

"आओ लाला आओ।" वहीं बैठे-बैठे ही गूदड़मल ने पुकारा।

"कौन है?" छदम्मीलाल ने पूछा।

"अपने ही आदमी हैं लाला भानामल, मार्केट में मिट्टी के तेल की एजेंसी है इनकी, वैसे बाहर भी काफी व्यापार फैला हुआ है।"

लाला भानामल आये, पतले एकदम सींक से आदमी। सोने में सुहागा यह कि सिर पर केसरिया मारवाड़ी पगड़ी, घुटनों से नीची अचकन और बेकाबू किन्तु चुस्त जैपुरिया ढंग से बंधी हुई धोती। यह भी नये रंगरूट थे जिन्हे लाला गूदड़मल ने पिछले महीने ही गुरुदक्षिणा के पुण्य अवसर पर पांच हज़ार से चित्त करके हिन्दू शूरवीरों की गिनती में एक इकाई और जोड़ दी थी।

"ये अपने लाला छदम्मीलाल हैं दिल्ली में कई काम हैं इनके, वैसे तो रिश्ते में मेरे भानजे हैं पर मेरा इन पर पूत से भी ज्यादह प्यार है।"

भानामल ने केवल सिर हिलाकर—"जै गोपाल जी की" की।

उत्तर में छदम्मीलाल ने भी "जै राम जी की" कहा।

"हिन्दू जाति में जब तक संगठन नहीं होगा तब तक देश का कल्याण नहीं होगा।" लाला गूदड़मल ने फिर प्रवचन शुरू कर दिया। जानता था कि इस मौके से फायदा उठाना चाहिये। दो नये शिकार सामने मौजूद थे—या यूं कहो कि एक तीर से दो शिकार हलाल करने का समय था।

लाला गूदढ़मल के वाक्य का भानामल ने सिर हेलाकर मौन समर्थन किया, गूदडमल को मानो 'लाइन किलियर मिल गया, अच्छी तरह फैल कर बैठते हुए बोले—"आज हमारे सिर पर पाकिस्तान बैठा हुआ है, इतना ही नहीं कांग्रेस ने हमारी बगल में भी पाकिस्तान बैठा रक्खा है.... कोई मुसलमान भारतीय नहीं हो सकता। कहते हैं हम आजाद है, परंतु आज भी हमारे देश में गऊ माता का वध होता है। क्यों.......!"

"पर गूदड़ भाई संगठन कैसे बने, अपने हिन्दू व्यापारी भाइयों तक में एका नहीं है ?"

"एका करना पड़ेगा भानामल जी, यह घाटे या नफे की बात नहीं है पूरी हिन्दू जाति बनने या बिगड़ने बात है। यहाँ हम तीन हैं, क्या हम तीनों में एका नहीं है ? है। छदम्मीलाल का बनास्पति घी बनाने का कारखाना है, मेरा असली घी का व्योपार है। मेरी दुकान के नौकर व्योपारिओं और गाहकों के सामने रेली घी और घी बनाने वालों की

बुराई करते हैं। छदम्मी के कारखाने का मैनेजर असली घी के तमाम व्योपारियों को चोर और उठाईगीर कहता है—पर जब धर्म का सवाल है तो मैं और छदम्मी एक हैं क्यों बेटा ?"

"ठीक है मामा।"

"·······और तुम अपनी ही बात लो। कई रियासतों में तुम्हारा हड्डी का व्योपार है, बैल और गाय की भी हड्डी खरदी वेची जाती है। तो क्या हम तुम्हें हिन्दू भाई नही समझें ? या कह सुनकर तुमसे ये काम बन्द करवा दें ? क्यों करवा दें क्या इसलिये कि कल को तुम्हारा फर्म को सारी सप्लाई कोई मुसलमान अपने हाथ में ले ले। सेठ जी व्योपारियों में एका तभी होगा जब बाजार की बात बाजार ही में खतम करके घर आकर हम अपने धर्म को याद करें। क्यों बेटा ?"

"ठीक है मामा। धर्म का काम चलाने के लिये भी तो पैसे की जरूरत है। व्योपार तो जैसे होता है वैसे करा ही जायगा·········."

"और क्या, जनसंघ किसी को व्योपार करने से थोड़े ही मना करता है, व्योपारी होने के नाते हम लड़ सकते हैं—पर हिन्दू होने के नाते हम एक भी तो हो सकते हैं। भो रे कहार के·········।" लैक्चर को तनिक विश्राम देने के विचार से लाला ने कहार को तलब करलेना उचित समझा।

कहार आया। धर्म की रक्षा के हेतु एकत्र धर्म वीरो को ठडा जल पिलाकर आतिथ्य किया गया। फिर घंटो चर्चा चली, व्यापार राजनीति और धर्म सब पर ही गूदडमल का प्रवचन हुआ।

"अब सभा मे चलें।" गूदडमल ने कहा।

जान छूटी। मन ही मन छदम्मीलाल प्रसन्न हुए। गूदड़मल के साथ बैठकर यह समय उन्होंने कैद की तरह काटा था।

टमटम फिर जुतवाई गई। एक सीट पर अकेले छदम्मीलाल समाये। दूसरी पर गूदडमल और मानामल विराजमान हुए। टमटम ने रामलीला मैदान की ओर प्रस्थान किया।

कार्यवाही अभी शुरू नहीं हुई थी। एक ओर हजारों की संख्या में आम जनता बैठी थी। दूसरी ओर काली टोपी, खाकी नेकर, सफेद कमीज और सफेद जूते पहने हुए अनुशासन सहित राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के नौजवान बैठे थे। हाथों से भी ऊँचा मंच बनारसी पोत से सजाया हुआ था। गूदड़मल छदम्मी लाल और भानामल को मंच पर ले गये। वक्ताओं से परिचय कराया और मंच के किनारे-किनारे लगे मोटे तकिये के सहारे दोनों को बैठा दिया।

धीरे-धीरे शहर के प्रमुख सेठों से मंच भरता जा रहा था। ये काम भी जरूरी है—छदम्मीलाल ने सोचा जब सभी आते हैं तो अब संघ के काम में आना ही पड़ा करेगा।

सभा आरम्भ हुई। वक्ता महोदय की पूरी बात तो छदम्मीलाल नहीं समझ पा रहे थे। किन्तु इतना आसानी से समझ में आ गया कि अगर गऊ की रक्षा न की गई तो देश रसातल को चला जायगा। गऊ का वध फौरन बन्द होना चाहिये।

भाषण सुनते-सुनते एक बात छदम्मीलाल के मन में उठी। लीडरों की आत्माभी बड़ी प्रसन्न रहती होगी, हजारों आदमियों के बीच शेर की तरह दहाडना.......कितना सुख मिलता होगा। सचमुच लीडर बनकर बोलने में भी बड़ा मजा आता होगा। बिना लीडरी के लाखों करोड़ों रुपये व्यर्थ हैं एकदम व्यर्थ।

एक बार सिर उठा कर लाला ने पूरे जन समुदाय को निहारा और फिर कुछ झेंपकर सिर झुका लिया।

दिल को तसल्ली देते हुए उन्होंने समझाया बोलना भी तो सीखने से ही आयेगा।

"भानामलजी!" दबे स्वर में छदम्मीलाल ने पूछा—"तुम लैक्चर नहीं दोगे क्या?"

बूढ़े भानामल यह सवाल सुनकर ऐसे लजाये जैसे कुंआरी लड़की ससुराल के नाम से लजाती है—"छदम्मीजी अपने तो ठहरे मूर्ख आदमी,

यह काम करने के लिये तो बड़ी-बड़ी पोथी बाँचनी पड़ती है।"

परन्तु छदम्मीलाल को यह बात नहीं जँची। मन में सोचा थोड़ा-बहुत यूँ ही किसी से बोलना सीख लेंगे। कैसे सीखेंगे ? अरे इस बात के लिये बेकार मगज खपाने से क्या फायदा है। किसी भी बोलने वाले की नाक पर सौ पचास रुपये मार देंगे—सिखा देगा। भाड़े के टट्टुओं की भला क्या कमी, बहुत मिल जायेंगे।

इसी उधेड़ बुन में कौन क्या बोल रहा है उधर कतई ध्यान नहीं था। चार बातें इस समय बड़ी तेजी से छदम्मीलाल के दिमाग में चक्कर काट रही थीं—एक हिन्दूधर्म, दूसरी गोवध बन्द हो, तीसरी पाकिस्तान और चौथी महत्वपूर्ण कल्पना 'मानो वह लाखों की सभा में शेर तरह गुर्रा रहे हो।' 'लाला छदम्मीलाल की जय के गगनभेदी नारे लग रहे हैं।'

कल्पना तब टूटी जब वास्तविक सभा ओजस्वी नारों के साथ समाप्त हो रही थी।

कुछ चौंककर लाला सम्भल कर बैठे। तभी लाला गूदड़मल आये, जब से सभा प्रारम्भ हुई तभी से आप वक्तागणों से वार्तालाप में व्यस्त थे।

"छदम्मीलाल, मानामलजी आइये आपका वक्ताओं से परिचय करा दूँ।"

बैठकर उठना ही लाला छदम्मीलाल को अखरा, घर, फैक्टरी, और दूकान की बात और थी। दसियों उठाने वाले समय पर आ जाते हैं, परन्तु यहाँ मानामल ठहरे सींक से आदमी, गूदड़मल को स्वयं ही सहारे की आवश्यकता होती है वह किसी को क्या सहारा देगा। यूँ मंच पर बीसियों आदमी थे, परन्तु ऐसी बात हर एक से थोड़े ही कही जाती है।

पास ही एक बल्ली थी जिसके ऊपर बिजली का हंडा लगा हुआ था। इधर उधर देखकर छदम्मीलाल ने एक हाथ से उसे पकड़ा और.... बल्ली और बिजली हिली, कुछ चड़चड़ की आवाज भी हुई, किन्तु भगवान् सीधा था, लाला बिना किसी दुर्घटना के खड़े हो गये।

"ये हैं लाला छदम्मीलाल दिल्ली के प्रसिद्ध करोड़पति, और ये हैं

सेठ भानामलजी रिवाड़िया।" छदम्मीलाल से परस्पर परिचय कराते हुए कहा—"यह हैं ब्रह्मचारी अलोपानन्दजी, यू० पी० में इनके द्वारा बहुत बड़ी गौशाला का संचालन होता है, ये हैं पंजाब के प्रसिद्ध हिन्दू नेता स्वामी साँईदासजी, और ये श्री विनायक रगड़कर, आपने महाराष्ट्र के संघ सत्याग्रह का इस चतुरता से संचालन किया था कि सरकार भी इनकी योग्यता का लोहा मान गई थी।

जै गोपाल जी की, जै-जै राम जी की, वन्दे मातरम्, नमस्ते और नमस्कार आदि के बाद गूदड़मल बोले—"छदम्मी तुम मेरी टमटम में चले जाओ। कल किसी समय मैं तुम से मिल लूँगा।"

"मामा टमटम रहने दो, मैं टैक्सी से चला जाऊँगा।"

सब से विदा लेकर छदम्मीलाल सड़क पर आये। सड़क पर श्रोता-गणों की अच्छी-खासी हलचल थी।

"ओ तांगे।" एक खाली तांगे को आते देखकर लाला ने पुकारा—"खाली है क्या।"

"आओ लाला।" तांगा रोकते हुए कोचवान ने कहा।

तांगे में बैठ कर छदम्मीलाल ने धीमे स्वर में कहा—"जी० बी० रोड तक चलना है।"



८

राजवैद्य पण्डित घूरे गुमाईं अब कहने भर को ही वैद्य रह गये हैं। सन् ४७ से पहिले दूकान में आकर्षक विज्ञापनों के छोटे-बड़े साइनबोर्ड लगाकर कुछ धन्धा चलाने का प्रयत्न भी किया करते थे। किन्तु जिस दिन से लार्डमाउटबेटन स्वतन्त्र भारत के प्रथम गवर्नर जनरल बने उसी दिन से उन्होंने दूकान तो नहीं छोड़ी अलबत्ता वैद्यगीरी लगभग छोड़ दी।

यूँ तो नगर कांग्रेस कमेटी के वह गत बीस बरस से कुछ न कुछ लगते ही आये हैं. परन्तु विगत म्यूनिसिपल चुनावों में उन्होंने कांग्रेसजनों और नेताओं पर अपनी योग्यता का वह सिक्का जमाया कि सब के सब मुँह बाये देखते रह गये। जमा जमानत समेत उन्होंने साढ़े छै सौ रुपये गाँठ से खर्च किये, हाथ में तिरंगा लिया, और मुँह से केवल गांधी-गांधी

का जाप करते हुए विरोधी की जमानत जब्त कराके म्यूनिसिपल कमिश्नर बन गये।

लक्ष्मी कौन से दरवाजे से आई यह तो कोई नहीं बता सकता, किन्तु यह सब ने देखा कि पण्डित जी ने अपना पुराना मकान इस जमाने में न केवल लिपवा-पुतवा कर नया बनवा लिया बल्कि दूसरी के ऊपर तीसरी मंजिल भी और बना दी। नीचे दूकान का फर्श मारबल का बनवाया, दीवारों के निचले भाग पर जापानी टाइल लगवाये, तख्त हटाकर दूकान को आधुनिक फरनीचर से लैस किया।

अच्छी-खासी मजे में जिन्दगी की खड़खड़ी चल रही थी कि प्रान्तीय असेम्बली के निर्माण की घोषणा हुई, वोटरों की लिस्टें आ गई, और चुनाव की तारीख के बारे में नित नई अफवाहें उड़ने लगीं।

गुसाईं जी की दूकान पर आजकल रात के बारह बजे तक चखचख रहने लगी। उन समेत चार-पांच अधेड़ उम्र मुहल्ले के खुर्राट कांग्रेसी तथा नये लौंडे-लपाड़ों के जमाव से न केवल गली में रौनक रहने लगी बल्कि पनवाड़ी और रेड़ी पर चाय बेचने वाले सरदार जी की बिक्री में भी कुछ तेजी आ गई।

इस बात को गुसाईं जी बड़े रोब के साथ कहा करते हैं कि हमने खुद तो एक ही चुनाव लड़ा है परन्तु विगत तीस साल से चुनावों में काम करते आ रहे हैं। हम से पूछो कि चुनाव किस तरह जीता जाता है।

बात सही है, सदा से ही गुसाईं जी ने अपनी देश भक्ति और कांग्रेस-भक्ति को चुनाव तक ही सीमित रक्खा है। दूसरे कांग्रेसियों की तरह जेल जाने का शौक उन्हें कभी नहीं रहा। जब भी कभी ऐसा समय आया आप साफ कतरा गये। बुद्धि से काम लिया और युक्ति से जब-जब अंग्रेजी गवर्नमेन्ट ने इन्हें फांसने के लिए जाल फेंका···जाल खाली ही निकला। कभी भी राजवैद्य पण्डित घूरे गुसाईं उसमें नहीं फंसे।

एक बार की बात है कि सत्याग्रह जोरों पर था। दिल्ली के चीफ कमिश्नर ने सोचा कि क्यों न सत्याग्रह कराने वाले मुख्य-मुख्य चौधरियों

को पकडकर बन्द कर दिया जाय। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी। इन चौधरियों मे घूरे गुसाईं को भी समझा गया, फलस्वरूप रात के दस बजे पुलिस ने इनके मकान पर छापा मारा।

तब गुसाईं जी सो रहे थे, पत्नी ने जगाकर सूचना दी कि नीचे पुलिस दरवाजा खटखटा रही है। एक क्षण गुसाईं जी ने सोचा, और फिर तुरन्त स्नानगृह की ओर दौड़े; एक मिनट भी नही लगा कि लगभग आधी नहाने की साबुन की टिकिया गुसाईं जी गुड़ की तरह खा गये। नल खोला और पानी पीते हुए बोले—'जाओ जा कर दरवाजा खोल दो, दरवाजा खोलते ही कह देना कि बीमार हैं, कै-दस्त लगे हुए हैं।"

पुलिस इन्सपेक्टर ने आकर देखा कि पाखाने के बाहर ही गुसाईं जी नगे बैठे उल्टी कर रहे हैं। एकदम सफेद रंग को उल्टी""दस्त होने की 'पटापट' की आवाज उसे दस कदम दूर से ही आ रही थी। इन्सपेक्टर ने कोतवाली फोन किया, कोतवाल ने सिटी मैजिस्ट्रेट को सूचना भेजी। सिविल सर्जन सहित बेचारे सिटी मैजिस्ट्रेट आधी रात को घटनास्थल पर पहुँचे, फिर चीफ कमिश्नर, डिप्टी कमिश्नर आदि को फोन किया गया। नतीजा यह हुआ कि अगले दिन नगर के सभी कांग्रेसी नेता जेल मे थे और पण्डित घूरे गुसाईं अपने बिस्तर पर ! खैर।

चुनाव मे तरह-तरह की तरकीबें इस्तेमाल करनी पड़ती हैं—विरोधी पक्ष क्या कर रहा है? घूरे गुसाईं के अनुसार ये जानना भी बहुत जरूरी होता है।

इस काम के लिए मुहल्ले के संघ संचालक (या नायक कहिये) लाला गूदड़मल के कारनामो को भांपने के लिये भी गुसाईंजी ने एक लौंडा छोड़ रक्खा था, उसने सुबह ही रिपोर्ट दी कि गूदडमल ने सेठ फकीरचन्द के सुपुत्र लाला छदम्मीलाल को साट लिया हैं। कल तीसरे पहर छदम्मीलल और वह कई घंटे तक घुट-घुटकर बातें करते रहे, और रात को सभा मे भी छदम्मीलाल मंच पर विराजमान थे। बात सुनते ही गुसाईंजी के कान खड़े हो गए, सारी दुपहरी वह इस विषय पर सोचते रहे, और शाम को

जब तक कि उनकी पूरी मंडली दूकान पर इकट्ठी भी न हो पाई थी, चन्द उपस्थित सदस्यों को ही यह चैलेंज करके विदा हुए—"फकीरा का लौंडा ठहरा बुद्धू, आ गया होगा गूदड़मल की बातों में। मैं अभी जाकर उसे समझाता हूँ बेफिकर रहो, उस लौंडे को मैं संघ वालों के चक्कर में नहीं पड़ने दूंगा।"

जिस समय गुसाईंजी छदम्मीलाल की कोठी पर पहुंचे, वह उस समय वहां नहीं था। किन्तु वह टलने वाले आसामी नहीं थे, मन में यह सोच कर बैठ गये कि ससुरा कभी तो आयेगा, मैं सारी रात यहीं बिता दूंगा।

भगवान् ने गुसाईंजी की जल्दी ही सुन ली। लगभग आधे घंटे बाद ही छदम्मीलाल आ पहुंचे।

गुसाईंजी ठहरे कांग्रेसी, साथ में वैद्य भी। दो एक बार बचपन में इनकी दी हुई कड़वी दवाई भी छदम्मीलाल पी चुके थे। दूर से ही हाथ जोड़कर छदम्मीलाल ने श्री मुख से कहा—"जै राम जी की चाचाजी। अबे ओ पहाड़ी कहां मर गया, वैद्य चाचा आये बैठे हैं और तूने साले नास्ते-पानी के लिये भी नहीं पूछा।"

"अरे हो जायगा नास्ता-पानी भी, बैठ; सोचा बहुत दिनों से देखा नहीं है छदम्मी को आज देख आऊँ। बहू तो ठीक है न?"

"सब तुम्हारी दया है चाचा।" गुसाईंजी के निकट ही दूसरे सोफे पर बैठते हुए छदम्मीलाल बोले। यूं लाला बनिये के बेटे थे, जानते थे कि बिना काम के कोई किसी के पास नहीं आता।

दो-एक क्षण मौन चला फिर एक लम्बी सांस छोडते हुए गुसाईंजी बोले—"हूँ......तो काम-धंधा तो ठीक चल रहा है।"

"ठीक ही है, यूं तुम जानो अब कुछ मंदी-सी चल गई है।"

',सो तो हैं ही। अरे हां, सुना है तू संघ वालों के साथ हो गया है?"

"हां यूं ही कल चला गया था मामा के साथ।" गुसाईंजी क्यों आये आये हैं। छदम्मीलाल समझ चुके थे।

"देख भई।" बात बीच से ही उड़ाते हुए गुसाईंजी ने कहा—"यूं

नाते-रिश्ते मुहल्लेदारी सभी कुछ भुगतनी पड़ती है, मैं तुझे संघ में नहीं जाने दूंगा।"

छदम्मीलाल चुप रहे। दरअसल उन्हें सूझा ही नहीं कि इस बात का क्या उत्तर हो सकता है।

"अगर काम करना है तो कांग्रेस में कर, भई कम से कम यह तो सोचना चाहिये कि दंगे-फ़िसाद और लूट मार के अलावा संघ वालों ने और किया क्या है? कांग्रेस मे लाख बुराई हो, कम-से-कम उसने देश को तो आज़ाद करवाया है?"

"लेकिन चाचा जनसंघ तो अभी ही बनाया गया है?"

"अरे तुझे गूदड़ ने बहकाया होगा। राष्ट्रीय-सेवक संघ और जनसंघ एक ही चीज हैं। जब इनके ऊधम से तंग आकर सरदार पटेल ने संघ को गैरकानूनी कर दिया था तो इनके गुरुजी ने यह कहकर इसे कानूनी करवाया था कि आगे से संघ राजनीति में नहीं पड़ेगा। परन्तु ऐसे वायदे के सच्चे होते तो घर बैठे पूजते, चुनाव का वक्त आते ही इनके मन में लड्डू फूटने लगे—नतीजा यह हुआ कि अब राष्ट्री-सेवक-संघ की जगह जनसंघ की पूंछ लगाकर चुनाव लड़ने के लिए मुँह-धोये फिर रहे हैं। ....और तुझे क्या समझाना, गूदड़ इसकी मिसाल है। पहिले एक पहर रात से ही फलाने लाला जी ढिमके प्रसाद जी चिल्ला-बिल्लाकर भले आदमियों की नींद खराब किया करता था, और अब जनसंघी बनकर चुनाव लड़ने की सोच रहा है।"

छदम्मीलाल ने सोचा इस टर्र-टर्र को बन्द ही करा देना चाहिये—"जैसी तुम्हारी इच्छा चाचा।" उसने कहा—"तुम कहते हो तो हम साले जनसंघ की तरफ पैर करके भी नहीं सोयेंगे, और सच्ची बात तो यह है कि इस मुफ्त की झखझख से फायदा ही क्या है, बल्कि नुकसान ही है। बेकार अपना काम-काज छोड़ो और जलसे-जलूस भुगताते फिरो। बखत बे बखत हजार दो हजार रुपयों के लिए भी कटना पड़ता है। क्यों अन्धे न्योते और क्यों दो बुलाये।"

"इतना कह भर देने से ही मैं नहीं छोड़ दूंगा छदम्मी, अव की तुम्हें कांग्रेस की मदद करनी पड़ेगी ?" भागते वेकाबू घोड़े की लगाम खींचना ज़रूरी समझा गुसाईं जी ने।

एक क्षण छदम्मीलाल रुके, यूँ दो-चार गालियाँ कांग्रेस और कांग्रेसियों के वास्ते उन्हें कल की सभा में भी मिल गई थीं. फिर भी उन्होंने कुछ अतिरिक्त भार और भी अपने छोटे-से दिमाग पर डाला, और फिर अपनी मोटी नाक का एक कोना ऊपर को चढ़ाते हुए कहा—"चाचा इसके लिए मजवूर मत करो। सुसरी कांग्रेस ने ही कौन-सी अपनी करनी में कसर छोड़ी है। हमारी जान को दसियों पागल कुत्ते उसने छुड़वा रक्खे हैं, अंग्रेज़ी राज से तिगनी रकम भरनी पड़ती है अव की वार इन्कमटैक्स में ; और व्यापार की हालत यह है कि चालू वरस में पचास टन लोहे का कोटा और कम कर दिया गया है। कितनों से ही कहा सुना इतने दिन से घी का कारखाना चल रहा है एक पैसे का भी घी नहीं खरीदा है तुम्हारी कांग्रेसी सरकार ने......। सच कहता हूँ चाचा, वह तो तुम हो जो लाला जी के मरने के वाद मेरे लिए उन की जगह हो दूसरे कांग्रेसियों को मैं अपने पास फटकने भी नहीं देता।"

"भई, तो यह सव वातें मुझे पहिले ही वता देना चाहिये थीं।" पैंतरा वदल कर गुसाईं जी वोले—"आखिर मेरा क्या मुरव्वा डलेगा, माना कि मेरी वहुत ऊँची दौड़ नहीं है ; फिर भी यह वाल कांग्रेस में ही रहकर सफेद किये हैं, तेरे लिए कुछ तो कर ही सकता था। तूने शायद कभी देखा नहीं, मेरे और तेरे वाप फकीरा के वीच ऐसा प्रेम था कि क्या सगे भाइयों में होगा।' इतनी वात कहकर न जाने किस तरकीव से राजवैद्य ने कई मोटी-मोटी आँसुओं की वूंदें टपका दीं।

किन्तु छदम्मीलाल इन घड़ियाली आँसुओं से पिघलने वाले नहीं थे—"कहना सुनना क्या था चाचा, ठीक है कि तुम्हारे दिल में मेरे लिए ममता है। परन्तु मेरी तकदीर का लिखा तुम थोड़े ही वदल दोगे, और फिर जो कुछ हो रहा है भुगत ही रहा हूँ। वह तो ऐसे ही.......जव

बात चल पड़ी तो कह दिया।" बात काफी गम्भीरतापूर्वक कहने का यत्न किया गया।

"इन सब बातों के लिये उदास होने की जरूरत नहीं है बेटा, यह दुनिया का चक्कर यूं ही चला करता है। साथ-साथ अपने नफे-नुकसान की सभी को सोचनी पड़ती है। मेरे होते हुए कांग्रेस से तुम्हें नुकसान नहीं पहुंचेगा। बड़े-बड़े व्यापारी हैं कांग्रेस में, बिड़ला को ही ले लो—गांठ का खर्च करने को कोई ऐसी जगह थोड़े ही फँसता है, सौ की जगह दो सौ का फायदा होता है तभी यह सब यहां पड़े हैं।"

छदम्मीलाल सोच भी नहीं पाये थे कि किस तरह इस बला से जल्दी पिंड छुड़ाया जाय कि गुसाईंजी अवसर पाकर फिर बोल उठे—"देखो मैं तो साफ बात कहना चाहता हूं, चुनाव में तुम्हें कांग्रेस का ही साथ देना पड़ेगा। वैसे अबकी बार मैंने तुम्हें हथेली पर सरसों जमाकर न दिखाई तो बात ही क्या, तुम्हारी सारी शिकायतें चुनाव से पहिले ही दूर करवा कर दम लूंगा। बात सिर्फ इतनी-सी है कि कांग्रेस से तुम्हें घाटा नहीं होना चाहिये, यह बात दूसरी है कि लोगों को दिखाने के लिए चाहे तुम्हारा लोहे का कोटा और भी घटा दिया जाय। सीधे या छुपे तरीके से व्यापारी का फायदा तो होना ही चाहिये। मैं तुम्हें दिखाऊँगा कि किस तरह कांग्रेस की बदौलत तुम्हारा व्यापार फलता-फूलता है।"

अब छदम्मीलाल क्या उत्तर दें। भोंडी अदा से मुस्कराते हुए छदम्मी लाल केवल इतना ही कह पाये—"वह सब कुछ तो ठीक है चाचा, पर तुम मेरे लिये किसी से बुराई मत लेना।"

"कौन माई का लाल है जो पूरे गुसाईं को बुराई देने की हिम्मत करे, बेटा सब को जूती तले दाबकर रखता है तुम्हारा चाचा, करूँगा; क्यों नहीं करूँगा। सभी अपनों-अपनों के लिए करते हैं तो तेरे लिए क्यों नहीं करूँगा।" उठते हुए गुसाईंजी बोले।

छदम्मीलाल ने सन्तोष की सांस ली। चलो किसी तरह बला तो टली—"चल दिये क्या, जरा तो बैठो। अबे ओ पड़ाडी'''''''?' छदम्मी

लाल ने गुड़ जैसे मीठे स्वर में कहा।

"रहने दे ससुरे पहाड़ी को........।"

"अरे चाचा कुछ तो........और कुछ नहीं तो चाय तो पीते जाओ।"

'अरे छोड़, चाय मैं पीता ही नहीं। देख मेरा तेरा तेरा फैसला हो चुका है। अब गूदड़मल के चक्कर से बचकर रहियो। अब उस साले से कौन भात लेना रह गया तुझे ?"

"अरे चाचा गूदड़ मामा उन मामाओं में से नहीं हैं जो भात दिया करते हैं ?"

"सो तो जानता हूँ, अव्वल दर्जे का मक्खीचूस आदमी है। साले ने हमेशा से ही असली घी की जगह गोले का तेल बेचा है। पर देख, मेरी तेरी बात........।"

"कभी तुम्हारे कहने से फिरा हूँ क्या चाचा ?"

'नहीं-नहीं सो तो जानता हूँ।"

कोठी के बाहर तक छदम्मीलाल गुसाईंजी के साथ आए, बाहर आकर दरबान को बुलाकर कहा—ड्राइवर कहाँ मर गया ? बुला जल्दी से; चाचा को घर छोड़कर आयेगा।"

"अरे मैं चला जाऊँगा......।"

"चाचा, सब तुम्हारी ही तो माया है। अपनी चीज होते हुए क्यों बेकार काया को कष्ट देते हो।"



९

दिन अभी भली भाँति नहीं छुपा था। मैना आईने के सामने बैठी शृङ्गार कर रही थी, और सोच रही थी नब्बन के बारे में जो शायद नीचे पंजाबी के होटल में बैठा था।

दो साल से नब्बन मैना की जिन्दगी में आया, और शायद तभी से जब उसने उसे पहिली बार देखा था दिल दे दिया।

किसी व्यक्ति को अधिक से अधिक प्यार करके भी अपने धंधे को तो नहीं छोड़ा जा सकता ? यह शिक्षा उसकी माँ की थी और काफ़ी सोचने समझने के बाद भी यह बात ही उसे अधिक वास्तविक लगती थी। उसकी असल माँ कौन थी यह तो भगवान् ही जाने। जब से उसने होश सम्भाला मोतीबाई को ही उसने माँ के रूप में देखा और लखनऊ के चौक को ही अपनी जन्मभूमि समझा। इसके अपवाद रूप में

वल इतनी-सी ही वात थी कि अक्सर मोतीवाई कहा करती थी—"मैं ' होती तो तू मर जाती। दो साल की उम्र थी तेरी जव तुझे एक हाड़ी से लिया था। एकदम पीली और हड्डियों का ढांचा थी तू, तेरी जान बचाकर तो इतनी वड़ी किया ही साथ-साथ उस मुये पहाड़ी को भी सौ रुपये खैरात किये थे।

नव्वन से सम्वन्ध वनने के वाद भी मोतीवाई लगभग एक वर्ष जिन्दा रही। किन्तु नव्वन से उसने कभी पैसा नहीं लिया। वह आता और चला जाता, मोतीवाई इस ग्राहक के रुपये माँगती तो मैना अपनी संचित पूंजी में से जो ग्राहकों से ठहरे हुए रुपये से अधिक उसे प्राप्त होकर उसकी पूंजी वन जाते थे दे देती थी, क्योंकि मोतीमाई क्या, किसी भी पुरानी वेश्या को मुफ्त की आशनाई पसंद नहीं होती।

मोतीवाई मरी तो मैना ने अपने से उम्र में कुछ वड़ी मुन्नीवाई के नाम मात्र संरक्षण में रहना आरम्भ किया। किन्तु यह कुछ दिन ही चला, मैना नव्वन पर पूरा अधिकार प्राप्त कर चुकी थी, उसने उसे अपना संरक्षक वनाया और फिर दिल्ली आगई।

रुपया पैसा तथा ज़ेवर आदि जो कुछ भी उसके पास था, यहाँ तक कि स्वयम् अपने पर भी वह नव्वन का पूर्ण अधिकार समझती थी। आमतौर से दोपहर के समय जव वह अपनी हमपेशा अन्य स्त्रियों में वैठती तो कहती—"वुढ़ापा कोई आज ही थोड़े आ रहा है। उसकी फिक्र अभी से क्यों की जाय। ··· ····और मैं तो कभी लड़की पैदा करने या पालने के वारे में भी नहीं सोचूंगी। वुढ़ापा काटने के लिये नवाव साहव जो हैं, इतने अच्छे और ऊँचे घराने के आदमी का दिल आसानी से थोड़े ही मिलता है।"

दिल तो मिला, किन्तु जव से उसने मुन्नीवाई का साथ छोड़ा और नव्वन के साथ धन्धा करना शुरू किया तभी से नव्वन के हँसमुख चेहरे पर उदासी छा गई। स्थाई और खामोश उदासी।

वह जानती थी कि नव्वन के ही कौशल से वह चन्द ग्राहकों से गई

की विद्या न जानते हुए भी काफी पैसा पा लेती है, जब कि उसकी दूसरी हम पेशा आधी रात तक होश नहीं पातीं—और सुबह तक नींद खराब करके भी सौ रुपये। जिस का अर्थ है कि साझीदारों और ठेकेदारों का भाग देकर बीस भी नहीं रहते। क्या खायें और क्या पियें।

मैना सोच रही थी कि आज उसके पास हजारों रुपये हैं—वह खुद भी कोई ज्यादह बुरी नहीं है; क्या सचमुच रुपया और वह दोनों मिल कर नवाब साहब की उदासी का इलाज नहीं कर सकेंगे ?

तभी वह चिर-परिचित धीमी लय और मन्द गुनगुनाहट उस ने सुनी—

कैदे-हयात औ बन्दे-गम अस्ल में दोनों एक हैं,
मौत से पहले आदमी गम से निजात पाये क्यों।

'नवाब साहब एक बात पूछना चाहती हूँ।' शीशे के सामने से हटते हुए मैना ने कहा—"इस शेर के अलावा दुनिया के किसी और शायर का या आपका, कोई भी कलाम नहीं है ?'

नव्वन मुस्कराया—"यूँ तो जितनी बड़ी दुनिया है उतनी ही बड़ी दुनिया के लोगों की शायरी भी होगी। लेकिन अपना-अपना दर्द है और अपनी-अपनी दवा। उस्ताद मरहूम जनाब हज़रत ग़ालिब का यह शेर दिल के दर्द से कुछ राहत दिला देता है। वैसे अगर आप चाहें तो मैं आपके सामने इसे न गुनगुनाया करूँ।"

"शौक से गुनगुनाइये, मैं आप के दिल की राहत नहीं छीनूंगी। क्या मैं इतना पूछ सकती हूँ कि मेरी हैसियत क्या है। क्या मुझे हमेशा दर्द के बढ़ाने वाली ही समझा कीजियेगा ?"

नव्वन शेरवानी पहिन चुका था। जूते पहिन रहा था कि पहिनते-पहिनते रुक गया। आश्चर्य चकित मुद्रा में उसने पूछा—"बेगम साहिबा ये गलतफहमी आप को कैसे हुई, शेर दिल के दर्द को राहत देता है, लेकिन आप तो मेरी निहायत ही बेलुत्फ जिन्दगी का सकून हैं, सच कहना मुझ से कोई गलती हुई क्या ?"

"काश आप से गलतियां हुआ करती।" मैना ने अपने हृदय की बात कही—"आप की गलतियों से मुझे रूठने का मौका तो कम से कम मिला ?"

नव्वन की गम्भीरता समाप्त हो गई। जूते पहिनते हुए उस ने कहा—"हुकम दीजिये, किस किस्म की गलती करूं ?"

मैना कुछ कहना ही चाहती थी कि अचानक उसे ध्यान आया कि नव्वन कहीं बाहर जाने की तैयारी में है—"आप चले कहां ?"

"एसे ही इतफाक से दिल्ली में भी एक दोस्त बन गया है। कल उस का बच्चा बहुत बीमार था, एक बार उससे मिलकर बच्चे की खैरियत पूछ लेना चाहता हूं।"

"कितनी दूर जाइयेगा ?"

"घर तो उसका करीब ही है, लेकिन मैं जहां वह काम करता है वहीं जाकर मिलूंगा। एक मील के करीब होगा।"

"तो फिर खाना मंगवा लीजिये, खाना खाकर जाइयेगा।"

"अभी से खाना........?"

"देखिये कम से कम मेहरबानी करके दोनों वक्त खाना साथ ही खाया कीजिये। मुझे अकेले या किसी और के साथ खाना खाना पसन्द नहीं है।"

"जैसा हुक्म, आपके पास आज सिर्फ मिस्टर श्यामसुन्दर और लाला छदम्मीलाल आयेंगे। श्यामसुन्दर आते ही होंगे और सात बजे तक वह लौट जायेंगे। छदम्मीलाल आठ बजे के करीब आयेंगे और एक घण्टे बाद लौट जायेंगे। तब तक मैं लौट आऊंगा।"

"शुक्रिया।"

"किस बात का ?"

"कई रोज़ बाद आज की रात आप के साथ बीतेगी ?"

मैना की बात का नव्वन ने कोई जवाब नहीं दिया। एक गहरी

सांस लेकर वह चुपचाप दरवाजे से बाहर निकल गया। जीने से उतरा और सड़क पर पैदल ही चल दिया।

चाँदनी चौक के दोनों किनारों पर खरीज माल को सीधे ग्राहकों तक बेचने का स्वार्थ रखने वाली दूकानें खूब सजी सजाई रहती हैं ; किन्तु चाँदनी चौक की गलियों में कपड़े को थोक में बेचने वाली मण्डी कई मार्गों में अलग-अलग बिखरी हुई-सी है। न तो उन दूकानों में ग्राहकों को आकर्षित करने वाली सजावट की आवश्यकता है और न मुख्य सड़क पर रंग-बिरंगे साइनबोर्ड लगाने की दरकार है। नियमानुसार दलाल, दूकानदार और व्यापारी (अर्थात् खरीज वाला दूकानदार) दोनों से सम्बन्ध रखता है। बस इस मार्केट की सजावट, शोभा, आकर्षण सभी कुछ दलाल होता है।

फलस्वरूप नब्बन को प्रेम से मिलने के लिए छदम्मीलाल की दूकान ढूंढने में भी थोड़ी-सी दिक्कत हुई। वह चाहता था कि केवल साइनबोर्ड देखकर ही दूकान ढूढ ले किन्तु जब यह प्रयत्न सफल न हुआ तब उसने एक दूकानदार से पूछा कि लाला छदम्मीलाल की कौनसी दूकान है।

एक क्षण सिर खुजाकर दूकानदार ने कहा—"छदम्मीलाल··· अच्छा छदम्मीलाल, उनकी दूकान पीछे रह गई। फर्म का नाम भीखूराम फकीरचन्द पड़ता है।"

तब दूकान मिली, प्रेम भी मिल गया।

बड़े तपाक से प्रेम दूकान से निकलकर आया। मुस्कराते हुए बोला—"आप के घर का पता तो मैं पूछना ही भूल गया था।"

"क्यों खैरियत तो है ?"

"जी हाँ, बच्चा तो ठीक है, आइये, चलें।" दूकान की ओर मुँह करके प्रेम ने कहा—"मुनीम जी मैं जा रहा हूँ।"

'बड़ी आराम की नौकरी है ?" नब्बन ने कहा—"सारा बाजार खुला हुआ है, और आप को छुट्टी मिल गई।"

'जी नहीं, यह बनिये की नौकरी है, जब व्यापारी आता है तब रात

के ग्यारह तक बज जाते हैं। जब व्यापारी है ही नहीं तो बैठना न बैठना बराबर है।"

रास्ते में नव्वन ने कहा—"आइये कहीं चाय पी ली जाय।"

"चलिये भी घर ज्यादह दूर नहीं है। घर ही पियेंगे।"

यूं नव्वन घर जाने से काफी कतराया। किन्तु प्रेम का आग्रह टाल न सका।

घर पहुँच कर नव्वन को बैठाते हुए प्रेम ने अपनी पत्नी से कहा—"भाई साहब के लिए चाय बनाओ, और खाना भी खायेंगे भाई साहब ......।"

"नहीं प्रेम साहेब, सिर्फ चाय की मेहरबानी ही काफी है। खाना मैं नहीं खा सकूंगा।"

प्रेम की पत्नी एक कोने में जलती अंगीठी के सहारे बच्चे को गोद में लिए बैठी थी कुछ लजा कर बोली—"शायद गरीब बहन के घर की रोटी नहीं खाना चाहते भाई साहेब ?"

"अमीर हो या गरीब, भाई को बहिन के घर की रोटी नही खानी चाहिये। नव्वन ने मुस्कराकर बात समाप्त करने का प्रयत्न किया।

किन्तु प्रेम बोला—"ये बेकार की बातें हैं भाई साहब आज आपको जरूर खाना होगा।"

"दरअसल बात यह है प्रेम साहब कि मुझे किसी दूसरे के साथ खाना है.........इस उसूल को आप भी मानते होंगे कि वायदा करके तोड़ना नहीं चाहिये।"

तब प्रेम नव्वन को वहीं छोड़कर बाजार चला गया। लगभग पन्द्रह मिनट बाद लौटा। इस दौर में प्रेम की पत्नी नव्वन से अपनी घर-गृहस्थ की बातें करती रही। नव्वन से उसने केवल एक ही बात पूछी—"भाभ तो है ना ?"

क्षण भर के लिए नव्वन स्तब्ध-सा हो गया क्या उत्तर दे; फि बोला—"हां, हां है।"

"तो फिर मिलना किसी दिन।"

"लाऊँगा।" संक्षिप्त-सा उत्तर देकर नब्बन ने बात समाप्त कर दी।

चाय पी गई। साथ के लिये प्रेम कुछ नमकीन बाजार से ले आया था।

'अब मैं चलूँगा प्रेम साहब, और फिर कभी आपसे मिलने की कोशिश नहीं करूँगा।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि आप जाने मुझे क्या समझकर लम्बी-चौड़ी खातिरदारी का सामान खर्च कर डालते हैं।" उठते हुए नब्बन ने कहा।

प्रेम भी साथ ही उठता बोला—"यह आपकी ज्यादती होगी भाई साहब। किसी की खातिरदारी कर सकूँ; सही है कि इस काबिल मैं नहीं हूँ। अगर इस वजह से मिलना छोड़ेंगे तो वाकई मुझे भी बड़ा दुःख होगा।"

घर से निकल कर दोनों ने गली पार की। चौराहे पर विदा होते समय प्रेम ने पुनः कहा—"भाईसाब कम से कम अपना ठिकाना तो दिखा दीजिये वक्त बे वक्त......।"

"प्रेम साहेब, बहुत अच्छा हुआ कि बात मौके पर आगई, सब कुछ साफ-साफ मैं आपसे कह देना चाहता था। मेरा पेशा और ठिकाना दोनों ही बहुत बुरी जगह हैं। मैं यहीं तुम्हारे करीब जी० बी० रोड पर रहता हूँ और एक लखनऊ की तवाइफ की दलाली करता हूँ।" एक क्षण के लिये नब्बन रुका और प्रेम के चेहरे की ओर देखा। प्रेम के चेहरे पर उत्कंठा सहित कौतूहल था। न तो प्रेम चौंका ही और न ही उसकी आँखों से घृणा का भाव प्रकट हुआ। नब्बन ने कहना शुरू किया—"यह बात मैं उसी रोज साफ कर देना चाहता था, लेकिन मौका नहीं मिला। अलबत्ता यह गलती है कि तुम्हें साफ अपने बारे में न बताकर आज भी तुम्हारे साथ घर चला गया।"

प्रेम हँसा—"तो इससे क्या हुआ ?"

"शरीफ घरानों में मुझे नहीं जाना चाहिये।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि मैं जिस गन्दगी में रहता हूँ, उसका ताल्लुक आम दुनियाँ से नहीं है, हैं तो सिर्फ चन्द गन्दे इन्सानों से।"

"यह सब कुछ नहीं; भाई साहेब जहाँ तक मेरा तजुर्वा है यह गंदगी तो आम है। जी० वी० रोड पर इसकी दिखावट खुले आम है और इस या उस मुहल्ले में ज़रा छुपे-छुपे। शरीफ आदमी यहाँ भी हैं, और आप इस बात का सबूत हैं कि कि शरीफ आदमी वहाँ भी;"......यानी जिसे आप गन्दगी कह रहे हैं, वहाँ भी न जाने कितने शरीफ इन्सान होंगे।"

नव्वन कुछ कहना चाहता था कि प्रेम फिर बोल उठा—"चलिये, अगर मिलना चाहूँ तो मिल सकूँ—ज़रा अपने मिलने की जगह दिखा दीजिये।"

"प्रेम साहेब आप सोचते होंगे कि शायद मैं वहाँ जाकर बिगड़ जाऊँ, घबराइये नहीं, एक तरफ मेरी बीबी मुझे बहुत प्यारी है दूसरी तरफ जेब एकदम खाली है, और तकरीबन हमेशा ही खाली रहती हैं।'

"मैं समझता था कि आप चलने की ज़िद न करते तो अच्छा था।" शान्त भाव से नव्वन ने कदम बढ़ाते हुए कहा।



१०

एक सप्ताह तक गूदड़मल छदम्मीलाल की बाट जोहते रहे, किन्तु छदम्मीलाल की परछाईं भी दिखाई न दी। अन्दर उम्मीदवार चुने जा रहे थे और बाहर शीघ्र ही चुनाव की तारीख, तथा नाम देने और वापिस लेने की तारीख की एक दो दिन में ही घोषणा होने वाली थी। गूदड़मल मन ही मन प्रसन्न थे कि छदम्मी को पटा लिया है। किले जैसी बड़ी हवेली चुनाव के दिनों मे जनसंघ के कब्जे में रहेगी""""किंतु ज्यों-ज्यों दिन बीते प्रसन्नता लोप होती गई। आठवें दिन झक मारकर उन्हें छदम्मीलाल की कोठी पर जाना ही पड़ा।

रात के नौ बज रहे थे, अगर दस पाँच मिनट और लेट हो गये होते तो पंछी उड़ ही गया था। द्वार पर ही मामा और भानजे टकराते-टकराते बचे।

"बड़ी जल्दी में मालूम होते हो बेटे, किधर जाने की तैयारी है ?"

"ओह मामा, आओ बैठो। जरा फैक्टरी की तरफ जा रहा था।" मन में तनिक खीजते हुए छदम्मीलाल वापिस मुड़े।

"यह हर समय की भागदौड़ से स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है, जहाँ कहीं आना-जाना हो दिन में ही निपट आया करो, मैं तो यही सोचता आ रहा था कि कहीं बेटे की तबीयत तो खराब नहीं हो गई है। आठ-दस दिन से दिखाई ही नहीं दिये।"

'क्या बताऊँ मामा अकेली जान और सत्तर बवाल, न दिन को चैन न रात को। दो मिनट जरा आराम से बैठने की भी छूट नहीं मिलती।"

'देख भई छदम्मी, अब कुछ दिनों के लिए काम-धन्धे की तरफ ढील डालनी होगी। भई चुनाव सिर पर आ गया है।"

छदम्मीलाल चुप। नजरें झुका लीं।

किन्तु गूदड़मल खेले खाये घाघ थे। छदम्मीलाल को फिसलाने के लिए चिकनाई का वातावरण बनाने का प्रयत्न करते हुए बोले—"भई यह भी व्यापार ही है। हर व्यापारी का असेम्बली में अपना आदमी होना चाहिये, एक नहीं हजारों फायदे मैं तुम्हें गिनवा सकता हूं।"

छदम्मीलाल को दुनिया चाहें लाख भोंदू कहे। परन्तु यह व्यापार के मामले में काट खाने वाले आसामी नहीं थे। गूदड़मल कहाँ कन्नी काट रहे हैं वह समझ गये। बोले—'मानता हूँ मामा, असेम्बली की मेम्बरी से थोड़ा बहुत फायदा हो जाता है—पर दूसरा आदमी अपने फायदे को देखेगा या हमारे फायदे को ?"

एक बारगी गूदड़मल सन्न रह गये। ये तो फकीरा का भी गुरु है, मन ही मन कुछ खीजते हुए वह बोले—"मैं हूँ, या कोई दूसरा हो। जिस आदमी के सहारे आदमी मेम्बर बनेगा उसका तो काम उसे करना ही पड़ेगा।"

"और न करे तब।" छदम्मीलाल तुरन्त बोल उठे—"बुरा मत

मानना चाचा यह कलजुग है, काम निकले पीछे कौन किस का ध्यान रखता है।"

"तो भई फिर ऐसा करो कि तुम्हें ही खड़ा किये देते हैं जनसंघ के टिकट से, तू मुझ पर विश्वास कर या न कर, पर भैया मैं तो हर हिन्दू पर विश्वास करता हूँ।"

किश्ती का रुख किनारे की ओर करके छदम्मी फिर चुप खींच गये।

झक मार कर गूदड़मल बोले—"हाँ वह, छदम्मी हवेली की चाबी दे देते तो यह था कि चुनाव के प्रचारकों को उसमे ठहरा देता, वैसे तो मैं अपना मकान भी आधा इसी काम को लिए दो-एक महीने के लिए खाली कर दूंगा।"

"हवेली तुम्हारी है मामा चाहे जब खुलवा लो, पर बात यह हुई है कि वैद्य चाचा अभी परसों आये थे। बहुत सिर हुए कि चुनाव कांग्रेस के टिकट पर लड़ो। अब एक तो मैं तुम से वायदा कर चुका था दूसरे सुसरी कांग्रेस से मुझे वैसे भी नफरत है।"

'क्या चूरे आया था।" गूदड़मल का खून उबलते-उबलते रह गया—"तुम्हें उसकी पोल मालूम नहीं, भिखारी था एकदम, तीन साल की कमेटी की मेम्बरी में लखपती बन गया है ?"

'जानता हूँ मामा, उसकी और भी बहुत-सी पोलें जानता हूँ, पर मामा तुम जानो मुहल्लेदारी तो निभानी ही पड़ती है। जरा जनसंघ वाले मेम्बरी के टिकट के लिए मेरा नाम मंजूर कर लें, हवेली खोलना तभी ठीक रहेगा।"

गूदड़मल मन ही मन छदम्मीलाल को कोस रहे थे। मुहल्ले से असेम्बली के चुनाव स्वयं लड़ने की अभिलाषा न जाने कितने महीनों से लालसा बनकर उनके विशुद्ध हिन्दू हृदय मे पनप रही थी। दूसरी ओर ऐसे मोटे आसामी को कांग्रेसियों के हवाले कर देना भी कोई बुद्धिसंगत काम नहीं था। मानो बोलती पर सदमा पड़ा हो, अत्यन्त ही क्षीण स्वर में उन्होंने कहा—"मैंने तो पहिले भी तुम से कहा था कि अगर काम-

ने बड़े चक्कर में डाल रक्खा है। कांग्रेस वाले चाहते हैं मैं उनमें मिल जाऊँ। जनसंघ वाले मुझे मेम्बर बनाना चाहते हैं। तुम्हारी क्या राय है ?"

"ये तो बड़ी खुशी की बात है, तुमने किसके साथ रहने का फैसला किया है ?"

"अभी तो दोनों के तेल की धार देख रहा हूँ—चलो हटाओ जिसके साथ तुम कहोगी उसी के साथ हो जाऊँगा।"

"ऐसे कैसे कहा जा सकता है, काफी सोच विचार कर फैसला करना होगा, इन बातों के लिये तुम एक सलाहकार क्यों नहीं रख लेते हो ?"

"सलाहकार चोट्टी का क्या करेगा, चलो हटाओ वैसे तो मैं और दसों को सलाह दे सकता हूँ, तुम कहती हो तो सलाहकार भी रख लेंगे, बताओ किसे रक्खें ?"

"कोई पालिटिक्स और कानून का अच्छा जानकार होना चाहिये।"

रम्भा कुछ बात करने के मूड में दिखाई दी। सोफे पर बैठते हुए लाला बोले—

"कहो तो कुंजीलाल से ये काम भी ले लिया करें, दो सौ महीन उसे इन्कमटैक्स की सलाह के लिये देते हैं सो इसके लिये भी दे दिया करेंगे।"

"अरे वह खूसट पालिटिक्स क्या जाने, कहो तो मैं ढूंढ़ दूं ? ढाई तीन सौ कम से कम देने पड़ा करेंगे ?"

"दे देंगे, पर सलाहकार के नाम पर नहीं, तुम्हारा शौक पूरा करने के लिये।"

"इसमें मेरा क्या शौक पूरा होगा, उससे सलाह लेकर असेम्बली के मेम्बर तुम बनोगे या मैं ?"

"तुम्हें बनवा दूं ?"

"बनवाया, चार पैसे खर्चे के लिए मांगती हूँ तो.......।"

"चाहे जितना लो, इधर आओ।"

रम्भा सोफे पर आकर बैठते हुए बोली—"लाओ क्या दे रहे हो, चलो एक हजार ही दे दो।"

"दे दूँगा। पहिले उठकर दरवाजा बन्द कर दो।"

रम्भा ने मुस्कराते हुए छदम्मीलाल की तोद पर हल्की-सी चपत (या जो कुछ कहिये) जमाते हुए कहा—"बस जोश आ रहा है। पचीस सीढियाँ चढ़े तो हाँफ रहे हो, अगर आधे मिनट को ये गढ़ भी फतह करने की सोची तो क्या हाल होगा ?"

इस प्रकार की बातें छदम्मीलाल अकसर सुनते थे। किन्तु आज उन्हे अपने पुरुषत्व का घोर अपमान प्रतीत हुआ—"क्या समझ रखा है ?" कुछ झोंझ-सी मे आकर उन्होंने कहा।

"जो पहिले समझा था वही समझ रही हूँ, लाओ चैक दे दो। चैक बुक तो है ना जेब में ?"

"हाँ है, पर इस तरह चैक नही मिलेगा।"

"हूँ बडी ऐंठ है, अच्छा रात को सही निकालो चैक बुक।"

"चैक बुक भी रात को निकलेगी।"

"देखो।" स्नेह मिश्रत मीठे स्वर मे रम्भा ने कहा—"मुझे क्लब जाना है। काफी देर हो गई है, और भी देर हो जायगी लाओ चैक दे दो।"

"एक हजार यूँ ही पैदा नहीं होता है, लेना है तो देर भी लगानी पड़ेगी।"

'लालाजी।" बाहर से पहाडी लडके ने पुकारा।

"क्या है वे ?"

दरवाजे के सामने आकर लड़के ने कहा—"लाला सॉवलदास आये हैं।"

लाला की तबियत कुछ खट्टी-सी हो गई, सांवलदास के आगमन की सूचना ने उसमे ढेरों चीनी की बोरियाँ मिला दीं।

"छदम्मीलाल खरा ब्योहार रखता है, इस हाथ दो उस हाथ लो।" उठकर चलते हुए लाला ने कहा।

रम्भा सोचती रह गई कि उसका ब्याहता पति दिनो दिन काबू से बाहर निकलता जा रहा है।

११

कितने अचरज की बात है कि दिल्ली में नव्वन को प्रेम से अच्छा दूसरा दोस्त नहीं मिला। रात में एक बार दोनों अवश्य मिलते। दूकान से छुट्टी पाकर प्रेम सीधा घर पहुँचता, खाने आदि से निवृत होकर वहाँ से चल पड़ता। सीधी सड़क न चलकर प्रेम लाल कुँआ मुहल्ले की गलिओं के चक्कर काटता हुआ एकदम चांद बिल्डिंग के पीछे निकलता। नीचे पंजाबी की होटल में नव्वन उसकी प्रतीक्षा करता होता।

न जाने कौन से भय की अज्ञात आशंका के कारण नव्वन प्रेम को वहां ठहरने नहीं देता था, उसे देखते ही उठ खड़ा होता।

दोनों हौजकाजी की ओर चल पड़ते, रास्ते भर बातें होती रहती। धीरे-धीरे चलते हुए दोनों जामा मस्जिद पहुँचते, लगभग एक घंटा दोनों मस्जिद की सीढ़ियों पर बैठते कभी-कभी जब कोई लम्बी बात चल

पड़ती तो दो घंटे भी हो जाते, नब्बन प्रेम को अक्सर उर्दू के शायरों के बारे में बताता, कभी एक आध शेयर अथवा गजल भी सुना देता। प्रेम अक्सर अपनी दिनचर्या का दिलचस्प किस्सा सुनाता रहता था, कैसे-कैसे व्यापारी आज दूकान पर आये ? कपड़े की मार्केट में किस तरह धीरे-धीरे मंदी आ रही है इत्यादि। कभी-कभी प्रेम अठारह सौ सत्तावन के गदर का किस्सा छेड़ देता—उसने इस विषय पर ख्वाजा हसन निजामी की लिखी हुई कई किताबें पढ़ी थीं। गदर का किस्सा वह इतने सुन्दर ढंग से सुनाया करता था मानो उसने स्वयं अपनी आंखों से डगलस और फ्रेजर की मौत देखी हो—फिरंगी फौज के अत्याचार का सजीव वर्णन सुनकर नब्बन स्तब्ध रह जाता।

कई दिन से प्रेम का आग्रह था कि नब्बन उसे अपने विगत जीवन के बारे में विस्तारपूर्वक सुनाये। किन्तु नब्बन उस बात को यूँ ही उड़ाकर कोई और बात छेड़ देता।

आज भी चांद बिल्डिंग से अजमेरी गेट तक प्रेम अपनी दिनचर्या सुनाता आया। अजमेरी गेट की बगल से गुजरते हुए नब्बन ने नई बात छेड़ दी—"प्रेम साहेब गदर से पहिले का भी अजीब माहौल होता होगा, उस वक्त दिल्ली तो दरवाजे के अंदर ही होगी। जहाँ आज दिल्ली का शर्मनाक बाजार यह जी० बी० रोड है किसी जमाने में यहाँ दिल्ली की खामोश फसीलें होंगी ?"

बस बात चल पड़ी, प्रेम उस समय की दिल्ली और उसके मुहल्लों का दिलचस्प वर्णन करने लगा।

बात का अर्धं-सा विराम उस समय हुआ जबकि दोनों कुछ ऊपर चढ़कर एक ओर एकांत में जामा मस्जिद की ऊपर वाली सीढ़ी पर बैठ रहे थे।

"देखिये भाई साहेब, आज आपको अपनी आप बीती सुनानी होगी, लगातार कई दिन से आप टालते आरहे हैं।"

"ताज्जुब है प्रेम साहेब, निहायत ही बेहूदा रही है मेरी जिन्दगी, न

बेकार वक्त जाया करने की जिद आप क्यों कर रहे हैं ?

"आज मैं कुछ नहीं सुनूंगा जनाब, बस आप शुरू कीजिये ।"

"लेकिन ·······।"

"शुरू कीजिये, और देखिये सारी बातें पूरी-पूरी सुनायेगा, मैं जानता हूं कि जो कुछ भी मैं सोचता हूं वह सही है। फिर भी आपकी दास्तान मेरे यकीन को और भी पुख्ता करेगी ।"

"क्या सोचते हैं आप ।"

"बाद में बताऊँगा, पहिले आप सुनाना शुरू कीजिये ।"

कुछ क्षण नब्बन चुप रहा । उसकी निगाहें मस्जिद के नीचे बाजार की चमकती हुई रोशनी को निहारती हुई दूर अँधेरे में क़िले की फ़सीलों के पार ऊँचे खम्बों पर लगी लाल रोशनी पर अटक गईं ।

"प्रेम साहेब ।" दीर्घ निश्वास लेकर नब्बन ने कहा—"मैं लखनऊ में ही पैदा हुआ था । घर का इकलौता बच्चा था, दादी और माँ कितनी ज्यादह मुहब्बत मुझसे करती थीं जिन्दगी का ये रोशन पहलू मुझे आखिरी वक्त तक याद रहेगा । हमारी एक बहुत बड़ी लेकिन मरम्मत के बिना खस्ता हालत में एक हवेली थी जिसमें हम रहा करते थे । बचपन में दादी ने बहुत-सी कहानी क़िस्सों के साथ अपने भरे-पूरे खानदान के भी क़िस्से सुनाये थे । वे कहा करती थी कि उनके ससुर यानी मेरे पड़-बाबा बहुत बड़ी जागीर के मालिक थे, नवाब के दरबार में उनकी बहुत बड़ी इज्जत थी, लेकिन सब कुछ फिरंगी ने लूट लिया । फिर भी, दादी शान से अपनी झुकी हुई कमर सीधी करके कहा करती थी कि मेरे मर-हूम बाबा साहेब कभी घर से बिना पालकी या घोड़े के नहीं निकले । मौजूदा हालत के बारे में दादी ने कभी नहीं बताया, लेकिन जब मैं कुछ सयाना हुआ तो समझा कि घर का ठाट से चलने वाला खर्च दादी के पिटारे में रक्खे सुनहरी जेवरों को बेचकर चलाया जाता है । अब्बाजान दोपहर को घर से बाहर निकल जाया करते थे और आधी रात के बाद

लौटते थे लेकिन महज़ सैर तफरीह के लिये ही—नवाब के खानदानी भला रोज़गार कैसे कर सकते थे।

क्षण भर को नवाब रुका और बोला—"देखते-देखते दादा के ज़ेवर भी खतम हो गये। अलबत्ता माँ के शरीर पर अब भी कुछ ज़ेवर थे। इसी दौर में दादी जहान छोड़कर खुदा को प्यारी हुई। हजारों रुपया उनकी मौत पर खर्च हुआ, ये रुपये कहाँ से आये ये मुझे कुछ दिन बाद मालूम हुआ, जब मैं मैट्रिक का इम्तहान देकर खुशी-खुशी लौटा आ रहा था—जब सारा राज समझ में आ गया। हवेली पर भीड़ इकट्ठी थी, मनहूस नगाड़ा पीटा जा रहा था। मनहूस नवाब गौस खाँ की हवेली के पच्चीस हजार"""""पच्चीस हजार एक, पच्चीस हजार दो"""""। हवेली गई और साथ-साथ माँ को भी ले गई। बे-आबरू होकर हवेली से निकलने का गम माँ एक हफ्ते से अधिक बरदाश्त न सकी। माँ चली गई, हवेली बिक गई, कर्जा चुक गया कर्ज़दारों का, लखनऊ के कोने में एक छोटा-सा मकान किराये पर लिया गया। हवेली में से कुछ बरतन उसमे रख दिये गये। अब्बाजान का अब भी पहिले जैसा ही रवैया रहा, सुबह दस बजे उठना, बारह बजे घर से निकल जाना। रात के बारह बजे लौटना।"

"इतना कहकर नव्वन फीकी हँसी हँसा।"

"आगे?" प्रेम ने अधीरता से कहा।

"तब, मैंने उस मनहूस जिन्दगी का रुख बदलने की कोशिश की प्रेम साहेब, एक हफ्तावारी अखबार में पचास रुपये महीने की नौकरी कर ली। जिन्दगी में एक बहाव आया, अच्छे और नेक आदमियों की सोहबत मिली, शायरी का शौक पैदा हुआ। शेर और गजलों में दिमाग मसरूफ रहने लगा। पुरानी जिन्दगी की वाहियात ख्वाहिशें दिमाग से निकलने लगीं नई जिन्दगी थी"" नये नक्शे थे अपनी जिन्दगी के आने वाले जमाने के बारे में, कि एक रोज""""""."

""""""""""""""""""""""

प्रेम ने नव्वन की ओर देखा नव्वन मुस्कराते हुए बोला—"एक रोज निहायत ही आवारा किस्म के दो इन्सान मुझे तलाश करते हुए अख़बार के दफ्तर में पहुंचे। शाम का वक्त था छुट्टी करके मैं वहां से चलने ही वाला था। उन लोगों ने कहा कि तुम्हारे अब्बा साहेब ने तुम्हें बुलाया है। उनके साथ गया—जानते हो कहाँ ?" चौक पर। लखनऊ का जी० बी० रोड़। जहाँ यहाँ की तरह रात को जबरन खुशआमदीन कहने वाली बदनसीब औरतें सज और सँवर कर ग्राहकों के इन्तजार में बैठी थी। चौक के नुक्कड़ पर पहुंचते ही उन भले इन्सानों में से एक ने बताया, बरखुरदार तुम्हें हम लोग इसलिये बुलाकर लाये हैं कि तुम अपने अब्बा की लाश को आखिरी सलाम कह सको। अभी वह तुम्हें याद करते हुए इस जहान से कूच कर गये हैं। जानते हो प्रेम साहेब अब्बा जान क्यों मरे ? जरूरत से ज्यादह शराब पी गये थे। यह देखकर मैं दंग रह गया कि अब्बा मियाँ चौक में रास्ता चलते नहीं मरे बल्कि एक तवायफ के कोठे पर उन्होंने दम तोड़ा था। खैर उन्हें माँ और दादी साहेबा की कब्र पास ले जाकर लिटा दिया गया। दूसरे दिन उसी तवाइफ ने जिनके कोठे पर अब्बाजान ने यह दुनिया छोड़ी थी, मुझे फिर बुलाया। कहने लगी, बेटा तुम्हारे अब्बा से मेरे सोलह साल के ताल्लुकात थे, खुदा उन्हें जन्नत दे, बड़े अच्छे थे बेचारे। हमेशा जो भी मैंने माँगा वही दिया। अब मेरा फर्ज है कि तुम्हें अपने जीते जी किसी किस्म की तकलीफ न होने दूं। किसी चीज की जरूरत हो तो फौरन मेरे पास चले आना। मुझे भी उसी तरह समझना जैसे अपनी मरहूम मां को समझते थे....।"

"कोई भली औरत थी।"

"मुमकिन है भली हो, मैंने कभी उसके पास खुद जाना अच्छा नहीं समझा। लेकिन हर हफ्ते वो किसी न किसी को मुझे बुलाने भेज ही देती थी। मजबूरन जाना पड़ता, बड़ी मुहब्बत से मेरे सामने मिठा यों का ढेर कर देती, बार-बार खाने का इसरार करती, यहां तक कि खिला कर छोड़ती। कई बार उसने मुझे रुपये भी देने की कोशिश की लेकिन

तब तक मैं वह नहीं था जो आज हूँ, कभी मेरी गैरत ने यह गवारा नहीं किया कि उसका एक पैसा भी अपनी जेब मे डालूँ। प्रेम साहेब, अब मैं अपने बुजुर्गों की बरबादी का राज समझ गया था। फिरंगी ने हमे लूटा ? दादी यह बात बड़ी ही मासूमियत से कहा करती थी। दादी भी औरत जात ही तो थी औरत जो मर्द के फरेब मे बहुत जल्द आ जाया करती हैं। वरना हकीकत मैंने अब देखी—नवाबजादों की औलादों को उनकी अपनी वासना की भूख ही उन्हें चौक के हाथों भिखारी बना देती है। किसने देखा है कि तलवार की झनकार मे ही काँप जाने वाले नवाबजादों को फिरंगी ने लूटा हो। लेकिन लखनऊ के चौक में मैंने उन्हें औरतों के हाथों लुटता देखा है। उन औरतों के हाथो जो बेशुमार लूट के माल से मालामाल होकर भी जिन्दगी की असल खुशी कभी नही पाती।"

"· ·······" प्रेम तन्मय होकर सुन रहा था।

"बात कहीं की कहीं पहुँच गई प्रेम साहेब, आप कह रहे थे ना कि वह कोई भली औरत थी। दरअसल उस भली औरत के यहाँ का रास्ता जानकर ही आज मैं एक शरीफ इन्सान से तवाइफ का दल्लाल बन गया हूँ। मैना जो मेरे साथ है उस औरत के बराबर वाले कोठे पर तभी बैठाई गई थी। कुछ दिन तो यूँ ही दुआ सलाम चलती रही इससे, लेकिन एक रात············उफ।" भूतकाल की स्मृति से कुछ चौंकते हुए नब्बन ने कहा—"दिल को बहुत रोका लेकिन मैना की मासूमियत और अजीबो-गरीब मुहब्बत ने ऐसा कैद किया कि आज तक छुटकारा नही पा सका हूँ। मुहब्बत के पहिले दौर में अक्सर मैं सोचा करता था कि एक दिन मैना अपनी बेहूदा और शर्मनाक जिन्दगी से ऊबकर खुद ही कहेगी कि मुझे इस जहन्नुम से निकाल घर-बार की दुनियाँ मे ले चलो। लेकिन ये बेवफा जैसे ही अपनी सरपरस्ती की कैद से आजाद हुई; मुझे मुहब्बत के फर्ज और कायदे बताने लगी और धीरे-धीरे मुझे मजबूर कर दिया कि मैं उसका प्रेमी हूँ—इस जुर्म में उसे दूसरो के हाथ बेचने वाला दल्लाल बनकर सजा पाता रहूँ।"

"लेकिन भाई साहेब, कभी आपने भी अपने प्रेम के नाम पर उससे यह सब कुछ छोड़ने को कहा ?"

नब्बन मुस्कराया—"उसकी समझ में ऐसी बातें महज़ हवाई हैं, वह समझती है कि वह एक तवायफ है और तवायफ ही रहेगी।"

"कुछ भी हो आपको उसे मजबूर करना चाहिये कि वह आपके प्रेम के खातिर यह पेशा छोड़ दे।"

"मैं उसे जिन्दगी भर मजबूर नहीं करूंगा। उसने मुझे अपनी मुहब्बत दी और कैसे भी कहिये मैंने उसे मंजूर किया।

अब मैं अपनी मुहब्बत को अपनी आरज़ू का शिकार नहीं बनाऊँगा। उसका सिर्फ इतना ही कह देना कि, नवाब साहेब मैं सिर्फ तुम्हारे लिये ही जी रही हूँ, मेरी मुहब्बत की तमाम हसरतें पूरी कर देता है। प्रेम साहेब, शायद मैंने आपको बताया नहीं कि मेरा नाम नवाब हुसेन है, लेकिन इस ज़लील पेशे ने मुझे सिर्फ नब्बन ही कहलाने के लिये मजबूर कर दिया है।"

कुछ देर प्रेम चुप रहा। फिर बोला—"भाई साहेब, मैं जो सोचता था वह सही निकला। आप जैसे बड़े दिल के मालिक दुनिया में बहुत कम होते है।"

"अरे साहेब छोड़िये, क्या मैं और क्या मेरा दिल। मेरे जैसे ज़लील इन्सान इन्सानियत के नाम पर दाग़ है। चलिये कहीं बैठकर चाय पियेंगे, आपकी जिद की वजह से मजबूरन इतना वक्त बेकार हुआ, न जाने इस मनहूस किस्से को सुनने का आपको इतना शौक कहाँ से पैदा हो गया था।"

प्रेम ने केवल मुस्कराकर नब्बन की बात का प्रतिवाद किया।



१२

राज वैद्य पण्डित घूरे गुसाईं यह अफवाह सुनकर सन्न रह गये कि जनसंघ वाले इस इलाके से असेम्बली की मेम्बरी के लिये छदम्मीलाल को खड़ा कर रहे हैं। एक बारगी उनके हाथों के तोते उड़ गये। गूदड़ उन्हें ऐसी करारी मात देगा, ऐसा तो उन्होंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था।

सवाल छदम्मीलाल के सधी डेलीगेट हो जाने का नहीं था सवाल एक मोटी आसामी के हाथों से निकल जाने का ही था, सवाल गुसाईंजी की इज्जत आबरू का था—कुछ दिन पहिले अपने चेले चाटों के सामने गुसाईंजी ने बड़े ठसके से घोषणा की थी कि—'गूदड़ के बने बनाये आसामी फकीरा वाल छदम्मी को केवल चरणों की धूल देकर चेला बना आया हूं।

गुसाईंजी की लम्बी नाक के जड़ से कट जाने वाली वात थी कि
ा दीक्षा प्राप्त चेला एकदम गुरु को गुड़ वनाकर खुद शक्कर वन
। इससे भी वढ़कर डूब मरने वाली वात यह थी कि इस फिजूल-
वात के उलट पड़ जाने के कारण अब वह कथित असली घी का
ापारी गूदड़ जो गुसाईंजी की महान प्रतिभा के सामने सिर नीचा करके
चलता था— अब ऊँट की-सी गर्दन वनाकर चलेगा।

अफवाह सुनते ही गुसाईंजी ने छदम्मीलाल को छानते-छानते आखिर घी की फैक्टरी में पा लिया था। सारे दिन इधर से उधर वह किराये के के टांगे में भटकते रहे थे और केवल एक वात ही सोचते रहे थे कि छदम्मी को गूदड़ की जेव से कैसे साफ करना होगा। किन्तु जब अफवाह की पुष्टि करते हुए छदम्मीलाल ने एकदम विना लाग-लपेट वाली वात कह दी—"चाचा, गूदड़ मामा की मुझे ज़रा भी परवाह नहीं है। मजवूरी यह है कि सवके सव व्यापारी पीछे पड़े हैं कि असेम्वली का मेम्वर ज़रूर वनना पड़ेगा। तुम जानो व्यापारियों से दिन-रात का काम ठहरा उनका कहा तो रखना ही पड़ेगा। अव जैसे तुम कहोगे वैसे ही करने को तैयार हूँ।"

गुसाईंजी वेचारे क्या कहते, क्या उसे अपने मुहले का कांग्रेस टिकट दिलवाकर खुद अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारते, दीनता की मूर्ति वनकर गिड़-गिड़ाते हुए केवल उन्होंने इतना ही कहा—"वेटा, मैं तो सव कांग्रेसियो से तुम्हारे कांग्रेस में आने की वात कह चुका था, अव किस तरह उ मुंह दिखाऊंगा। मेरे सफेद वालों की तो किसी तरह इज्जत वचानी होगी, मैम्वरी सुसरी का क्या......?'

गुसाईंजी के घड़ियाली दाव को वीच से ही काटते हुए छदम्मी वोल उठे—"कुछ नहीं है चाचा, जानता हूँ कि सुसरी में रांडा ि के सिवा कुछ भी नहीं है, पर वाजार वाले जाने क्या समझ वैठे तरह मजवूर कर रहे हैं मानो अगर मैं असेम्वली का मैम्वर न सवका दिवाला निकल जायगा। वहुतेरा समझाया पर मानते ही

मैंने तो यहाँ तक कह दिया है कि मैं इसमें एक पैसा भी खराब नहीं करूँगा, पर वह कहते है कि जो कुछ भी खर्च होगा सब हम कर देंगे। अब तुम्ही बताओ क्या करूँ।"

बया उत्तर देते गुसाईंजी बेचारे यह कहकर उठ आये—"छदम्मी बेटा जल्दी मत करना, तुम्हारा काम मेरी आबरू बचाकर बनें, इसी में मजेदारी है।"

यूँ छदम्मीलाल ने गुसाईंजी से दिवाली तक चुप रहने का वायदा किया था। किन्तु दूसरे दिन ही छदम्मीलाल की बन्द हवेली खुल गई। दरवाजे पर पीले कपड़े पर काली स्याही से लिखा हुआ था 'चुनाव क्षेत्र नं० X का कार्यालय, भारतीय जनसंघ।'

सूनी हवेली तीन दिन मे ही गुलजार हो गई। रसोई में चूल्हे की जगह भट्टी बनाई गई, और *अखण्ड यज्ञ की परम्परा का पालन होना* आरम्भ हुआ, चौबीसों घण्टे भट्टी मे न केवल आँच बनी रहने लगी बल्कि कढ़ाई और हलवाई भी दिन-रात हवेली मे जमे प्रचारक और स्वयं-सेवकों के पेट की सेवा के लिये तत्पर रहने लगे।

"हवेली के सबसे सुन्दर और बड़े कमरे मे जनसंघ के लिये जन्म-जन्म से उधार खाकर बने कोई बिहारी गो-सेवक स्वामी घसीटानन्द अपने चार शिष्यों सहित आ जमे थे। आज सुबह तीन चार सौ स्वयं-सेवकों को पीछे लेकर उन्होंने चुनाव-क्षेत्र के सभी घरों का दौरा किया। हर घर मे जाकर स्वामी जी कह रहे थे—"धर्म के नाम पर भिक्षा माँगने आया हूँ, अनाज, रुपया पैसा, मुझे कुछ नहीं चाहिये।" सामने के व्यक्ति की अंजुली मे कमंडल से पानी डालकर घसीटानन्द गम्भीर स्वर में रौब डाल देते—'*गंगाजल तुम्हारे हाथ में है*, हृदय से प्रतिज्ञा करो कि हिन्दुओं के देश में गोवध नहीं होगा।"

व्यक्ति पर एक ओर कुछ भी भिक्षा न लेकर भिक्षा पा जाने वाले सफाचट स्वामी का रौब, दूसरी ओर घर से बाहर गली मे स्वामीजी की जय, और भारतीय जनसंघ की जय का गलाफाड़ शोर। मुहल्ले में —

जन साधारण, पुरुष और स्त्रियां, एक दिन में ही स्वामीजी के भक्त बन गये।

उधर गुसाईंजी फिकर से पीले पड़े जा रहे थे। दिन-रात उन्हें एक ही चिन्ता खाये जा रही थी, क्या अबकी बार गूदड़मल से मात खानी पड़ेगी ? तसल्ली की बात केवल इतनी थी कि अभी छदम्मीलाल मुहल्ले की तरफ नहीं आया था। परन्तु वह तो आना ही है, आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों।

करें तो क्या करें, गुसाईंजी को रह-रहकर गांधी और जवाहरलाल याद आ रहे थे। गांधीजी बेचारे तो प्रभु के प्यारे हो चुके हैं, रही जवाहर लाल की बात, काश एक बार मुहल्ले में आकर जवाहरलाल तकरीर कर जायें, फिर तो गूदड़ को चित्त हुआ ही समझो। एकदम नींद-सी टूटती, जवाहर लाल मुहल्ले में आकर तकरीर करेंगे ? एकदम सपने की-सी बात, भला जवाहरलाल मुहल्ले में क्यों आने लगे। वह बोलेंगे रामलीला-ग्राउन्ड में, मुहल्ले का कौन उन्हें सुनने वहां जायेगा ?

शाम को बैठक का रंग भी फीका रहा। समस्त उपस्थित चेला समुदाय पर आज स्वामी घसीटानन्द के करतब का आतंक छाया हुआ था, ऊपर से सोने में सुहागा यह मिला कि बैठक (अर्थात् दूकान) के आगे से लगभग तीन सौ व्यक्ति कांग्रेस के खेवनहारों के ठीक दिल पर चोट करते हुए चिंघाड़ते निकल गये—"कौन करेगा देश अखंड ?" भारतीय जनसंघ। कौन·········।

गुसाईंजी के अंतर में मानो विष का प्रवेश हो गया। आत्मा कलुषित हो गई, होंठ इस प्रकार अकड़ गये मानो अफीम और तेल घोलकर पिया हो—"···हूं। आए साले देश अखंड करने !" जुलूस के गुजर जाने के तुरन्त बाद ही जल-भुनकर कोयला बने गुसाईंजी बोले—"अच्छे-अच्छे देखे हैं हमने, लौंडों से हाय तौबा मचवा कर चुनाव नहीं जीता जाता है। गूदड़ के बच्चे को यह पता नहीं है कि किसी ऐले-मैले से नहीं गुसाईं से पाला पड़ा है, बच्चू की जमानत तक जब्त न कराई तो···।"

"पर वैद्यजी, अब तो गूदड़मल को बजाय लाला छदम्मीलाल को खड़ा किया जा रहा है।" बैठक में बैठे चेले समुदाय में से एक ने यह बात कहकर गुसाईंजी की कल्पना के महल को धराशायी करते हुए उन्हें पुनः वास्तविकता के रेगिस्तान में ला खड़ा किया।

"तुम लोग तो बेकार ही बात का बतगड़ खड़ा किए दे रहे हो। तुमसे बीस दफा कह चुका हूँ कि जब तक मैं हूँ छदम्मी को संघियों में नहीं जाने दूंगा।" कुछ तुनककर गुसाईंजी बोले।

"तो क्या छदम्मीलाल से मिले थे ?" एक अन्य अधेड़ उम्र के व्यक्ति ने प्रश्न किया।

"हम सुसरे से क्यों मिलेंगे, सत्रह दफा गर्ज होती तो वह खुद आकर नाक रगड़ेगा।" कहने को गुसाईंजी जो मन में आ रहा था कहे जा रहे थे, किन्तु दिमाग उनका भी कुइक मार्च कर रहा था। गूदडमल, छदम्मी लाल और स्वामी घसीटानन्द की स्मृति के भूत लगातार उनकी आँखों के सामने ताण्डव नृत्य करते प्रतीत हो रहे थे।

गुसाईंजी उठे, इसका अर्थ था कि सभा विसर्जित, खड़े-खड़े एक बार फिर चेले-चपाटों को धीरज बंधाते हुए कहा—"बस अब दीवाली का त्यौहार मनाकर तुम सब भी पिल पड़ो, घबराने की कोई बात नहीं है। जब तक मैं हूँ किसी तरह भी संघियों की दाल इस मुहल्ले में नहीं गलने दूंगा।"

शायद गुसाईंजी के शब्दों ने सबको सांत्वना प्रदान करदी हो। किंतु अभी तक उनके हृदय की व्याकुलता का निदान नहीं हो पाया था। बिस्तरे पर जा लेटे। घर के समझे कि थके मांदे थे सो गए हैं। किन्तु गुसाईंजी को नींद कहाँ""""गूदड़मल, छदम्मीलाल और घसीटानन्द, गऊरक्षा और श्यामाप्रसाद मुकर्जी ?

गुसाईंजी चाहते थे कि नींद आ जाये। किन्तु, कौन करेगा देश अखण्ड,""""जनसंघ। नेकर पहिने जाने कहाँ से इकट्ठे किए लौंडे, दढ़ियलगुरु गोलवलकर। एक के बाद एक बनने वाले परेशानी भरे

नजारे, आँख मूंदते ही उन्होंने ऐसा प्रतीत होता था मानो लड़के गला फाड़-फाड़कर चिल्ला रहे हैं···कौन करेगा देश अखण्ड······। हत्ते री वहशत की ऐसी-तैसी।

विस्तरे के ठीकसामने लगी जापानी दीवार घड़ी टिक-टिक करती हुई अपनी चाल से चली जा रही थी। साढ़े दस पौने ग्यारह, ग्यारह, साढ़े ग्यारह·········बारह। नींद का अब भी नाम नहीं था।

अचानक कुइक मार्च करते हुए दिमाग में चारों ओर प्रकाशपुंज जल उठे।·········यही रहेगा। ओह क्या इतना बड़ा त्याग करना होगा—दिल के मीठे-से दर्द को दबाते हुए गुसाईंजी ने बुद्धि द्वारा दिखाये हुए मार्ग को स्वीकार किया।

उसके बाद नींद आ गई।



१३

एक चिकने चुपड़े खूबसूरत जवान को लेकर रम्भा लाला छदम्मीलाल के हुजूर में हाजिर हुई।

"लीजिये, आपके लिए ऐसे सलाहकार को लाई हूँ कि पूरे हिन्दुस्तान में इनका जवाब नहीं मिलेगा। मिस्टर सुन्दरलाल बी० ए० एल० एल० बी० बार एट लॉ, और यह हैं मेरे *हसबैंड (पति)* छदम्मीलाल मिल ओनर और दिल्ली के बड़े कपड़े और लोहे के व्यापारियों में से एक।"

दिखावट के लिए छदम्मीलाल ने दांत अवश्य निपोर दिये। किन्तु मन ही मन आगन्तुक के विषय में सोच रहे थे कि यह फिल्मी ऐक्टर है या वकील ?

"देखिये मिस्टर श्यामसुन्दर, इनका काम आपको करना ही होगा आप पाँच सौ महीना चाहते हैं—हटाइए पाँच सौ ही मिल जायेंगे।"

पाँच सौ, मन ही मन छदम्मीलाल कुड़मुड़ाकर रह गये। पाँच सौ– हराम के आते हैं क्या यहाँ,"……। मन ही मन लाला भुने जा रहे थे।

रम्भा की ओर देखते हुए मिस्टर सुन्दरलाल कह रहे थे—"रुपये-पैसे की बात छोड़िये, आपकी आज्ञा का पालन तो करना ही होगा।"

"नहीं नहीं, वाह तो क्या हम आपसे अपना काम मुफ्त करायेंगे। सेठजी को यह बात कतई पसन्द नहीं है कि किसी से कोई मुफ्त काम कराया जाय क्यों सेठ जी ?" रम्भा ने तिरछी चितवन से छदम्मीलाल की ओर देखते हुए कहा।

सेठजी कोई गधा अथवा भैंसा नहीं थे कि दिमाग में चौपाओं के बराबर केवल आठ बटा चार बुद्धि हो। यह इन्सान के, और इन्सानों में भी दूध पीते बच्चे नहीं थे बल्कि भारी भरकम पूरी आठ बटा आठ बुद्धि वाले पूर्ण विकसित पुरुष थे। सुन्दरलाल और रम्भा की मिली भगत वह ताड़ चुके थे; किन्तु मजबूरी यह थी कि स्वयं उनकी ब्याहता बीवी उन्हें उल्लू बनाने का प्रयन कर रही थी। फलस्वरूप दिमागी क्रोध की लगाम खींचनी पड़ी और हृदय की टीस को अन्दर ही अन्दर दबाते हुए उन्होंने कहा—"हाँ, हाँ, मुफ्त में काम कराने का क्या सवाल है। उठिये मिस्टर सुन्दरलाल, रम्भा तुम महाराज से इनके लिए चाय तैयार करने को कहो।"

छदम्मीलाल का दांव कारगर रहा। रम्भा का इरादा था कि जब वक्त छदम्मीलाल अपने मुंह से सुन्दरलाल की तनख्वाह पाँच सौ स्वीकार नहीं कर लेंगे तब वक्त वह यही रहेगी। किन्तु अब तो बात ही दूसरी थी, सुन्दरलाल से लाख दोस्ती सही, घर आये मेहमान के जलपान की तैयारी की अवज्ञा तो सचमुच शिष्टाचार के खिलाफ थी। रम्भा को जाना ही पड़ा।

"बैठिये ना।" सुन्दलाल को बेठाने का आदेश देते हुए छदम्मीलाल ने मालिकाना अन्दाज में कहा—"रम्भा ने आपको आपके काम के सिलसिले में बताया होगा। आपको इसलिये रक्खा जा रहा है कि जनसंघ और कांग्रेस की शहर में क्या हालत है, इसकी जांच जल्दी से जल्दी करके

बतायें कि असेम्बली के लिए किसके टिकट से खड़ा होना अच्छा रहेगा।"

"जी।" सुन्दरलाल बोले।

"बुरा मत मानना, मैं साफ बात कहने का आदी हूँ। आपका काम चुनाव खत्म होने तक रहेगा। लेकिन आपकी योग्यता पर निर्भर है कि आप बाद में भी अपनी जगह कायम रक्खें। भगवान् की दया से बहुतेरा कारोबार है। लायक आदमी के लिये बीसियों जगह निकल सकता है।"

"जी।"

"अपना काम आप आज से ही शुरू कर सकते हैं। देने-लेने का फैसला बाद में होता रहेगा। जैसा काम होगा उससे चार पैसे ज्यादह ही तनख्वाह लगाई जायगी।"

"जी रुपये पैसे की आप चिन्ता न कीजिये, मुझे अपनी योग्यता पर विश्वास है। जब काम अच्छा होगा तो आप खुद ही ख्याल रखेंगे।"

तभी रम्भा आ गई। ''''''और ऐसी झपटकर आई मानो दो मुर्गों के आपस में झपट पड़ने का अंदेशा हो। उसका धड़कता हुआ हृदय तभी शान्त हुआ जब उसने मिस्टर सुन्दरलाल और लाला छदम्मीलाल को यथा स्थान बैठे देख लिया।

"वाह लालाजी।" सोफे पर छदम्मीलाल से एकदम सटकर बैठते हुए रम्भा बोली—"क्या तुम्हारे सारे काम मुझे ही करने पड़ा करेंगे। मैं नहीं थी तो तुम्हारे सलाहकार तो सामने बैठे थे। इन्हें इनका काम समझा दिया होता?"

लाला के जख्मी दिल पर रम्भा की बांह का स्पर्श मरहम का काम कर रहा था। गद्गद् होते हुए लाला ने कहा—"अरे पहिले इन्हें चाय वाय पिलवाओ, रहेंगे तो धीरे-धीरे सब कुछ समझ जायेंगे।"

रम्भा को खुशी हुई कि गाड़ी लाईन पर चल रही है। वरना वह धड़कता हुआ दिल लेकर महाराज को चाय लाने के लिये कहने गई थी।

चाय आगई, चाय के साथ ढेरों नाश्ता भी था। चाय का दौर चल ही रहा था कि दरबान ने आकर सूचना दी कि लाला गूदड़मल आये हैं।

"वुलाओ।" चाय की अन्तिम घूंट गटकते हुए लाला वोले—"लो सुन्दरलालजी अव तुम्हारी लियाकत देखनी है। ये जनसंघ वाला मा है, एक तो वह उसे क्या कहते हैं···'प्रार्थना-पत्र माँगेगा टिकट देने लिए'···· हो सकता है कुछ रुपया भी माँगे। लेकिन एकदम वैरंग भेजना है। क्यासमझे वैरंग'·····।"

लाला गूदड़मल के आतिथ्य में छदम्मीलाल खड़े हो गये, रम्भा सोफे से उठकर, सिर पर साड़ी का पल्ला डालकर एक ओर खड़ी हो गई। दोनों को अटेन्शन खड़े देखकर इच्छा न होते हुए भी सुन्दरलाल भी जम-हुई लेते हुए उठ खड़े हुए।

"आओ मामा आओ।" छदम्मीलाल ने हाथ जोड़कर तनिक सिर झुकाते हुए कहा—"अभी तुम्हारी ही वातें हो रही थीं। सुन्दरलालजी यह मेरे मामा गूदड़ घी वाले हैं, और मामाजी यह मिस्टर सुन्दरलाल हैं मेरे नये प्राईवेट सैक्रेटरी।"

तभी रम्भा ने भले घर की वहू का अभिनय करते हुए गूदड़मल के चरण स्पर्श किये। उत्तर में गूदड़मल ने पुत्रवती होने का आशीर्वाद दिया।

"छदम्मी वहुत लापरवाही हो रही है तुम्हारी तरफ से, न अभी तक प्रार्थना-पत्र भिजवाया तुमने, और न मुहल्ले में आकर झाँके। भैया ऐसे चुनाव नहीं जीता जायगा मुकावले पर वह भिखमंगा गुसाईं है, उसका पार तभी पाया जायगा। जव रात दिन एक करोगे।"

सुन्दरलाल उचककर कुछ कह ही रहे थे कि छदम्मीलाल वोल उठे-"वस मामा दो-चार दिन की वात है। यह सुसरे कांग्रेसी तो पल्ला फाड़-कर पीछे पड़े हैं।"

गूदरमल को मानो किसी ने विजली का तार छुआ दिया हो। घिघि-याये स्वर में उन्होंने कहा—"क्या कर रहे हो भैया छदम्मी, यहाँ तो तुम्हारे लिये दिन-रात एक किये दे रहे हैं तीन-चार सौ रुपया रोज ठंडा हुआ जा रहा है और तुम अभी तक कांग्रेसियों में ही चक्कर काट रहे हो। वड़ी मुश्किल से स्वामी को यहाँ वुलवाया है, वरना विहार वाले

उन्हें यहाँ से हिलने भी नहीं देना चाहते थे।"

"बस मामा, सब सुसरों को चार दिन के अंदर धक्का दे दूँगा.......।"

"धक्का देते रहना, जनसंघ के मन्त्री के नाम प्रार्थना-पत्र तुम आज ही लिख कर दे दो।"

"श्रीमान्‌जी साफ बात मैं आपको बताता हूँ, आपका और लालाजी का पारिवारिक सम्बन्ध है।" मौका देखकर छदम्मीलाल पर अपनी योग्यता की धाक जमाने का प्रयत्न करते हुए अब की बार सुन्दरलाल बोले—"यह आप भी नहीं चाहेंगे कि आपके कारण इन्हें किसी प्रकार रुपये-पैसे का घाटा उठाना पड़े। सप्लाई का एक बहुत बड़ा ठेका लालाजी को कांग्रेसियों की मार्फत मिल रहा है, उम्मीद है कल या परसों तक उसकी सारी कार्यवाही पूरी हो जायेगी। इस दौर में अगर कांग्रेसियों को पता चल गया कि लालाजी जनसंघ के टिकट से असेम्बली का चुनाव लड़ रहे हैं तो बिना बात ही लाखों का नुकसान हो जायगा।"

"क्या गुमाईं ठेका दिला रहा है?" छदम्मीलाल की ओर देखकर गूदड़मल ने प्रश्न किया। किन्तु इसका उत्तर दिया सुन्दरलाल ने—"दिल्ली के सभी बड़े-बड़े कांग्रेसी आजकल लालाजी की खुशामद में लगे हुए हैं। आपको इनको तो घर की-सी बात है, मेरी राय में तो कोई हर्ज नहीं है। अगर चार दिन जरा चुप रहने से लाखों का फायदा होता हो तो। यह सही है कि केवल प्रार्थना-पत्र भर देने में कोई नुकसान भी नहीं है। परन्तु दीवारों के भी कान होते हैं, क्या पता खबर उड़ ही जाये, आजकल एक दूसरे के भेदिये ....।"

"तब ठीक है।" गूदड़मल बोले—"फिर चार दिन बाद ही सही, हाँ वह छदम्मी वैसे कोई जल्दी तो नहीं है, परन्तु जरा देख लो। अब तक जो कुछ खर्चा हुआ है, उसका हिसाब मैंने बनवा लिया है।" जेब से लम्बी-चौड़ी हिसाब की फहरिस्त निकालकर छदम्मीलाल की ओर बढ़ाते हुए गूदड़मल ने कनखियों से सुन्दरलाल को देखा।

"अरे मामा तुम तो एकदम गैरों जैसी बात कर रहे हो, म

हाथ के किये खर्चे को भी क्या मैं झूठा समझूंगा।" बड़ी चतुरता-पूर्वक कागज़-पत्र सुन्दरलाल की ओर फेंकते हुए छदम्मीलाल ने पूछा—"कितना खर्चा हुआ है ?"

'यूं तो भैया बड़ी सावधानी से चल रहा हूँ, कुल दो-एक हज़ार का खर्चा हुआ है अभी तक।"

"चैक दे दें इन्हें सुन्दरलालजी ?'

"दो-एक दिन रुक जाइए ना, जाहिर है कि चैक तो इन्हीं के नाम कटेगा। वेकार जरा-सी वात का वतंगड़ वन जाय इससे क्या फायदा ?'

"चैक-वैक की क्या जल्दी है। पैसा कहीं भागा थोड़े ही जा रहा है—फिर देखा जायगा, अच्छा वेटा छदम्मी अव मैं चलूं बहुत से काम पड़े हैं।"

"वैठो मामा, अरे हाँ कुछ चाय-वाय तो मंगाओ।" व्यर्थ ही इधर-उधर झांकते हुए छदम्मीलाल वोले।

'ना भाई ना, वहुत काम है।" उठते-हुए गूदड़मल वोले—"फिर किसी समय मिलूंगा, आगे किस तरह चुनाव का प्रचार करना है, किसी दिन वैठकर इसका कार्यक्रम भी तो वनाना है।"

गूदड़मल जैसे ठंडे-ठंडे आये थे वैसे ही चले गये। रम्भा खुश थी, सुन्दरलाल सोच रहा था कि आसामी पहिले ही दांव में फंस गया है। छदम्मीलाल भी मन ही मन खुश थे, एक तीर से दो शिकार हुए उधर मुफ्त की मगजपच्ची को सुन्दरलाल सम्भालता रहेगा—रम्भा भी खुश रहेगी।

"हाँ भाई।" गूदड़मल को वाहर दरवाजे तक छोड़कर लौटते हुए छदम्मीलाल ने कहा—"सुन्दरलालजी तुम ऐसा करो कि एक वार उस एरिए तक का दौरा कर लो जहाँ से चुनाव लड़ना है, चुनाव तो लड़ना ही है। अव ये तुम देख-दाख कर वताओ कि जनसंघ वालों का वहाँ क्या हाल है, और हाँ वैद्य घूरे गुसाईं से भी मिल लेना।"

"यह तो सव मिलते रहेंगे, पहिले आप यह वताइये कि इनका काम

करने का ढंग आपको पसन्द आया कि नहीं ?" रम्भा बोली।

"तुम क्या अजीब-अजीब बातें किया करती हो, इन्हें काम कराने के लिए लाई थीं या इनके ढंग दिखाने लाई थीं ?"

रम्भा मुस्कराई—"तो अब मिस्टर सुन्दरलाल को यह समझना चाहिये कि उनका काम पक्का हो गया।"

"इनका काम तभी से पक्का था जब से तुमने इनसे काम करने को कहा होगा, क्या मैंने आज तक तुम्हारी किसी पसन्द को नापसन्द किया है। हाँ मिस्टर सुन्दरलालजी, आपका ठिकाना कहाँ है ?"

"जी मैं करोलबाग में रहता हूँ।"

"लेकिन अब तो इन्हें साथ ही रखना होगा, किसी भी वक्त इनकी जरूरत पड़ सकती है ?"

"तो तुम ऐसा करोजी, किसी एक नौकर को साथ ले जाओ और पुरानी दिल्ली की चुनाव एरिये वाली हवेली के एक कमरे में अपना अड्डा जमालो।""""और पूरे चुनाव तक वहीं रहो। ठीक है ना रम्भा ?"

रम्भा क्या उत्तर दे। बुद्धू-सा दिखने वाला उसका ब्याहता पति इतना काइंयाँ है, यह बात आज तक उसने न सोची थी।

हाथ के किये खर्चे को भी क्या मैं झूठा समझूंगा।" बड़ी चतुरता-पूर्वक कागज-पत्र सुन्दरलाल की ओर फेंकते हुए छदम्मीलाल ने पूछा— "कितना खर्चा हुआ है ?"

'यूं तो भैया बड़ी सावधानी से चल रहा हूँ, कुल दो-एक हजार का खर्चा हुआ है अभी तक।"

"चैक दे दें इन्हें सुन्दरलालजी ?'

"दो-एक दिन रुक जाइए ना, जाहिर है कि चैक तो इन्हीं के नाम कटेगा। वेकार जरा-सी वात का वतंगड़ वन जाय इससे क्या फायदा ?'

"चैक-वैक की क्या जल्दी है। पैसा कहीं भागा थोड़े ही जा रहा है—फिर देखा जायगा, अच्छा वेटा छदम्मी अव मैं चलूं वहुत से काम पड़े हैं।"

"वैठो मामा, अरे हां कुछ चाय-वाय तो मंगाओ।" व्यर्थ ही इधर-उधर झांकते हुए छदम्मीलाल वोले।

'ना भाई ना, वहुत काम हैं।" उठते-हुए गूदड़मल वोले—"फिर किसी समय मिलूंगा, आगे किस तरह चुनाव का प्रचार करना है, किसी दिन वैठकर इसका कार्यक्रम भी तो वनाना है।"

गूदड़मल जैसे ठंडे-ठंडे आये थे वैसे ही चले गये। रम्भा खुश थी, सुन्दरलाल सोच रहा था कि आसामी पहिले ही दांव में फंस गया है। छदम्मीलाल भी मन ही मन खुश थे, एक तीर से दो शिकार हुए उधर मुफ्त की मगजपच्ची को सुन्दरलाल सम्भालता रहेगा—रम्भा भी खुश रहेगी।

"हां भाई।" गूदड़मल को वाहर दरवाजे तक छोड़कर लौटते हुए छदम्मीलाल ने कहा—"सुन्दरलालजी तुम ऐसा करो कि एक वार उस एरिए तक का दौरा कर लो जहां से चुनाव लड़ना है, चुनाव तो लड़ना ही है। अव ये तुम देख-दाख कर वताओ कि जनसंघ वालों का वहां क्या हाल है, और हां वैद्य घूरे गुसाई से भी मिल लेना।"

"वह तो सव मिलते रहेंगे, पहिले आप यह वताइये कि इनका काम

करने का ढंग आपको पसन्द आया कि नहीं ?" रम्भा बोली।

"तुम क्या अजीब-अजीब बातें किया करती हो, इन्हें काम कराने के लिए लाई थीं या इनके ढंग दिखाने लाई थी ?"

रम्भा मुस्कराई—"तो अब मिस्टर सुन्दरलाल को यह समझना चाहिये कि उनका काम पक्का हो गया।"

"इनका काम तभी से पक्का था जब से तुमने इनसे काम करने को कहा होगा, क्या मैंने आज तक तुम्हारी किसी पसन्द को नापसन्द किया है। हाँ मिस्टर सुन्दरलालजी, आपका ठिकाना कहाँ है ?"

"जी मैं करोलबाग में रहता हूँ।"

"लेकिन अब तो इन्हें साथ ही रखना होगा, किसी भी वक्त इनकी जरूरत पड़ सकती है ?"

"तो तुम ऐसा करोजी, किसी एक नौकर को साथ ले जाओ और पुरानी दिल्ली को चुनाव एरिये वाली हवेली के एक कमरे में अपना अड्डा जमालो।""""और पूरे चुनाव तक वहीं रहो। ठीक है ना रम्भा ?"

रम्भा क्या उत्तर दे। बुद्धू-सा दिखने वाला उसका ब्याहता पति इतना काइयां है, यह बात आज तक उसने न सोची थी।

१४

सुन्दरलाल जीवन की महत्वपूर्ण बाजी हार चुके थे, अलबत्ता दिल अभी जवान था जो निरन्तर हिम्मत बंधाता रहता था।

सुन्दरलाल के पिता किसी जमाने में साधारण परचून की दूकान किया करते थे, किन्तु कुल नेकनाम था, खानदान में कोई दाग धब्बा नहीं था। यह बातें आज से पन्द्रह साल पहिले की हैं। तब सुन्दरलाल नौवीं पास करके कक्षा के विद्यार्थी कहे जाने लगे थे।

पिता और पुत्र दोनों आगरे गये थे बिरादरी की एक बारात में। यहीं वधू पक्ष के एक सज्जन की दृष्टि सुन्दरलाल पर पड़ गई। लड़का सुन्दर और स्वस्थ था बात आगे बढ़ी। सज्जन को पता लगा कि कुल नेकनाम है खानदान बिना किसी दाग धब्बे का है। बारात में ही सज्जन ने बाप को नकद पांच सौ थमाकर बेटे का टीका कर दिया। ग्यारह साल

की इकलौती बेटी के बाप सुन्दरलाल के श्वसुर बन गये।

श्वसुर साहेब की सात गाव की छोटी-सी जमींदारी भी थी। वैसे पूर्वजों का जोड़ा-जंगोड़ा भी बहुतेरा था। इकलौती लड़की थी, वहीं जन॰ वासे में उन्होंने सैकड़ों बरातियों के सम्मुख ये वायदा किया कि अब से भावी दामाद की लिखाई-पढ़ाई मे जो कुछ खर्च होगा अपनी गाँठ से दिया जाएगा।

दो वर्ष बाद सुन्दरलाल का विवाह हो गया। दो वर्ष बाद जब वह बी० ए० एल० एल० बी० हुए सुन्दरलाल दो बच्चों के बाप बन चुके थे। अच्छा तो यह होता कि इसके बाद किसी चालू वकील की शागिदी में मुवक्किल फांसना शुरू कर देते, परन्तु उधर श्वसुर साहेब के नोटों को दीमक चाटे जा रही थी, वैसे ये उनकी दार्दिक इच्छा भी थी कि उनका दामाद विलायत पास वकील हो। फलस्वरूप सुन्दरलाल को इंग्लैंड भेजा गया। जाते समय तीसरी नींव डाल जाना उन्होने अपना कर्तव्य समझा।

रुपये पैसे के मामले मे भगवान् की दया थी। फलस्वरूप उन्होंने हिन्दुस्तान मे मेम साहब कही जाने वाली इंगलेंड के होटलों में और दुकानों मे काम करने वाली मिसो को तबियत से दोस्त बनाया। इंगलैंड से सुन्दरलाल केवल वकालत की सनद ही लेकर नहीं लौटे, साथ-साथ सभ्य जीवन के प्रति आकर्षण, यूरोप के शिष्टाचार के प्रति मोह, आदि भी अपनी अटी मे लगा कर लाये थे। किन्तु इंग्लैंड के साहबो की सोह-बत के बाद भी शायद वह बर्थ-कन्ट्रोल का महत्व नहीं समझ पाये थे। तीन से चार, चार से पाँच, और अब हमारे साला छदम्मीलाल को फिल्म-अभिनेता जैसे दिखने वाले सुन्दरलाल छ. बच्चों के बाप थे।

साथ मे लाखों नकद लाने वाली पत्नी को अब वह बच्चा पैदा करने वाली मशीन समझकर केवल घर की चहार-दीवारी मे ही सीमित रखना चाहते थे। मजबूरी थी, इसके अतिरिक्त और चारा ही क्या था, एकदम गुल्फाम की तरह सुन्दर दिखने वाले सुन्दरलाल के साथ पिचके गालो और झटकी चाल वाली पत्नी को देखकर नये व्यक्ति पति-पत्नी को

की इकलौती बेटी के बाप सुन्दरलाल के श्वसुर बन गये।

श्वसुर साहेब की सात गांव की छोटी-सी जमींदारी भी थी। वैसे पूर्वजों का जोड़ा-जंगोड़ा भी बहुतेरा था। इकलौती लड़की थी, वहीं जनवासे में उन्होंने सैकड़ों बरातियों के सम्मुख ये वायदा किया कि अब से भावी दामाद की लिखाई-पढ़ाई में जो कुछ खर्च होगा अपनी गांठ से दिया जाएगा।

दो वर्ष बाद सुन्दरलाल का विवाह हो गया। दो वर्ष बाद जब वह बी० ए० एल० एल० बी० हुए सुन्दरलाल दो बच्चों के बाप बन चुके थे। अच्छा तो यह होता कि इसके बाद किसी चालू वकील की शागिर्दी में मुवक्किल फांसना शुरू कर देते, परन्तु उधर श्वसुर साहेब के नोटों को दीमक चाटे जा रही थी, वैसे ये उनकी दार्दिक इच्छा भी थी कि उनका दामाद विलायत पास वकील हो। फलस्वरूप सुन्दरलाल को इंग्लैंड भेजा गया। जाते समय तीसरी नींव डाल जाना उन्होंने अपना कर्तव्य समझा।

रुपये पैसे के मामले में भगवान् की दया थी। फलस्वरूप उन्होंने हिन्दुस्तान में मेम साहब कही जाने वाली इंगलैंड के होटलों में और दुकानों में काम करने वाली मिसों को तबियत से दोस्त बनाया। इंगलैंड से सुन्दरलाल केवल वकालत की सनद ही लेकर नहीं लौटे, साथ-साथ मसख जीवन के प्रति आकर्षण, यूरोप के शिष्टाचार के प्रति मोह, आदि भी अपनी अंटी में लगा कर लाये थे। किन्तु इंग्लैंड के साहबों की सोहबत के बाद भी शायद वह बर्थ-कन्ट्रोल का महत्व नहीं समझ पाये थे। तीन से चार, चार से पाँच, और अब हमारे लाला छदम्मीलाल को फिल्म-अभिनेता जैसे दिखने वाले सुन्दरलाल छः बच्चों के बाप थे।

साथ में लाखों नकद लाने वाली पत्नी को अब वह बच्चा पैदा करने वाली मशीन समझकर केवल घर की चहार-दीवारी में ही सीमित रखना चाहते थे। मजबूरी थी, इसके अतिरिक्त और चारा ही क्या था, एक गुल्फाम की तरह सुन्दर दिखने वाले सुन्दरलाल के साथ पिचके गाल और झटकी चाल वाली पत्नी को देखकर नये व्यक्ति पति-पत्नी का

जुगल जोड़ी न समझ कर देवर-भाभी अथवा चाची-भतीजे की जोड़ी समझ बैठते थे। भगवान् भला करे इंगलैंड का, जिसने सुन्दरलाल के मन में क्लब जीवन के प्रति आकर्षण उत्पन्न कर दिया था, और जिन्दाबाद न्यूइण्डिया क्लब जिससे छः बच्चों की माँ से पीछा छुड़वा कर सदा बहार श्रीमती रम्भा छदम्मीलाल से परिचय करा दिया। इंगलैंड पास का पुछल्ला लगाकर भी कभी वह ढ़ाई-तीन सौ से अधिक नहीं कमा पाते थे, रम्भा मिली। दिल को चैन मिला, और जेब को भी''''करार मिला।

आशा थी कि कुछ दिन नई दिल्ली की बढ़िया कोठी में रम्भा दिल की प्यास बुझायेगी। किंतु छदम्मीलाल ने सब कुछ चौपट कर दिया नौकर के साथ वह छदम्मीलाल की हवेली गये। एक कमरा उसमें पसंद करके उसमें ताला लगवा दिया, और घर आकर सो गये।

अगले दिन अदालत गये किन्तु अनमने से ही रहे। शाम हुए घर लौटे बड़ी बेताबी से बच्चों की माँ के अनुरोध पर साधारण-सा भोजन करके शाम का शूट पहिन कर क्लब चल दिये।

अभी क्लब भली प्रकार गुलज़ार नहीं हुई थी, किंतु रम्भा यहाँ एक घन्टे पहिले ही से सुन्दरलाल की प्रतीक्षा कर रही थी।

"लो''''''''।" सुन्दरलाल का स्वागत बाहें फैलाकर करते हुए रम्भा ने कहा—"यहां तो सुबह से घर बैठी आपका इन्तजार कर रही थी, और हुजूर हैं चींटी की चाल से आ रहे हैं।"

"अदालत चला गया था। सोचा कोठी पर तुम्हारे सेठ साहेब होंगे उनकी मौजूदगी में बात-चीत हो नहीं सकेगी। मजबूरन शाम होने का इन्तजार करता रहा दिन भर, कहिये अब क्या प्रोग्राम है। पिछला प्रोग्राम तो चौपट ही हो गया समझो ?" सुन्दर ने रम्भा की दोनों बाहें अपने हाथों में थाम कर कहा।

"क्यों सुन्दरलाल से एकदम सटते हुए रम्भा बोली।"

"सेठजी, निकले पूरे व्यापारी, चुनाव के लिए सलाहकार रक्खा तो उसका ठिकाना भी चुनाव-क्षेत्र में ही बनाया। तुम तो कहती थीं कि

मुझे तुम्हारी कोठी मे तुम्हारे पास ही रहना होगा।"

"तो इससे क्या होता है?"

"सभी कुछ तो हो जाता है, ऐसा मालूम होता है कि तुम यह बात ही नहीं समझतीं कि इस बेकार के सिर दर्द को मैंने तुम्हारे लिये लिया है, न कि उन रुपयों के लिये जो तुम्हारे सेठ मुझे सलाहकार के नाते देंगे।"

"मैं सब कुछ समझती हूँ। इसमें क्या हर्ज है अगर तुम उस हवेली में बैठकर अपना काम करोगे?"

"तुम यहाँ और मैं वहाँ, क्या फायदा हुआ। यूँ तो शाम को अब भी मुलाकात हो ही जाती है। फिर इस बेकार की झकझक में पड़ने से फायदा ही क्या है?"

"फायदा है, कैसे बॅरिस्टर हो—इतनी जरा-सी बात भी नहीं समझते। जैसे ही चुनाव लड़ना तय होगा, सभी वहीं चलकर रहेंगे। वैसे अगर तुम चाहो तो कल से ही मैं तुम्हारे सामने आ बैठा करूँ।"

"सच!" सुन्दर मुस्कराये।

रम्भा आँखों ही आँखों मे मुस्करायी—"बहुत जल्दी अधीर हो जाते हो मिस्टर सुन्दर!"

"केवल तुम्हारे लिये।"

"यही तो बुराई है, तुम अच्छी तरह जानते हो कि एक प्रेमिका जैसा निर्दोष प्यार भी मैं तुम्हें नहीं दे सकती। पति और पिता ने इतने बंधनों मे जकड़ दिया है कि तुम्हें विश्वास भी नहीं दिला सकती कि मुझे तुमसे इतना प्यार है कि मैं तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकती।" यह बात कहते-कहते रम्भा ने अपना सिर एकदम सुन्दरलाल के वक्ष-स्थल पर रख दिया।

"जानता हूँ रम्भा रानी।" सावधानी से दूर करते हटा कर सुन्दरलाल ने कहा—"आओ बैडमिन्टन खेलें।"

"छोड़ो भी"......।"

"तो आओ कहीं एकान्त में बैठेंगे।" सुन्दरलाल का सदैव यही प्रयत्न होता था कि रम्भा से रोमांस कुछ क्लब के परिचित व्यक्तियों की दृष्टि से ओझल होकर ही तो अच्छा है। रम्भा की हकीकत तो सभी क्लब के मेम्बर जानते थे, किन्तु जो दो चार क्लब के दोस्त सुन्दरलाल की छः बच्चों वाली ट्रेजेडी जानते थे ?.........उनका मुँह बन्द रहे ये सुन्दरलाल की महत्वाकांक्षा थी।

ऊपर के हाल से लगी खुली गैलरी में बैठने की इच्छा से दोनों ऊपर चले। जीने में एकान्त पाकर सुन्दरलाल ने रम्भा की कमर में बांह डाल कर अपने से सटाते हुए कहा—"रम्भा रानी कल तुम्हारे पति सेठ साहेब को देखकर वाकई बड़ा दुख हुआ। हैरानी इस बात की है कि तुमने उन में कौन-सी विशेषता देखी थी। एक मामूली लड़की भी मैं समझता हूँ कि उनसे व्याह करना पसन्द न करती। तुमने उन्हें पसन्द किया.......कितनी हैरानी की बात है कि तुम्हारी जैसी सुशील और शिक्षित नारी ने उन्हें पसन्द किया।"

रम्भा फीकी हँसी-हँसी—"मैंने उन्हें पसन्द नहीं किया था डियर, मेरे पिता जी फ़िदा हुए थे, उस समय उनके सोचने का ढंग इस तरह का था कि बेटी उनकी नाक काटने पर उतारू है, नाक बचाने के लिये उन्हें पूरे हिन्दुस्तान में सेठजी ही मिले। बस लड़की की बलि दे दी गई, लड़की जिन्दगी भर आक की ज्वाला में जलेगी पिता को इसकी चिन्ता न थी, उसे तो अपनी नाक बचानी थी, सो बचाली।"

"सचमुच रम्भा रानी, यूँ लोग दिखावे को तुम मुस्कराती रहो। हकीकत यह है कि तुम्हारी जिन्दगी में यह बहुत बडी ट्रेजेडी है।"

"छोड़ो भी डियर क्या वाहियात बात छेड़ दी है।" हाल पार करके गैलरी में पहुंचते हुए रम्भा बोली—"आओ उधर एकान्त में बैठेंगे। या चलो यहाँ से चलें किसी बार में बैठकर थोड़ी-थोड़ी ह्विसकी लेंगे ?"

"बैठो भी यहीं बैठो।" हाथ पकड़कर बैठाते हुए सुन्दरलाल बोला।

दर असल सुन्दरलाल रम्भा के पीने-पिलाने से बहुत घबराता था,

दो बार का अनुभव था कि थोड़ी-सी पी लेने के बाद ही रम्भा पगलों की भांति चिपटना प्रारम्भ कर देती थी, और व्यर्थ ही जोड़े को लोगों का तमाशा बन जाना पड़ता था।

"कॉफी मंगवाऊँ।" बैठते हुए उसने कहा।

"कॉफी से तसल्ली नहीं होगी। ग्राज सारे दिन तुम्हारी याद में मछली की तरह तड़पती रही हूँ।.........तसल्ली चाहती हूँ।" वासना भरी आँखों को सुन्दरलाल पर गढ़ाते हुए रम्भा बोली।

"बार में जाने से तसल्ली नहीं मिलेगी डार्लिंग, वहाँ तो खुद भी तड़पोगी और मुझे भी तड़पाओगी।"

"आदमी बहुत समझदार हो, अच्छा उठो घर चलते हैं।"

"घर?" सुन्दरलाल मुँह बाये रह गये।

"हाँ हाँ, उठो। घबराओ मत ज़िन्दगी की 'ट्रेजडी' को जाने कब से मैं 'कामेडी' में बदल चुकी हूँ। चलो आज तुम मेरी हिम्मत की तारीफ करोगे, उठो।"

क्लब से छदम्मीलाल की कोठी का अन्तर लगभग एक फर्लांग था। दोनों पैदल ही चले। सुन्दरलाल मन ही मन चिन्तित था। यूं तो रम्भा से उसका परिचय कई मास से था। कई बार रम्भा ने अपने शरीर को उसे समर्पित किया था। किन्तु सदैव शिष्ट एवं सुसंस्कृत दिखने वाली रम्भा की वासना इतनी विकृत एवं निर्लज्जतापूर्ण है, यह सब कुछ सुन्दरलाल ने आज ही देखा। उसे चिन्ता थी कि कहीं वह घर जाकर भी ऐसी हरकतें करके उसे अपने पति से अपमानित न कराये। वह इस तरह उससे सटकर चल रही थी मानो उसकी इच्छा एकदम हृदय से चिपककर चलने की हो।

कोठी का दरवाजा आगया, किन्तु रम्भा अब भी उसी प्रकार चल रही थी। सुन्दरलाल का दिल तेज़ी से धड़कने लगा, रम्भा की प्यार भरी बातों का उत्तर भी वह ठीक तरह नहीं दे पा रहा था।

"दरवान को देखकर रम्भा रुकी—"सेठजी हैं या गये?"

"वह तो तभी चले गये थे।" दरबान ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया।

"आओ डियर।" चलते हुए रम्भा ने कहा।

सुन्दरलाल की जान में जान आई। छदम्मीलाल घर में नहीं है, यह सूचना पाकर उसके दिल को इतनी ही खुशी हुई जितनी कि एक फांसी पाये हुए मुजरिम को हाईकोर्ट से बरी हो जाने पर होती है। अब तो दिल धड़कने की बजाये उछल रहा था।

"विराजिये वकील साहेब।" अपने कमरे में पहुँचकर रम्भा ने कहा—"कहिये क्या पीजियेगा।"

गद्‌गद् होकर सुन्दरलाल ने कहा—"जो पिलाओगी वही पी लेंगे।"

"जो इच्छा हो वही पियो.......अब पियो और सारी रात पियो।" दरवाजा बन्द करके पागलों की तरह सुन्दरलाल से लिपटते हुए रम्भा बोली—"याद करोगे कि कभी कोई मिली थी, जिसका हृदय सागर था, ऊपर तरंगित, अन्दर से अनन्त।"



१५

दिवाली की सुबह थी। मैना सुबह चार बजे सोई थी। उठी तो पहिले उसने नब्बन के खाली बिस्तर की ओर देखा, फिर घड़ी देखी नौ बजे थे।

दरवाजे की ओर पीठ करते हुए उसने करवट ले ली। यूँ ही लेटे-लेटे सोचते रहना—*हृदय का ताना और बुद्धि का बाना बनाकर कल्पना* की उधेड़बुन में ही आँखें मूँदे लेटे रहना मैना को अच्छा लगता था।

किसी ने बाहर से दरवाजा खटखटाया।

"आ जाओ खुला है।" मैना ने दरवाजे की ओर करवट बदलते हुए कहा।

देखा मुबारिक है। साथ में प्रेमनारायण था।

क्षण भर के लिए मैना ने सोचा कि ये मुबारिक मेरे लिए आदमी

क्यों लाया है। किन्तु तभी मुबारिक बोला—"ये भाई नब्बन साहेब को तलाश में है।"

इतना कहकर मुबारिक तो चला गया। अब मैना को ख्याल आया कि उसे उठकर इस आदमी का आतिथ्य करना चाहिए। वह उस का ग्राहक नहीं है कोई नवाब साहेब का पहिचान वाला मालूम होता है।

"बैठिये।" उठते मैना ने कहा—"कहिये क्या काम था उनसे ?"

"जी कोई खास काम तो नहीं था।" साधारण भाव से बैठते हुए प्रेम ने कहा—"मैं जानता था कि मेरी वजह से आज वह शायद यहाँ भी नहीं मिलेंगे। अजीब आदमी हैं—कहाँ है जरा बुलाये तो उन्हें ?"

"जी वह मेरे जागने से पहिले ही कहीं चले गये हैं, आते ही होंगे।"

प्रेम ने तनिक मुस्कराकर कहा—"आज मैं भी उन्हें साथ लेकर ही जाऊंगा चाहे मुझे शाम तक क्यों न बैठा रहना पड़े।"

"कहाँ ले जाना है ?"

"घर, आप को भी चलना है।"

मैना को आश्चर्य हुआ—"किस लिए ?" उसने पूछा।

"खाना खाने के लिए।" प्रेम ने कहा—"उन्होंने शायद आप को बताया नहीं है, आज से पन्द्रह दिन पहिले से लगातार रोजाना मैं उन्हें न्योता दे रहा हूं। कुछ अजीब तबीयत के आदमी हैं वह भी, आप ही कहिये मेरी उनकी दोस्ती है—भगवान् को मंजूर थी हो गई। कहते हैं दोस्ती है, और रहेगी, लेकिन तुम्हारे घर नहीं जाऊंगा। क्यों ? शायद इस लिए कि उनके जाने से मेरा घर भी जी० बी० रोड बन जायगा। है न बेकार की बात, और वह इसे उसूल की बातें कहते हैं।

प्रेम की संक्षिप्त सूत्रों में कही बात को मैना भली प्रकार न समझ सकी। अलबत्ता इतना समझ गई कि ये नवाब साहेब के वही दोस्त हैं जिनकी चर्चा दो-एक बार उन्होंने यूं ही उठते-बैठते की थी। उठते हुए मैना बोली—"मैं अभी आई एक मिनट में, चाय के साथ क्या लीजियेगा बिस्कुट या आमलेट ?"

"ठहरिये जरा, भाई साहेब को आ जाने दीजिये।"

"वह आयेंगे तो कहेंगे कि मेरे दोस्त आये और तुम न चाय तक को न पूछा। कम से कम चाय तो आप पी ही लीजिये।"

प्रेम हँसा "आज आप दोनों मेरे मेहमान हैं आप चाय पीयेंगी तो मेरी पीयेंगी, खाना खायेंगी तो मेरा खायेंगी। आप मेरे साथ घर चलने की तैयारी कीजिये तब तक भाई साहेब भी आ जायेंगे, फिर खाना पीना वहीं पहुंच कर होगा।"

"लेकिन नवाब साहेब ने तो इस बारे मे मुझे कुछ भी नहीं बताया.......।" मैना जाने क्या कहने जा रही थी कि रुक गई।

"कैदे-हयात......।" नब्बन के गुनगुनाने की आवाज अब प्रेम को भी स्पष्ट सुनाई दे रही थी।

"अरे तुम ?" दरवाजे के सामने आते ही नब्बन ने आश्चर्य चकित होकर कहा—"तुम यहां तक कैसे पहुंच गये प्रेम साहेब ?"

'पहुंचना जरूरी था इसलिए पहुंच गया, जानता था कि लाख कहने सुनने के बाद भी तुम बिना घेरा डाले पकड़ में नहीं आओगे।"

नब्बन फीकी हँसी हँसा—"बेगम साहिबा आप से मिलिये, ये हैं मेरे दोस्त *प्रेमनारायण साहेब* और.......।"

"हम लोग एक दूसरे का नाम जान चुके हैं। अब चलने की तैयारी कीजिये। मेरी दोनों इच्छायें आप को पूरी करनी होंगी। एक यह कि आज आप दोनों घर चलेंगे और दोनों वक्त का खाना खाकर शाम के बाद लौटेंगे। दूसरी यह कि आप अपनी छोड़ी हुई शायरी आज दोबारा शुरू कर रहे हैं, एक आध चीज आज आप को कहनी ही होगी।"

बैठते हुए नब्बन ने कहा—"बेगम जरा देखना कोई बाहर हो तो कह दो कि नीचे पंजाबी के यहाँ से चाय-नाश्ता आदि लाने को कह दे।"

मैना उठी, तभी प्रेम बोल उठा—"चलिये ना, चाय वहीं चलकर पी ली जायगी।"

"जरा बात तो सुनो।" प्रेम से इतना कहकर नब्बन ने सिर उठा

कर मैना से कहा—"आप चाय मंगवा लीजिये।"

मैना बाहर चली गई।

"देखिये प्रेम साहेब, आपके घर हम दोनों जायें इस बात से मुझे बुनियादी एहतराज़ है.......।"

"फिर वही बात.......।"

"सुनिये तो सही, मेरी बात आप छोड़िये, हो सकता है कि मैना को कोई आप के मुहल्ले में पहिचान ले। सचमुच ये बहुत बुरी बात होगी। यक़ीन मानिये कि इस बात का मुझे बहुत अफसोस है कि मैं लगातार तुम्हारा इसरार टालता रहा हूँ। काश मैं आप का इसरार पूरा कर सकूं। खुदा करे कि शरीफों की जिन्दगी बिताने के इरादे से मैं और वह दोनों वापस लखनऊ जायें। ख्वाब की-सी बात है.......लेकिन ऐसा होगा तो यक़ीनन नई जिन्दगी के लिए बहिन की दुआएँ लेने मैं बेगम को जरूर घर लाऊँगा।"

"तो मैं जाता हूँ..........।" प्रेम खड़ा हो गया किन्तु सामने से आती मैना को देखकर उसने मुखमुद्रा की उत्तेजना को शांत करने का प्रयत्न करते हुए कहा—"फिर किसी दिन मिलेंगे।"

"नाराज़ होकर जा रहे हो ?" मुस्कराकर नब्बन ने कहा।

"नहीं तो।" खड़े-खड़े ही प्रेम ने उत्तर दिया।

"तो फिर बैठ जाओ।"

प्रेम बैठ गया। लाख छुपाने का प्रयत्न करने पर भी उसके मुख के भाव प्रकट कर रहे थे कि उसे वास्तविक दुख पहुँचा है।

"क्या बात हुई ?" प्रफुल्लित स्वर में मैना ने पूछा। आज बरसों के बाद उसने नब्बन के चेहरे पर मुस्कराहट देखी थी।

"प्रेम साहेब नाराज हो गये थे, इनकी आदत ही कुछ ऐसी है। जरा-जरा-सी बात पर इन्हें गुस्सा आ जाता हैं। हां ....तो प्रेम साहेब आज शाम का खाना आप यहीं ला रहे हैं, बस बहिन को इतना बता देना कि मैं मिर्चें कम खाता हूँ और बेगम साहिबा ज्यादह।" ..

"..........।" प्रेम चुप था।

नब्बन हँसी दबाते हुए बोला—'शाम को खाना जरा जल्दी लाइयेगा, ऐसा न हो कि मैं बहिन के घर के खाने के इन्तजार में भूखा ही बैठा रहूँ, और आप गुस्से में भरे घर ही बैठे रहें। अगर सचमुच ऐसा हुआ तो मैं तो भूखा रहूँगा ही साथ-साथ बेगम साहिबा भी ......।"

प्रेमनाथ का गुस्सा शान्त होता जा रहा था। कनखियों से मैना की ओर देखते हुए वह बोला—"जो जिस वक्त आप कहेंगे उसी वक्त खाना आ जायेगा।"

"छः बजे तक ले आइये। ठीक है ना बेगम साहिबा ?"

मैना केवल मुस्करा भर दी। तभी जमूरे ने दरवाज़े में प्रवेश करते हुए कहा—"चाय वाला।"

"अरे आओ मियां जमूरे।" नब्बन ने कहा—"यहाँ मेज पर रखो, बेगम साहिबा आज आप अपने हाथ से चाय बना कर पिलाइये।"

"शुक्रिया।" गद्गद् कंठ से मैना ने कहा।

"किस बात का ?"

'मुझे जैसी अदना हस्ती को हुजूर ने मेजवानी का मौका दिया।"

नब्बन कहकहा लगाकर हँस दिया—"देखा प्रेम साहेब, यह है हमारे लखनऊ की तहज़ीब—खैर चाय बनाकर पिला देने में तो कोई खास तकलीफ भी नहीं होती, अगर किसी लखनवी को फांसी भी दी जा रही हो तो वह भी गले में फंदा डालने वाले का शुक्रिया अदा करते हुए कहेगा—'मुझ नाचीज के लिये आप इतनी तकलीफ उठा रहे हैं।' और फिर जल्लाद का आदाब बजाते हुए खुशी-खुशी फंदा गले में डलवा लेगा।"

इस लतीफे से प्रेम की रही सही उदासी भी दूर हो गई। चाय के दौर में लगातार हंसी और कहकहे चलते रहे। सबसे अधिक खुश थी आज मैना, एक मुद्दत के बाद उसने नब्बन को मुस्कराता और देखा था।

कर मैना से कहा—"आप चाय मंगवा लीजिये।"

मैना बाहर चली गई।

"देखिये प्रेम साहेब, आपके घर हम दोनों जायें इस बात से मुझे बुनियादी एहतराज़ है........।"

"फिर वही बात........।"

"सुनिये तो सही, मेरी बात आप छोड़िये, हो सकता है कि मैना को कोई आप के मुहल्ले में पहिचान ले। सचमुच ये बहुत बुरी बात होगी। यक़ीन मानिये कि इस बात का मुझे बहुत अफ़सोस है कि मैं लगातार तुम्हारा इसरार टालता रहा हूँ। काश मैं आप का इसरार पूरा कर सकूं। खुदा करे कि शरीफ़ों की जिन्दगी बिताने के इरादे से मैं और वह दोनों वापस लखनऊ जायें। ख्वाब की-सी बात है........लेकिन ऐसा होगा तो यकीनन नई जिन्दगी के लिए बहिन की दुआएँ लेने मैं बेगम को जरूर घर लाऊँगा।"

"तो मैं जाता हूँ............।" प्रेम खड़ा हो गया किन्तु सामने से आती मैना को देखकर उसने मुखमुद्रा की उत्तेजना को शांत करने का प्रयत्न करते हुए कहा—"फिर किसी दिन मिलेंगे।"

"नाराज़ होकर जा रहे हो?" मुस्कराकर नब्बन ने कहा।

"नहीं तो।" खड़े-खड़े ही प्रेम ने उत्तर दिया।

"तो फिर बैठ जाओ।"

प्रेम बैठ गया। लाख छुपाने का प्रयत्न करने पर भी उसके मुख के भाव प्रकट कर रहे थे कि उसे वास्तिविक दुख पहुंचा है।

"क्या बात हुई?" प्रफुल्लित स्वर में मैना ने पूछा। आज बरसों के बाद उसने नब्बन के चेहरे पर मुस्कराहट देखी थी।

"प्रेम साहेब नाराज़ हो गये थे, इनकी आदत ही कुछ ऐसी है। ज़रा-ज़रा-सी बात पर इन्हें गुस्सा आ जाता है। हाँ.....तो प्रेम साहेब आज शाम का खाना आप यहीं ला रहे हैं, बस बहिन को इतना बता देना कि मैं मिर्चें कम खाता हूं और बेगम साहिबा ज्यादह।"

"..........।" प्रेम चुप था।

नब्बन हँसी दबाते हुए बोला—'शाम को खाना जरा जल्दी लाइयेगा, ऐसा न हो कि मैं बहिन के घर के खाने के इन्तज़ार में भूखा ही बैठा रहूँ, और आप गुस्से में भरे घर ही बैठे रहें। अगर सचमुच ऐसा हुआ तो मैं तो भूखा रहूँगा ही साथ-साथ बेगम साहिबा भी.......।"

प्रेमनाथ का गुस्सा शान्त होता जा रहा था। कनखियों से मैना की ओर देखते हुए वह बोला—"जो जिस वक्त आप कहेंगे उसी वक्त खाना आ जायेगा।"

"छः बजे तक ले आइये। ठीक है ना बेगम साहिबा?"

मैना केवल मुस्करा भर दी। तभी जमूरे ने दरवाजे में प्रवेश करते हुए कहा—"चाय वाला।"

"अरे आओ मियां जमूरे।" नब्बन ने कहा—"यहाँ मेज पर रखो, बेगम साहिबा आज आप अपने हाथ से चाय बना कर पिलाइये।"

"शुक्रिया।" गद्गद् कंठ से मैना ने कहा।

"किस बात का?"

'मुझे जैसी अदना हस्ती को हुजूर ने मेजबानी का मौका दिया।"

नब्बन कहकहा लगाकर हँस दिया—"देखा प्रेम साहेब, यह है हमारे लखनऊ की तहज़ीब—खैर चाय बनाकर पिला देने में तो कोई खास तकलीफ भी नहीं होती, अगर किसी लखनवी को फांसी भी दी जा रही हो तो वह भी गले में फंदा डालने वाले का शुक्रिया अदा करते हुए कहेगा—'मुझ नाचीज के लिये आप इतनी तकलीफ उठा रहे हैं।' और फिर जल्लाद का आदाब बजाते हुए खुशी-खुशी फंदा गले में डलवा लेगा।"

इस लतीफे से प्रेम की रही सही उदासी भी दूर हो गई। चाय के दौर में लगातार हंसी और कहकहे चलते रहे। सबसे अधिक खुश थी आज मैना, एक मुद्दत के बाद उसने नब्बन को मस्कराता और हंसता देखा था।

चाय समाप्त करते हुए प्रेम ने कहा—"अच्छा अब मैं चलता हूँ, शाम को आऊँगा।"

नब्बन भी प्रेम के साथ उठकर चला गया। मैना फिर लेट गई। सोच रही थी कि ज़िन्दगी की हर सुबह ऐसी ही हो। वह इसी प्रकार सदा मुस्कराते रहें। एक ओर रक्खी टाइम-पीस लगातार टिकटिक की लय के साथ समय के दौडने की सूचना दे रही थी। किन्तु मैना की उठने की इच्छा न हुई। नब्बन और प्रेम को गये आधा घण्टा बीत चुका था। किन्तु मैना की उठकर नहाने धोने की कतई इच्छा नहीं थी जागृत अवस्था में, किन्तु आंखें मूदे जो मृदु-स्वप्न वह देख रही थी—बस केवल उन्ही में खो जाना चाहती थी।

अचानक कुछ आहट हुई। आंखें मूंदे ही मैना ने सुना—'बेगम फिर सो गईं क्या? उठिये गुसल वगैरा से फारिग़ होकर खाना खा लीजिये, फिर जी चाहे तो लेट जाइये।"

"मैं जाग रही हूँ नवाब साहेब, ज़रा यहाँ तशरीफ लाइये।"

"क्या बात है? पलंग के निकट जाकर नब्बन ने पूछा।"

"बैठिये।" हाथ पकड़कर नब्बन को पलंग पर बैठाते हुए मैना बोली—"आज मुद्दत के बाद आपके चेहरे पर मुस्कराहट दिखाई देती है—सौ दो सौ रुपया दे दीजिये खैरात करना चाहती हूँ।"

नब्बन हंस दिया। मैना के दोनों हाथ पकड़कर बैठाते हुए उसने कहा—"आज दिवाली है, उठो जल्दी से फारिग होकर बाजार चलेंगे।"

"और आधी रात बाद लौटेंगे·········।"

"क्यों?"

"आज किसी को मत बुलाइये नवाब साहेब, बस मैं और आप····।"

"लेकिन शाम को प्रेम साहेब तो आयेंगे।"

"वह आयें सर आंखों पर, उन्होंने ही तो आज मेरी जिन्दगी को मुस्कराहट अता फरमाई है।" नब्बन की गोद में लुढ़कते हुए मैना ने कहा।"



१६

दो-तीन दिन तक गुसाइंजी सिर्फ यह देखते रहे कि सुन्दरलाल कितने पानी मे है ? किन्तु आज सुबह उठते ही उन्होंने मन ही मन यह प्रतिज्ञा करली कि आज दिवाली का दिया जलाने से पहिले ही सुन्दरलाल के मामले को आर पार कर देंगे। यूं दो-चार दिन की लगातार मुलाकात से उन्होंने रम्भा पर अपना रंग भली प्रकार चढ़ा दिया था। आखिर गुसांईजी की दिव्य-दृष्टि से क्या बच सकता है ? उड़ती चिड़िया को भांपने वाले से केवल धरती पर विचरण करने वाले प्राणी की हरकतें छुपी थोड़े ही रह सकती हैं।

अलबत्ता उन्हें इस बात का खेद था कि अब तक वह व्यर्थ ही मूर्ख बनते रहे। बेकार छदमीलल से इतने दिन सिर खपाया क्या लाभ हुआ ? मामले की जड़ पकड़नी चाहिये, अपर पहिले ही रम्भा और

सुन्दरलाल से मिलकर छदम्मीलाल को फांसा जाता तो व्यर्थ ही इतना आत्म-बलिदान न करना पड़ता।

दस बजे गुसाईंजी रम्भा और सुन्दरलाल सहित छदम्मीलाल के कमरे में पहुंचे तो लालाजी सो रहे थे। तीनों प्राणियों ने मूक-दृष्टि से एक दूसरे को निहारा और अन्त में रम्भा ने अपना कर्तव्य समझकर लाला को झंझोड़ा—"उठिये।"

"कौन है ?" हड़बड़ाकर छदम्मीलाल उठ बैठे। नींद में शायद कोई स्वप्न देख रहे थे जिसका प्रभाव जाग्रत अवस्था में भी एकदम लुप्त न हो पाया था—'मैं क्या करूं, मैं क्या करूं।" आंखें टिमटिमाते हुए लाला बड़बडाये।

"ये चाचाजी आये हैं।" रम्भा ने कहा।

कुछ क्षण निरंतर पागलों की भांति रम्भा को घूरने के बाद लाला की स्मरण-शक्ति लौटी—"ओह चा ऽ ऽ ऽ चा।" जमुहाई रोकने का प्रयास करते हुए छदम्मीलाल बोले—"बैठो ना, बैठो चाचा। काम धंधे के चक्कर में रोज ही रात को एक-दो बजे तक जागाना पड़ता है।"

"बेटा! तेरी नींद खराब हुई, इस बात का अफसोस है। मैंने सोचा था कि सुबह-सुबह ही मिलना-भेंटना हो जाय, तुम ठहरे काम-काजी आदमी दिन में कौन जाने मिल पाते या नहीं।"

"अच्छा करा चाचा, पर ये बात नही है कि तुम्हारा घर ठहरने का हुक्म होता और मैं घर से चला जाता। काम-धन्धे अपनी जगह हैं, और बड़े-बड़े आदमी अपनी जगह हैं।"

"यह मैं जानता हूं बेटा। हां खैर बात-चीत तो बाद में होती रहेगी, वकील साहब! वह कांग्रेस की बड़ी कमेटी के नाम अर्जी लिखकर छदम्मी के दस्तखत करा लो। आज ही उसे ठिकाने पहुंचाये देता हूं। बेटा, हम तो ठहरे बुड्ढे आदमी, अब तो तुझे ही असेम्बली का मेम्बर बनाना है।"

"सो तो सुन्दरलालजी ने कल बताया था, पर चाचा कांग्रेस वाले

मुझे टिकट दे भी देंगे, सुना है व्योपारियों को कांग्रेस वाले अपना 'टिकट नहीं दे रहे हैं ?"

"और जगह क्या हो रहा है ये तो मुझे पता नहीं, परन्तु गुसाईं के मुहल्ले से कांग्रेस का टिकट उसे ही मिलेगा जिसे गुसाईं चाहेगा। हाथ कंगन को आरसी क्या, चार दिन के अन्दर-अन्दर नाम ही मंजूर होकर आ जायगा।"

"सुना है कांग्रेस वालों ने टिकट देने वाले जो पंच बैठाए हैं, वह अर्जी देने वाले को अपने दफ्तर में बुलाकर जाँचते हैं।"

"तुम्हें इन सब चक्करों में पड़ने की जरूरत नहीं है, अर्जी पर दस्त-खत करके मुझे दे दो। जहाँ जाना होगा मैं जाऊँगा, जिससे मिलना होगा मैं मिल लूँगा।"

"सुन्दरलाल जी फिर लिख लो जो कुछ लिखना है, चाचा का हुक्म टाला थोड़े ही जा सकता है।"

"जो बहुत अच्छा, अभी टाइप कर दूँगा।"

"हाँ देखना, चाचा जी से भी कह दो ना कि वह भी पार्लमिण्ट की मैम्बरी का टिकट ले लें।" रम्भा ने छदम्मीलाल से कहा।

"ना बाबा.........।"

"हाँ हाँ जरूर, चाचा तुम भी लड़ो, लड़ना क्या है जीतना है। जो कुछ खर्चा होगा मैं देख लूंगा।" छदम्मीलाल ने सुन्दरलाल और रम्भा की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखते हुए कह ही डाला।

गुसाईंजी का मन बल्लियों उछल रहा था। किन्तु छदम्मीलाल के मन की थाह लेने के इरादे से उन्होंने फिर कहा—"ना बाबा, मैं ठहरा बूढ़ा आदमी, मेरे बस की इतनी भाग-दौड़ कहाँ है। जवानी देश-सेवा में कट गई, बुढ़ापा लोगों को दवा गोली से सेवा करके काट दूंगा।"

"परन्तु गुसाईंजी !" सुन्दरलाल बोले—"आप जैसे अनुभवी और योग्य व्यक्ति को पार्लियामेण्ट में जाना ही चाहिये। रम्भा रानी सुझाव सही है।"

"अरे जब हम चाचा की हर बात मानते हैं तो चाचा भी हमारी बात मानेंगे। सुन्दरलालजी दो अर्जी लिखो, एक मेरे लिये और एक चाचा के लिये। और चाचा तुम्हें कतई भाग-दौड़ करने की जरूरत नहीं है। पैसे में बहुत बड़ी करामात हैं एक नहीं हजारों कवायद करने वाले इकट्ठे हो जायेंगे—और फिर तुम्हारी बहू और अपने यह सुन्दरलालजी किस दिन के लिये हैं। दोनों पढ़े लिखे हैं, हर मोर्चे पर इन्हें ही आगे रक्खो।"

"जी हां, वह सब हो जाएगा। मैं रम्भा रानी के कमरे में से टाइप राइटर उठा कर लाता हूँ। यह काम भी अभी खतम किये देते है।" उठते हुए सुन्दरलाल बोले।

"एक बात बता दूं चाचा।" सुन्दरलाल के जाने पर छदम्मीलाल बोले—'तुम्हारे हुक्म के कारण ही सब कर रहा हूँ, वरना मैम्बरी तो गूदड़ मामा की मारफत भी मिल जाती।"

"जनसंघ की मैम्बरी से क्या फायदा है? कुछ तुनककर गुसाईंजी ने पूछा।"

"फायदा मैम्बरी से ही भला क्या होगा, पर यह है कि मैम्बर बनना है तो किसी भी पार्टी के टिकट से बन जाओ।"

"यह बात नहीं है बेटा, आगे की भी सोचनी पड़ती है। जनसंघ का मैम्बर बस मैम्बर ही रहेगा। लेकिन कांग्रेस का मैम्बर छोटे मन्त्री से लेकर मुख्य मन्त्री तक बन सकता है।"

"ही-ही""हीऽऽऽ।" बतीसी दिखाते हुए छदम्मीलाल बोले—"अपने को मन्त्री थोड़े ही बनना है चाचा।"

"बनना क्यों नहीं है, जैसा मौका देखेंगे वैसी चाल चलेंगे। बस तुम तो जैसा मैं कहूं, वैसा करे जाना। तीन साल के अन्दर-अन्दर अगर तुम्हारे कारोबार को दुगना न करा दूं तो गुसाईं कहाना छोड़ दूंगा।"

इस ब्रह्म-वाक्य को सुनकर लाला गद्-गद् हो गये। रम्भा की ओर

श्रर्थ भरी दृष्टि से ताकते हुए बोले—"महाराज मे चाचा के लिए चाय-पानी लाने को तो कह दो।"

रम्भा गई, श्रौर टाइप राईटर लेकर सुन्दरलाल श्रा गये। पहिले छदम्मीलाल का प्रार्थना-पत्र टाइप किया गया, प्रार्थना-पत्र श्रसेम्बली की मैम्बरी के लिए टाइप हो रहा था श्रौर लाला की श्रात्मा मुख्य मन्त्री की गद्दी पर बैठने का साक्षात स्वप्न देखकर विभोर हो रही थी। सारे सदन में झनझनाहट-सी दौड़ रही थी—गुमाईंजो श्रौर सुन्दरलाल श्रांखों से श्रोझल हो चुके थे।

चारों श्रोर मे कानों के परदे फाड़ देने वाली गगन-भेदी जय-जयकार हो रही है—लाला छदम्मीलाल की जय। मुख्य मन्त्री लाला छदम्मीलाल जिन्दाबाद। लाखों की भीड़ के सामने बने, दो हाथी बराबर ऊँचे मंच पर वह लैक्चर देने चढ़े। लोगों ने फूल मालाश्रों से उन्हें लाद दिया। श्रोह.........। मंच की बगल में स्त्रियों के बैठने के स्थान पर हजारों की भीड़ है। कुमारी श्रौर युवती, एक से एक बढ़िया श्रौर लाजवाब माल, सभी उनकी श्रोर तिरछी निगाहों मे मुस्कराकर प्रणय-निमन्त्रण दे रही हैं।

हे मेरे भगवान्.........।

"लो दस्तखत कर दीजिए।"

"हैं।" लाला उछल पड़े। चाँद-सितारों की कल्पना धराशायी हो गई—"हाँ हाँ लाश्रो।" होश में श्राते लाला बोले।

"छदम्मी बेटा, मालूम होता है हर समय काम-धन्धे के सोच-फिकर में ही डूबे रहते हो।"

"चाचा तुम जानो, एक जान श्रौर सत्तर काम सोच-फिकर तो रहता ही है। हाँ भई सुन्दरलालजी चाचा की श्रर्जी भी टाइप कर लो।"

"जी हाँ वही कर रहा हूँ।"

सुन्दरलाल फिर खटाखट में लग गये। छदम्मीलाल ने फिर सपने

की दुनिया में लौट जाना चाहा किन्तु दूसरी बार यह सौभाग्य प्राप्त न हो सका।

दरवान ने आकर सूचना दी कि—"लाला गूदड़मल आए हैं।" अब ? एक वार तीनों ही चौंक पड़े।

"इधर आओ।" सुन्दरलाल सुबह से ही कहीं बाहर चले गए हैं।"

"बुड्ढा वड़ा छाँकटा है सुन्मरलालजी, वह फौरन ताड़ जायगा कि जरूर कुछ गोलमाल है।" छदम्मीलाल बोले। उन्हें लग रहा था मानों उन्होंने कोई हत्या की हो, और रंगे हाथों पकड़े गए हों।

"गोलमाल है तो है, उसका तुझ पर कोई कर्ज़ा तो निकलता नहीं है। साफ कहलवा दो कि नहीं मिलना चाहते।" गुसाईंजी ज़रा कड़े स्वर में बोले।

वह गए........।" रम्भा ने आकर कहा—"मैंने उनसे कह दिया है कि लालाजी कानपुर गए हैं, तीन-चार दिन बाद लौटेंगे।"

लाला की जान में जान आई। इच्छा हो रही थी कि उठकर रम्भा को सीने से लगा लें। क्या सफाई से काम किया है। साँप भी मर गया और लाठी भी नहीं टूटी।

सुन्दरलाल ने फिर खटाखट शुरू कर दी। गुसाईंजी सुन्दरलाल को अपनी देश-सेवाएँ गिना रहे थे, रम्भा एक ओर बैठी सुन्दरलाल की ओर देख रही थी और लाला अपनी विवाहिता पत्नी की चोरी-चोरी छवि निहार रहे थे।

खटाखट समाप्त होते ही चाय आ गई। आज गुसाईंजी की खातिर विभिन्न प्रकार के बढ़िया नमकीन और मिठाई से की गई।

"अच्छा भई।" खूब अच्छी तरह डटकर गुसाईंजी बोले—"अब मैं चलूंगा।"

"चाचाजी एक कप चाय और लीजिए।" रम्भा ने आग्रह किया।

"ना बेटी ना, वह तो खुशी-खुशी में एक प्याली पी ली, वरना मैं चाय नहीं पिया करता। हाँ छदम्मी, भई वह हवेली खाली कँरवानी है।"

"करवा लेंगे, मेरी राय में टिकट मिलने के बाद ही खाली करवाना ठीक रहेगा, क्यों सुन्दरलालजी ?"

"जी हाँ, टिकट मिलने से पहले गूदडमल से बिगाड़ना ठीक नहीं होगा।"

"अरे भाई टिकट तो मिल ही गया समझो, ख़ैर चार दिन बाद ही सही। एक शर्त है, मेरी तरकीब से ही हवेली खाली करानी होगी।" गुसाईंजी उठते हुए बोले।

"आपकी क्या शर्त है ?" सुन्दरलाल ने पूछा।

"भई जब चुनाव लड़ना है तो उसका प्रचार तो करना ही होगा। प्रचार हवेली से ही शुरू करेंगे। आधी रात को पुलिस में जाकर रिपोर्ट लिखायें कि सधियों ने ताला तोड़कर हवेली पर कब्ज़ा कर लिया है। पुलिस को लेकर उधर तो हवेली खाली करवायेंगे दूसरी तरफ अखबारों में, इश्तहारों में छदम्मी का बयान छपवायेंगे। पोस्टर चिपकवायेंगे कि सधियों के गौ-सेवक यशोदानन्द गुरु का भंडा फूट गया......।"

'योजना तो ज़ोरदार है।' उचकते हुए सुन्दरलाल ने कहा।

"छदम्मी तू बोल बेटा, मंज़ूर है ?"

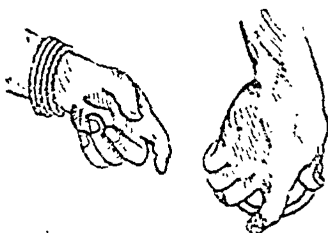
"भला यह भी कोई पूछने की बात है, जब चुनाव लड़ना है तो अच्छी-बुरी सभी चाल चलनी पड़ेंगी, सुन्दरलालजी कार ले जाओ और चाचा को घर छोड़ आओ।"

"बहुत अच्छा।" उठते हुए सुन्दरलाल बोले।

गुसाईंजी और सुन्दरलाल दरवाजे से बाहर ही हुए होंगे कि छदम्मीलाल बोले—कहिये रम्भारानी क्या हुक्म है।"

'चैक दिलवाइये, तुम्हारे चक्कर में सारे दिन इधर से उधर दौड़ना पड़ता है और जेब में फूटी कौड़ी भी नहीं होती।" रम्भा ने अपने स्थान पर बैठे-बैठे कहा।

"इधर तो आओ......चैक भी मिल जायेगा।"



१७

आज नव्वन सारे दिन सपनों के संसार में ही खोया रहा। मैना स्नान-गृह से लौटी तो उसने स्वयं कहा कि—"बेगम आज सफेद साड़ी पहिनो।"

सम्भवत: प्रथम बार नव्वन ने मैना के माथे पर बिन्दी लगाई, और मांग में सिन्दूर भरा। फिर दोनों बाजार गये।

पुरानी दिल्ली के बाजार में आज विशेष चहल-पहल थी। यूं तो अंग्रेजों की राजधानी नई दिल्ली की अपेक्षा शाहजहां की पुरानी दिल्ली में सदैव ही अधिक चहल-पहल रहती है। दिल्ली निवास के अल्प-कालीन अनुभव के बाद नव्वन को पुरानी दिल्ली ही पसन्द आई। यह सही है कि पुरानी दिल्ली में भी लखनऊ की बाअदब जिन्दगी न थी, फिर भी जिन्दगी थी। सभी तरह के इन्सान दिखाई देते थे, भीड़ थी, कोलाहल

था, जीवन संघर्ष में लगे विभिन्न रंगों में रंगे इन्सान थे। इसके विपरीत नई दिल्ली उसे हिन्दुस्तान का यूरोप प्रतीत होता था यूरोपियन चौखटे में जड़े हुये नर-नारियों की खामोशी मानो विदेशी शासकों से विरासत में मिला हो। चाल में मानो कवायद का प्रदर्शन हो, बोल-चाल दबी दबी-सी कतई वर्णसंकर ढंग की, जिसका न तो कोई विदेश से मेल है और न देश से। एकदम यांत्रिक-ढंग का आचार-व्यवहार स्पष्ट शब्दों में कुल मिलाकर पीढ़ी की दासता से निर्मित जीवन, जिसकी झलक नई दिल्ली के मुख्य गोल बाजार की प्रत्येक दूकान, होटल, और जलपान-गृह आदि में स्पष्ट दिखाई देती थी।

दोपहर में नब्बन और मैना पैदल ही बाजार चले। अजमेरी दरवाजे से निकलकर हौजकाजी पहुँचे और वहाँ से नया बाँस की ओर जाने वाली सड़क पर मुड़ गये। अभी कुछ दूर ही चले थे कि एक गली के नुक्कड़ पर पुराने ढंग की मनिहार की दूकान देखकर मैना रुकी—नवाब साहेब, चूड़ियां पहिननी हैं।"

'आगे चलिये, चांदनी चौक में बहुत-सी दुकानें हैं।"

"नवाब साहेब, इन्हें चूड़ियाँ पहिनाना नहीं आता, ये किसी खानदानी चूड़ी वाले की दुकान हैं, चूड़ी यहीं पहिनेंगे।"

आमतौर से मैना कभी भी इस प्रकार का हठ नहीं करती थी। न जाने क्यों मैना का यह आग्रह नब्बन को अच्छा लगा—आपकी मर्जी आइये।"

बूढ़ा मनिहार दाढ़ी से मुसलमान प्रतीत होता था। दूकान के अंदर तनिक ओट में एक अधेड़ स्त्री बैठी थी–शायद बूढ़े मनिहार की पत्नी हो।"

"आओ बहू।" अधेड़ स्त्री ने मैना का स्वागत करते हुए कहा—"बैठो।"

मैना के सामने स्त्री ने चूड़ियों के ढेर लगा दिये। मैना बड़े ध्यान से रंग-बिरंगी चूड़ियों को देख रही थी और उन दोनों से तनिक हटकर खड़ा नब्बन यह सब देख रहा था।

जो चाहो पहिन लो वहू, मीनाकारी सबकी पक्की होगी।" अधेड़ स्त्री कह रही थी।

रंग विरंगी झिलमिलाती हुई चूड़ियों से हटकर एक ओर टंगी हरी चूड़ियों पर मैना की दृष्टि गई। एक नजर नब्बन की ओर मुस्कराते हुए देखकर मैना ने कहा—"वड़ी जी, वह पहिना दो।"

"ये सब्जवाली।"

"हाँ।"

"इनमें वढ़िया फिरोजावादी मेल की भी हैं—वह देख लो।"

स्त्री ने हरी चूड़ियां दिखाईं, चमकता हुआ हरा रंग। मैना ने हाथ आगे वढ़ा दिया।

एक हाथ में आठ चूड़ियां पहिनाकर स्त्री ने दूसरे हाथ की ओर हाथ वढ़ाया ही था कि मैना वोली—"वड़ी जी, अभी और डालो इसी हाथ में।"

"अच्छा वहू।" स्त्री प्रसन्नतापूर्वक वोली।

मैना ने चालीस चूड़ियां पहनीं। वीस एक हाथ में और वीस दूसरे हाथ में।

"पैसे दीजिये।" मैना नें साड़ी का छोर सिर पर ओढ़ते हुए कहा।

नब्बन ने जेब से पांच रुपये का नोट निकालकर मनिहारिन की ओर वढ़ा दिया। पांच का नोट स्त्री के हाथ में थमाकर मैना हट गई। स्त्री की प्रसन्नता का पारावार नहीं रहा। कुल दो रुपये की चूड़ियों के वदले पांच रुपये, ऐसी भाग्यशालिनी कभी-कभी ही आती है।

"सदा सुहागिन रहो वहू, चांद जैसा वेटा हो।" स्त्री ने आशीष दी।

नब्बन और मैना दोनों ने ही ये वाक्य दूकान से उतरते-उतरते सुना। कौन जाने उन दोनो पर इसकी क्या प्रतिक्रिया हुई?

कुछ क्षण दोनों मौन चलते रहे। नब्बन की दृष्टि वार-वार मैना की कलाइयों की ओर जाकर हरी चूड़ियों में उलझ जाती थी।

"वेगम!" धीमे स्वर में नब्बन ने कहा—"जानती हो हरी चूड़ियां किस वक्त पहिनी जाती हैं।"

"हर रोज बाजार में बिकती हैं, जब दिल चाहे तभी पहिनी जा सकती हैं।"

"सही है, लेकिन हिन्दुस्तानी रस्मो-रिवाज, हरी चूड़ियाँ सिर्फ उन कुमारी लड़कियों को पहिनने की इजाजत देते हैं जो दुलहिन बनने वाली हों। पहिली सुहागरात बीतने के साथ साथ ही हरी चूड़ियों की महमियत भी खत्म हो जाती है।"

ये बात है। चलो यूँ ही सही। आज की रात हरी चूड़ियों का ही तसव्वुर कीजिये। जिन्दगी में आज पहिली बार मैंने हरी चूड़ियाँ पहिनी हैं। समझना कि·········।"

"क्या समझूँ········ ?"

"समझना कि दोनों अजनबी हैं। आज की रात पहिली बार मिले हैं।" कहने को तो मैना कह गई, किन्तु नव्वन से आँखें न मिला सकी। बाजारू सही, फिर भी वह भारतीय नारी थी जो माँ की कोख से ही लज्जा और शीलता लेकर उत्पन्न होती है।

नये बाँस से निकलकर दोनों खारी बावली के बाजार में पहुँच गये। एक बाजार में तीन बाजार बने हुए थे। किराने की मुख्य दूकानों के सामने पटरी पर साग-सब्जी बेचने वालों की हलचल थी। पटरी के नीचे सड़क पर एक और अस्थायी बाजार लगा हुआ था। दिवाली का विशेष हाट··········मिट्टी के खिलौने, खील बताशे, पटाखे फुलझड़ी और मिट्टी के छोटे-छोटे दीये,·········दीये, बत्ती और तेल। रात्रि को अन्धकार हीन करने का सदियों का पुराना ढंग आज भी जीवित है। इसलिए कि विज्ञान उच्च-वर्ग का ही दास रहा है। झोंपड़ी और कोठरियों में आज भी तेल की सहायता से दिया और बत्ती ही जलती है।

मैना ने भी मोमबत्ती के कई बंडल लिये और दो-एक खिलौने भी। फिर निरर्थक ही चांदनी चौक से निकलकर दोनों फौव्वारा पहुँचे। वहाँ से परेड ग्राउण्ड के किनारे-किनारे चल जामा मस्जिद की परिक्रमा करते हुए चावड़ी बाजार होजकाजी होते हुए घर अर्थात् जी० बी० रोड पहुँचे

तो सूर्य अस्ताचल की ओर प्रस्थान कर रहा था।

शाम होते ही प्रेम आ पहुँचा। ढेरों पूड़ी-कचौड़ी, कई तरह की सब्ज़ी और हलवा आदि लिये हुए।

"अरे प्रेम साहेब, यह सब क्या है। क्या पूरे बाज़ार की दावत करनी है ?" लगभग छः आदमियों का खाना देखकर आश्चर्यचकित हो नब्बन ने पूछा।

"ज्यादह है तो कोई बात नहीं। कम नहीं होना चाहिये था। हाँ भाई साहेब आपकी बहिन ने परसों सुबह बुलाया है आपको—मैंने भी कह दिया कि कह दूंगा, आना न आना उनकी अपनी मर्ज़ी की बात है।"

'लेकिन क्यों ?" किन्तु क्षण भी न बीत था नब्बन फिर बोला—"ओ हाँ, ठीक हैं, मैं ज़रूर आऊँगा।"

"अच्छा तो फिर सुनाइये आज क्या कहना है ? ग़ज़ल या रुबाई, मुझे भी ज़रा जल्दी घर पहुंचना है।

"अरे भई प्रेम साहेब यह तो मैं भूल ही गया था, बेगम साहिबा क्या कर रही हो इधर आकर बैठो न ?'

"जी कुछ नहीं।" दरवाजे पर खड़ी मैना अन्दर आते हुए बोली—"देख रही थी चारों तरफ ही रोशनी की जा रही है। मोमबत्तियां लाई थी, जलादूं उन्हें ?"

"क्यों नहीं, क्यों नहीं। हाँ तो प्रेम साहेब कल सही। कल कोशिश करूंगा कि…………।"

"भाई साहेब ये नहीं होगा। मुहूर्त तो आज ही करना होगा।"

"लेकिन आपको तो जल्दी घर पहुँचना है न ?"

"ऐसी कोई खास जल्दी भी नहीं है, मैं इन्तजार कर सकता हूँ।"

"सुनिये दिवाली के दीये सभी को मिलकर जलाने चाहिये। आप दोनों भी आइये।"

तीनों मोमबत्ती जला-जलाकर यथा स्थान रखने लगे। लगभग पचास के करीब मोमबत्ती थी। काफी देर इसी काम में लग गई।

"बस बेगम, तुम्हारी दिवाली भी मन गई, लेकिन अगर इन मोमबत्तियों की झिलमिलाहट देखनी है तो यह बिजली की बत्ती बुझा दो। क्या ख्याल है प्रेम साहेब"……।"

"लाजवाब सूझ है।" प्रेम बोला।

मैना ने बत्ती बुझा दी। क्षण भर के लिए तो कुछ अंधेरा-सा प्रतीत हुआ किन्तु बाद का वातावरण सुहाना-सा लगा। चारों ओर कांपती हुई लौ में से प्रकाश उत्पन्न हो रहा था।

"तो फिर कुछ न कुछ कहा जाय,"…… क्यों प्रेम साहेब ? आओ बेगम बैठो न।"

पन्द्रह मिनट बात गये। मैना और प्रेम दोनों नब्बन का मुंह ताक रहे थे। नब्बन धीमे-धीमे कुछ गुनगुना रहा था।

"लो सुनो" ""प्रेम साहेब एक रुबाई कही है। बेगम सुनो"……।"

"जी सुन रही हूँ।"

"रुबाई अर्ज है—

तारीकी का रहे जमाने में न दाग़
उस नूरे हयात का लगाते हैं सुराग़
मौजे नफ़से सर्द दिये जाती है लौ
धारे पै फ़ना के हम जलाते हैं चराग़*

"बहुत बढ़िया।" प्रेम बोला।

"खूब।" मैना ने सिर्फ इतना ही कहा।

"आदाब अर्ज।" नब्बन ने कहा।

"भाई साहेब, दो लाइनें मैं भी सुनाता हूँ। आज दोपहर मे एक

---

*ये रुबाई हजरत फिराक गोरखपुरी की है।

अर्थ है—जीवन के उस प्रकाश का पता लगा रहे हैं कि जमाने मे अंधकार का धब्बा न रहे। ठंडा भावनाओं की तरह लौ दिये जाती है। हम मृत्यु की धारा पर दीपदान कर रहे हैं।

अखवार में इस पर नजर पड़ गयी थी। ऐसा मालूम होता है मानो कहने वाले ने आप पर ही कहा है।"

"मुझ पर ?" नब्बन ने पूछा।

"जी हाँ, वैसे फिराक साहेब का कलाम है।"

"इरशाद फरमाइये।"

"कहा है—

खुदाओ देवताओं और फरिश्तों ने तो झक मारा,

मुहब्बत को मुहब्बत कर दिया मिट्टी के पुतलों ने।

"वहुत खूब।" मैना बोली।

"भाई साहेब आपको पसन्द नहीं आया।"

"चीज वढ़िया है, लेकिन प्रेम साहेब मुझ जैसे ना चीज इन्सान से इसका क्या ताल्लुक है ?"

"क्या ताल्लुक है यह तो मैं जानता हूँ।" उठते हुए प्रेम ने कहा— "कल मुलाकात होगी। अच्छा जी नमस्ते।" मैना की ओर हाथ जोड़ते हुए प्रेम वोला।

"नमस्ते।" मैना ने उठकर हाथ जोड़ते हुए कहा।

"ठहरिये प्रेम साहेव, चलिये आपको कुछ दूर तक छोड़ आता हूँ।"

"नहीं भाई साहेव मैं चला जाऊँगा, आप खाना खाइये।" बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये प्रेम चला गया।"

मैना पुनः वैठ गयी। नब्बन ने सिगरेट सुलगाई और गुनगुनाने लगा। कुछ क्षण वाद खामोश हो गया, चुपचाप नीची दृष्टि किये सिगरेट पीता रहा।

"क्या दूसरी रुवाई कहने जा रहे हैं नवाव साहेव।" मौन तोड़ते हुए मैना वोली।"

"नहीं तो" सिर उठाकर मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए नब्बन ने कहा।

"तो फिर क्या सोच रहे हैं ?"

कोई खास बात तो नही, बेगम ! मैं सोच रहा था कि आज जब कि साइंस इतनी तरक्की कर चुकी है। आदमी की जिन्दगी को इससे क्या मिला ? कुछ तो मिला है रेल, मोटर, रेडियो, पक्की सड़कें, बिजली की रोशनी वगैरा-वगैरा, यह सभी चीजें इन्सानी जिन्दगी के लिये जरूरी तो हैं लेकिन जिन्दगी के लिये कुछ और भी चाहिये। मसलन इन्सानी मुहब्बत''''''बता सकती हो साइंस ने इन्सानी मुहब्बत को कितना बढाया है।"

मैना मुस्कराई—"नवाब साहेब, इस सवाल का जवाब तो कोई पढी-लिखी औरत ही दे सकती है। बचपन में माँ ने एक मौलवी साहेब को दस रुपये महीने पर मुझे पढ़ाने के लिए रखा था, चार किताबें ही पढ़ा पाए थे कि बेचारे मर गए। अब तो जो कुछ पढ़ा था वह भी भूल गई हूँ। लेकिन सवाल दिलचस्प है आप ही बताइये कि साइंस से इन्सानी मुहब्बत को कितना बढ़ाया है।'

"मैं भी कोई ज्यादह पढा-लिखा तो हूँ नही। मेरे ख्याल से साइंस ने इन्सानी मुहब्बत को चौपट कर दिया। या यूँ कहो कि साइंस बाजार मे बिकने वाली चीज बन गई। जो लोग उसे खरीद सकते थे उन्होंने मुनाफे का माल समझकर उसे खरीद लिया, इन्हीं लोगों ने जो रात को तुम्हें भी खरीदते हैं, तुम्हारा वह जिस्म खरीदते है और मेरे दोस्त प्रेम साहेब की मेहनत खरीदते हैं।

''''''''।" मैना कुछ नहीं बोली।

"अब दिक्कत यह है बेगम, जो इन्सान मेरा मतलब है खरीदे जाने वाले इन्सान, इस बात को नहीं समझते खुश रहते हैं, जो कुछ वक्त-बेवक्त मिल जाता है उसे ही खुदा की रहमत समझकर उसका शुक्र अदा करते हैं। लेकिन जो लोग इस खरीद-फरोख्त के राज को समझते हैं वह बेदार रहते हैं, वह चाहते हैं कि इस दुनिया का मौजूदा ढाँचा बदल जाय। वह महसूस करते है कि दरिन्दो की दहशत ने इन्सान से इन्सानियत छीन ली है। जानती हो प्रेम साहेब की बीवी ने मुझे परसो क्यों बुलाया है ?"

"क्यों ?" मैना ने पूछा।

"एक रोज़ यूं ही मैंने उसे बहिन कह दिया था, उसका बच्चा बीमार था जरा तसल्ली दे दी थी। बस इतनी-सी बात से प्रेम साहब मेरे अजीज दोस्त बन गए और उनकी बीवी ने मुझे सचमुच भाई तसलीम कर लिया। आज खाने की दावत दी लाख टालने पर भी कितना खाना वह यहां दे गए हैं, जबकि उनकी आमदनी बहुत ही कम है।"

"परसों किस लिए बुलाया है ?" मैना ने अपनी उत्सुकता प्रकट की।

"परसों हिन्दुओं में भाई और बहिनों का एक त्योहार होता है "भैयादूज।"

"हां, हां, होता है, प्रेम साहब की बीवी ने आपको भाई कहा है इसलिए उन्होंने टीका करने को बुलाया होगा।"

"जबकि प्रेम साहब जानते हैं कि मैं कौन हूं, मेरा पेशा कितना जलील है। लेकिन चूंकि वह खरीदे जाने वाले इन्सानों में से हैं इसलिए इन्सानियत पसन्द है। बिना किसी सुबूत के ही उन्हें मेरी शराफत पर ऐतबार है। अनजाने में ही सही खरीदा जाने वाला इन्सान चाहता है कि इन्सान की इन्सानियत बुलन्द हो। खैर छोड़िए, लाइए फिर खाना खा लिया जाय।"

"खाने के बाद फिर कहीं घूमने चलियेगा ?"

"जैसा आपका हुक्म होगा, हम तो हुजूर के हुक्म के गुलाम हैं।"

"शुक्रिया।" उठते हुए मैना बोली।

किसी आदमी ने मेरी बिना इजाजत के भी स्वामीजी को मेरी हवेली में स्थान दे दिया है तो इसमें क्या हर्ज है।

किन्तु बाद में पता चला कि स्वामीजी को ठहराने के साथ-साथ लाला गूदड़मल ने मेरी हवेली का अनुचित प्रयोग करके उसे जनसंघ का चुनाव कार्यालय भी बना दिया है। इलाके के सभी आदमी अच्छी तरह जानते है कि मेरी विचारधारा सदैव कांग्रेस समर्थक रही है। राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ या इसके नये रूप जनसंघ से मेरा कभी कोई सम्बन्ध नहीं रहा है।

इधर बिहार से आने वाले एक सज्जन ने बताया कि स्वामी घसीटानन्द स्वामी के वेश में एक धूर्त आदमी है जो हर जगह जाकर पहिले तो अपने त्याग का झूठा रौब दिखाता है और फिर लोगों को फुसलाकर गो-रक्षा के नाम पर लम्बी-लम्बी रकमें लेकर चम्पत हो जाता है।

मुहल्ले के सभी बड़े-बूढ़ों की राय है कि ऐसे पाखण्डी आदमी को मुहल्ले में नहीं रहने देना चाहिये। पूरे इलाके की राय से मैंने अपनी हवेली को खाली कराने के लिए मजबूरन पुलिस की सहायता ली है।

'छदम्मीलाल'

जो भी इस पोस्टर को पढ़ता इस उत्सुकतावश कि स्वामीजी का क्या हुआ? छदम्मीलाल की हवेली की तरफ चल देता।

हवेली के इर्द-गिर्द सैकड़ों आदमियों की भीड़ जमा थी। दरवाज़े के ठीक सामने पुलिस की लारी खड़ी थी।

हवेली के बाहर खड़ा जन-समुदाय सोच रहा था कि अन्दर ज़रूर धर-पकड़ या मार-पीट हो रही होगी। क्योंकि जैसे ही भीड़ धीरे-धीरे खिसककर हवेली के दरवाजे के निकट पहुँचती, दरवाज़े पर नियुक्त पुलिस वाले जमीन पर लाठी पटखकर चिल्लाते—"पीछे हटो.......रास्ते से एक तरफ हो जाओ.......चलते-फिरते नजर आओ।"

किन्तु आशा के विपरीत अन्दर सर्वत्र शान्ति विराजमान थी। हवेली के एक बड़े कमरे के बीचों-बीच पुलिस इन्सपैक्टर महोदय विराजमान

थे, उनके दायीं ओर सुन्दरलाल बैरिस्टर और राजवैद्य पण्डित धूरे गुसाई बैठे थे, बायीं ओर लाला गुदड़मल बैठे थे और ठीक सामने स्वामी घसीटानन्दजी मृग-छाला पर आसीन थे।

अंदर से चाहे गुदड़मल का हृदय फॉय-फॉय जल रहा हो, किन्तु प्रगट रूप से वह मुस्कराकर कह रहे थे—"हमारी और कांग्रेस की राजनीति में बहुत अंतर है इन्सपैक्टर महोदय। हम केवल नीति में विश्वास रखते हैं और कांग्रेसी नीति और अनीति दोनों का प्रयोग करते हैं। चुनाव अपने स्थान पर है और मानवी सम्बन्ध अपने स्थान पर, जैसा छल हमारे कांग्रेसी नेता वैद्य गुसाईंजी ने चुनाव मे सफलता पाने के लिये हमारे साथ किया है वैसा तो हम मृत्यु पर सफलता पाने के लिये भी नहीं करेंगे।"

गुसाईंजी खिलखिलाकर हँसे—"क्या कहने हैं लालाजी तुम्हारी राजनीति के, आपकी राजनीति मैंने म्युनिस्पिल चुनाव में देख रक्खी है। सुन्दरलाल जी! चौदह साल का लड़का पैंतीस साल की स्त्री को छेड़ सकता है?"

"जी मैं समझा नहीं?" सुन्दर लाल बोले।

बड़ा मजेदार किस्सा है, इन्सपैक्टर साहेब तुम्हें तो याद होगा। म्युनिस्पिल चुनाव से पहिले रोज संघियों ने सोचा कि कोई ताजा स्टन्ट खेला जाय। सो जनाब वह उन्होंने.वगीची टट्ट्शाह में खेला। पैंतीस साल की अधेड़ औरत ने एक तेरह चौदह साल के लड़के को राह चलते पकड़ लिया और चिल्लाना शुरू किया 'इस बदमाश ने मुझे छेड़ा है।' लड़का मुसलमान का था औरत हिन्दू थी। बस साहेब हमारे लालाजी वहीं थे ही साथ मे इनके कुछ चेले भी थे। दो-चार आते-जाते मुसलमानों को पीट दिया और सारी दिल्ली में उड़वा दिया दंगा हो गया। हिन्दू देवी की एक मुसलमान ने इज्जत ले ली [illegible] रक्षा...............।"

'बस-बस रहने दो गुसाईंजी। कहने और करने में बड़ा अन्तर होता है। ये संघ ही था जिसने पाकिस्तान में हिन्दुओं की रक्षा की, वरना मलेच्छ एक भी हिन्दू को वहां से जीता न आने देते।"

"जी हां संघ ही रक्षा कर रहा था, हिन्दुस्तानी फौज तो वहां झक मार रही थी। पाकिस्तान से लाखों आदमी लुटकर आये, परन्तु ताज्जुब है जितने संघी सेठ वहां थे न तो लुटे न पिटे, आज भी बड़े ठाठ से यहां जनसंघी बने बैठे हैं।"

गूदड़मल कुछ कहना ही चाहते थे कि इन्सपैक्टर साहेब बोल उठे—"यह चोंचे तो चलती ही रहेगी, मेरी राय में पहिले कुछ काम की बातें हो जायें तो ज्यादह अच्छा है।

"जी हां मेरी भी यही राय है।" सुन्दरलाल बोले।

"लाला गूदड़मलजी, देखिये हम तो आपके भी नौकर हैं और कांग्रेस वालों के भी, थोड़ी-सी तकलीफ आपको करनी पड़ेगी। दो आदमी ले आइये, ताकि मैं आपकी और स्वामीजी की कच्ची जमानत की खानापूरी करलूं। बैरिस्टर साहेब कह ही रहे हैं कि आगे मामला बढ़ाने का इनका इरादा नहीं है. मकान का कब्जा इन्हें दे ही दिया समझो बस यह काम भी निपटवा दीजिये। सुबह उठकर सीधा यहां चला आया हूं मुझे भी छुट्टी मिले जाकर नहाऊं धोऊं।"

सुन्दरलालजी तपाक से बोले—"गुसाईंजी कम से कम कुछ चाय पानी का तो प्रबन्ध कीजिये।"

"अभी लीजिये, अभी हुआ जाता है।"

"वैद्यजी आप बैठिये बेकार तकलीफ करने की जरूरत नहीं है।" इन्सपैक्टर ने मृदु शब्दों में कहा।

"अजी वाह तकलीफ काहे की है।" चलते हुए गुसाईंजी बोले। स्वामीजी जो पालथी मारे अधखुली आंखों से ध्यान मग्न थे। उन्होंने भी जाते हुए गुसाईंजी को आग्नेय चितवन से देखा और पुनः ध्यान मग्न हो गये।

कुछ क्षण सोचने विचारने के बाद गूदड़मल बोले—"तो फिर मैं लाता हूँ आदमियों को।"

"जी हाँ ले आइये।"

वहाँ से उठकर गूदड़मल सीधे अपने घर पहुँचे। बैठक में मुहल्ले के पन्द्रह बीस लड़कों के अतिरिक्त शहर के प्रसिद्ध संघी नेता मोहनलाल भी उपस्थित थे।

"छदम्मीलाल धोखा कर गया मोहनलालजी, इतने दिनों के करे कराये परिश्रम पर पानी फिर गया।" गूदड़मल का स्वर ऐसा था मानो किसी सम्बन्धी की मृत्यु का समाचार दे रहे हों।

"हाँ मुझे तो इन लड़कों ने कार्यालय में जाकर बताया, खैर जो होना था हो गया अब क्या परिस्थिति है?" मोहनलाल ने धैर्य-पूर्वक प्रश्न किया।

समस्त लड़के दोनों नेताओं की बातचीत ऐसे दत्तचित्त होकर सुन रहे थे मानो गीता पाठ हो रहा हो (यह लड़के कहने भर को ही लड़के थे, इनमें से पिचानवें प्रतिशत विवाहित युवक थे, और पचास प्रतिशत बच्चों के बाप भी होंगे।)

"हवेली का कब्जा तो पुलिस ने हमसे ले ही लिया।" गूदड़मल कह रहे थे—"अब इन्सपैक्टर मेरी और स्वामीजी की कच्ची जमानत माग रहा है।"

"हूँ।" गम्भीरता-पूर्वक मोहनलाल बोले—"ऐसा करो कि तुम अपनी जमानत तो लिखा दो, स्वामीजी को रहने दो।"

"अगर उन्हें जेल ले गये तो?"

"यही तो हम चाहते हैं कि पुलिस उन्हें जेल ले जाये। इलाके में जो कुछ आज हुआ है उसका जवाबी प्रचार तो करना ही होगा। स्वामी जी को अगर वह जेल ले जायें तो हमें प्रचार करने का अवसर मिलेगा कि पुलिस और कांग्रेसी सरकार जनसंघी नेताओं की वाणी का दमन करके उन पर जेल में अत्याचार कर रही है।"

इस सुझाव (अथवा आज्ञा से) गूदड़मल की आँखों में चमक आ गयी अच्छा तो मैं जाता हूँ। किसी को साथ ले जाकर अपनी जमानत कराये आता हूँ।"

"चलो मैं अभी चलता हूं।" लड़कों की मंडली पर विहंगम दृष्टि डालकर मोहनलाल बोले—"यहाँ जितने स्वयं सेवक उपस्थित हैं वह एक-एक दो-दो करके छदम्मीलाल की हवेली के बाहर एकत्र हो जायें। दो स्वयं-सेवक आस-पास के अन्य स्वयं-सेवकों को शीघ्रता पूर्वक जाकर वहाँ पहुँचने की सूचना दे दें। अगर पुलिस स्वामीजी को अपने साथ ले जाती है तो सबको नारा लगाना है—"स्वामीजी रिहा करो, कांग्रेसशाही का नाश हो।" आइये गूदड़मलजी।

किन्तु गूदड़मल और मोहनलाल से पहिले बाकायदा लैफ्टराइट ढंग से लड़के चले गये। उन सबके पीछे गूदड़मल और मोहनलाल धीरे-धीरे लीडरशाही रौब के साथ छदम्मीलाल की हवेली की ओर चले।

अन्दर मिठाई और नमकीन के साथ चाय पान हो रहा था। चाय-पान आरम्भ करने से पहिले गुसाईंजी ने जाने क्या सोचकर मिठाई और नमकीन से भरी हुई एक तश्तरी स्वामी जी के आगे भी सरका दी थी, एक बार तो उन्होंने पुनः आँखें खोलकर उस पर दृष्टिपात किया किन्तु फिर न जाने क्या सोचकर नेत्र मूंद लिये।

"आइये मोहनलालजी आइये आइये।" उछलते हुए गुसाईं जी ने फब्ती कसी—"लीजिये इन्सपैक्टर साहेब अब की बार बड़ी तोप आ रही है।"

किन्तु मोहनलाल ने अपने मुख-मण्डल की गम्भीरता पर न तो खिसियाहट आने दी न मुस्कराहट। शान्त-भाव से कमरे में आकर सर्व-प्रथम उन्होंने स्वामीजी के चरण-स्पर्श किये फिर सब को एक बार ही हाथ जोड़कर नमस्कार करके आसन ग्रहण कर लिया।

"लालाजी एक ही आदमी लाये।" चाय के प्याले को एक ओर सरकाते हुए इन्सपैक्टर ने कहा—"खैर एक ही सही, लीजिये साहेब दोनों

कागजों पर दस्तखत कर दीजिये।"

तनिक खखारकर मोहनलाल बोले—"लाला गूदड़मल साधारण गृहस्थ आदमी हैं, सब जानते हैं कि उनके साथ जालसाजी की गयी है, फिर भी आप चाहें तो उनकी जमानत करवा लीजिये, किन्तु स्वामी जी का तो यह अपमान है ?"

गुसाईंजी चौंके, सुन्दरलाल भी जरा हिले डुले। दोनों मन ही मन सोच रहे थे कि इस नयी चाल का क्या अर्थ है ?

इन्सपैक्टर तनिक झुंझलाहट सहित बोले—"आप भी क्या बात कर रहे हैं। नाम की जमानत होती है ये तो, इसमें मान अपमान की क्या बात है ?"

एक कागज पर दस्तखत करके दोनों कागजों को इन्सपैक्टर की ओर बढाते हुए मोहनलाल ने दर्पण स्वर में कहा—यह तो हम ही समझते हैं कि इसमें स्वामीजी जैसे तपस्वी का कैसा घोर अपमान है।"

"जैसी आपकी मर्जी, तो स्वामीजी को मैं अपने साथ लिये जाता हूँ। उठिये स्वामीजी, बैरिस्टर साहिब हवेली पर कब्जा पाने का बयान पाने मे मिजवा देना।"

सब चल दिये, आगे-आगे गुसाईंजी इन्सपैक्टर से कुछ घुसर-पुसर करते चले आ रहे थे, पीछे-पीछे मोहनलाल भी धीमे-धीमे स्वामीजी को कुछ पढाता जा रहा था, सबसे पीछे गूदड़मल और सुन्दरलाल थके हुए सिपाहियों की तरह स्लो मार्च कर रहे थे।

हवेली के दरवाजे से सबसे पहिले गुसाईंजी बाहर निकले, फिर इन्सपैक्टर दरवाजे पर एक क्षण को आकर रुका और जैसे ही स्वामीजी आये उनका हाथ पकड़कर उनने लारी की ओर कर दिया। मुफ्त की सवारी समझकर स्वामीजी बिना किसी हीले-हवाले के लारी में चढ गये। स्वामीजी का लारी मे चढना था कि चारों तरफ से ग्रामोफोन रिकार्ड की तरह नपे तुले स्वर में नारा लगा—"स्वामीजो को रिहा करो। कांग्रेस शाही का नाश हो।"

तभी गुसाईंजी जो अभी शांत चबूतरे पर खड़े थे—"बात सुनो।" शब्दों को दहाड़ के ढंग से उच्चारण करते हुए चबूतरे से कूदे और एक नारा लगाने वाले का हाथ पकड़कर खींचते हुए कहा—"यहाँ आवे लच्छूराम वाले, स्वामीजी के लिये इतना चिल्ला रहा है, कुछ आदर या ममता भी है उसके लिए ?"

इस अकस्मात घटना से युवक कुछ घड़बड़ा-सा गया। भीड में नजर उठाकर गूदड़मल या मोहनलाल को देख पाने का प्रयत्न करते हुए कुछ बदहवासी में उसने कहा—मैं स्वामीजी के लिये जान दे दूंगा।"

"इन्सपैक्टर साहेब निकालो पर्चा, बच्चू पहिले उस ढोंगी की जमानत तो दे, जान फिर कभी दीजो।"

उखाड़-पछाड़ के झमेले में पड़कर युवक भूल गया कि मोहनलाल ने लाला गूदड़मल से क्या कहा था। इन्सपैक्टर ने फुर्ती से कागज और जेब से पैन निकाल कर दे दिया। युवक ने भी अकस्मात पड़ जाने वाली आफत से छुटकारा पाने के हेतु तुरन्त दस्तखत घसीट दिये।

"इन्सपैक्टर साहेब फेंको रंगे सियार को लारी से बाहर।" पुनः चबूतरे पर झपट्टकर चढ़ते हुए गुसाईंजी तन-बदन का सारा जोर लगाकर बोले—"भाइयो यह संघी जिस स्वामी के लिए दुनिया दिखावे के लिए यहाँ बाहर इतनी हाय तौबा मचा रहे हैं अंदर इनके नेताओं ने उस स्वामी की जमानत तक देने से इन्कार कर दिया। अब कह सुनकर मैंने उसकी जमानत तक देने का इन्तजाम कर दिया है। बोलो महात्मा गांधी की जय।"

भीड़ ने महात्मा की जय का नारा लगा दिया। तभी पुलिस की लारी घर्र-घर्र करती हुई वहाँ से चल दी।

संघी लड़के और उनके साथी स्वामी घसीटानन्द कर्तव्य-विमूढ़ से होकर एक ओर सिमट गये। गुसाईंजी निरंतर महात्मागांधी और जवाहरलालनेहरू की जय के नारे लगवाये जा रहे थे। ९

दूसरा दाँव भी खाली गया। गूदड़मल पर कुछ पस्ती-सी छा गई।

मोहनलाल सोच रहे थे कि अगर गुसाईं चुप हो जाय तो वह भी एक तकरीर झाड़ दें किन्तु गुसाईं कच्चा खिलाड़ी थोड़े ही था। अब उसने नारा बदल दिया था—"देश-द्रोहियों का नाश हो।"

जाने क्या सोचकर सब हो वहाँ से खिसक चले। स्वामी जी, गुदड़ मल और मोहनलाल संघियों की भीड़ में घुस गये। अन्दर पहुँचकर उन्होंने अपने अनुगामियों को भी खिसक चलने का संकेत करते हुए नारा लगवाया —"कौन करेगा देश अखंड ?"

"भारतीय जनसंघ।"

"हिन्दू धर्म की !"

"जय।"

भीड़ दो टुकड़ों में विभक्त हो गई। आधी संघियों के साथ ड्रामे का नया सीन देखने चली गई। आधी वहीं गुसाईंजी के नेतृत्व में नारे लगाती रही।

सुन्दरलाल हवेली के मुख्य द्वार पर खड़े देख रहे थे कि गुसाईं जैसे राजनीतिज्ञ का भारतीय जनता में क्या महत्व है—देख रहे थे और मुग्ध हो रहे थे।

इस प्रकार इस चुनाव-क्षेत्र मे चुनाव आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ।



१९

सायंकाल बीत चुका था। नव्वन कुछ देर जामा मस्जिद की पैड़ियों पर बैठा रहकर उठ आया। प्रेम ने कल ही कह दिया था कि कल दूकान में देर लगेगी, इसलिए रात में मुलाकात नहीं हो सकेगी। उसकी इच्छा थी कि मैना के पास जाकर बैठे, यूं ही कुछ गप-शप करके समय बिताये, किन्तु उसके पास एक ग्राहक इस समय मौजूद था और अभी रात-भर में दो और आने थे।

अकेलापन नव्वन को बहुत बुरी तरह खल रहा था। सड़क पार करके वह परेड ग्राउण्ड में आ गया। टहलते-टहलते सोचा कि एक रुबाई या शेर ही कहा जाय, किन्तु उधर भी कुछ रुचि न हुई।

घूमा-फिरता वह लाल क़िले के बस स्टैण्ड पर खड़ा हो गया। कई बसें आईं और चली गईं, किन्तु उसे तो कहीं जाना था नहीं। सड़क पार

"मजदूरों की लारी खड़ी थी, ग्रामोफोन रिकार्ड बज रहे थे। कुछ देर बस स्टैण्ड पर बिना देने के बाद उसकी इच्छा हुई कि सड़क पार किले के मैदान की घास में कुछ देर बैठा जाए।

अभी आधी सड़क ही पार की थी कि सामने से एक कार तेजी से आती हुई दिखाई दी। वह रुक गया, इस इरादे से कि कार निकल जाये तो सड़क पार करे।

किन्तु कार एकदम उसके निकट आकर रुक गई—'शायर साहेब आदाब अर्ज।"

नव्वन चौंका, कार चलाने वाली युवती का चेहरा परिचित-सा लगा, कहीं देखा अवश्य है, परन्तु कहाँ ?

कौन है ? यह सोचते हुए नव्वन हाथ उठाकर बुदबुदाया—'आदाब अर्ज।"

"खूब हैं साहेब आप भी, उस रोज क्लब आने का वायदा करके ऐसे गायब हुए कि आज तक उधर आने की तकलीफ भी गंवारा न की, कद्र-दानों से बेवफाई अच्छी नहीं होती शायर साहेब।"

अब नव्वन को ध्यान आया कि यह छदम्मीलाल की आवारा बेगम है। वह मुस्कराया—"वाकई गलती हुई माफी चाहता हूँ, कल जरूर हाजिर हूँगा।"

"ऐसे माफी नहीं मिलेगी जनाब, आपको अभी मेरे साथ चलना होगा।"

"जी इस वक्त·······दरअसल इरादा यह था कि सामने तनहाई में में बैठकर कुछ गुनगुनाने की कोशिश करूँगा।"

बीच सड़क पर कार खड़ी थी, सामने से आने वाली लगातार कारों और बसों के कारण पीछे कई बसें और कारें रुक गई थीं। फलस्वरूप लगातार हार्न बज रहे थे। तभी कहीं से ट्रैफिक पुलिसमैन की सीटी भी सुनाई दी।

"आइये भी साहेब, देखिये आपकी जिद की वजय से 'रुवामख्वा चलान हो जायगा।"

अनिच्छापूर्वक नव्वन आगे से घूमकर रम्भा के बराबर आ बैठा। कार दौड़ने लगी।

"कुछ सुनाइये ना ?" रम्भा ने कहा।

"जी नहीं कुछ सुनना चाहता हूँ, आमतौर से मैंने देखा है कि नई-दिल्ली में रहने वाले पुरानी दिल्ली पसन्द नही करते—आप इधर कैसे निकल आईं।"

"आपको शायद मालूम नहीं, आपके दोस्त पुरानी दिल्ली से चुनाव लड़ रहे हैं।"

"जी यह तो मालूम है, आज सुबह ही उनसे मुलाकात हुई थी, अलबत्ता ये मालूम नहीं था कि इस जहमत में आपको भी पुरानी दिल्ली के चक्कर लगाने पड़ेंगे।"

"मजबूरी है शायर साहेब, हिन्दुस्तान है यह, औरतजात को माँ-बाप जिसके साथ बाँध देते हैं उसी से निभकर चलना पड़ता है।"

नव्वन की इच्छा हुई कि कहे—और आप भी निभकर चलने की क्या लाजवाब मिसाल कायम कर रही हैं, किन्तु प्रकट रूप में उसने कहा—"किधर चल रही हैं ?"

"जिधर आप चाहें।"

"मैं तो चाहता हूँ कि वापस मुड़कर क़िले के मैदान की तरफ ही चलिये।"

रम्भा हँसी—"क़िले के मैदान से आपको बहुत मुहब्बत है ?"

"जी हाँ, इस मैदान में न जाने मेरे कितने बुज़ुर्गों की हड्डियाँ दबी पड़ी हैं।"

रम्भा निरुत्तर हो गई। दरअसल वह साथ वालों से करारे जवाब की अपेक्षा किसी हद तक खुशामदी अथवा कहिए कि अपने रूप की तारीफ ही अधिक सुना करती थी।

दिल्ली दरवाज़े की वगल से निकलकर कार शान्त वातावरण में दौड़ रही थी। कुछ देर की चुप्पी के बाद रम्भा फिर बोली—"तो हुजूर हम से नाराज़ हैं।"

"जी ग्रापसे नहीं, ग्रपने ग्राप से नाराज़ हूँ, लाख कोशिश करता हूँ कि सोसाइटी में बैठने के काबिल बनूँ लेकिन"........"कह नहीं सकता कि मेरे दिमाग़ में खराबी है या सोसाइटी में बुनियादी खामी है।"

कार धीमी करके मोड़ते हुए रम्भा बोली—"इस सड़क पर कभी हुजूर की सवारी ग्राई है ?"

"शायद नहीं।"

यह राऊज़ एवेन्यु है, नई दिल्ली के चन्द खूबसूरत ग्रौर खामोश मुहल्लों में से एक, शायरों ग्रौर कवियों के लिए बेहतरीन जगह"........।"

"माफ़ कीजियेगा, क्या ग्रापको भी शायरी का शौक है।"

"जी सिर्फ सुनने का।"

"तो फिर ग्राप कैसे कह सकती हैं कि शायरों के लिए फलाँ जगह मौज़ूँ नहीं है या फलाँ बेहतरीन है ?"

"क्यों ग्रापको यह माहौल पसन्द नहीं है ?"

"जी नहीं, शायरी वहाँ होती है जहाँ ज़िन्दगी होती है। कब्रिस्तान ग्रौर श्मशान में शायरी नहीं हुग्रा करती। शायर को दिमागी शान्ति की ज़रूरत हुग्रा करती है।"

बहस रम्भा को दिलचस्प लगी। बोलीं—"दिमागी शान्ति यहाँ से ज्यादह ग्रौर कहाँ मिलेगी ?"

ग्रर्ज़ किया न, शायर को दिमाग़ी शान्ति वहीं मिलेगी जहाँ ज़िन्दगी होगी। उस्ताद ग़ालिब का मकान कहाँ था जानती हैं ग्राप ?"

"जी नहीं।" कुछ सकुचाते हुए रम्भा बोली।'

"जी वह ऐसे मुहल्ले में था जो उनके ज़माने में सबसे ज्यादह गुल-ज़ार मुहल्ला था। दिन की वात छोड़िये उनके ज़माने में शायद रात को भी वह मुहल्ला ग्रापके इस मुहल्ले जैसा खामोश नहीं रहता ...।

क्या जगह है ?" राऊज़ एवेन्यु पर दृष्टिपात करते हुए नव्वन ने कहा—"मानो लोग कबूतरों की तरह यहां सिर्फ 'गुटर गूं' से ज्यादह बोल ही नहीं सकते। बेगम साहिबा, हमारे तुलसीदास ने रामायण गंगा के किनारे जिस मंदिर में लिखी थी वहां हजारों आदमी भजन पूजा के लिये रोज आते थे। हिन्दी और उर्दू शायरी के काबिले इज्जत बुजुर्ग मरहूम जनाब नजीर साहेब की बेनजीर शायरी चौपालों और चबूतरों पर बैठकर लिखी गई है।"

राऊज़ एवेन्यु बीत चुका था, कार पुल के नीचे से निकलकर भीड़ भरी सड़क से गुजरती हुई कनाट प्लेस में घूम रही थी।

"आइये।" कार रोकते हुए रम्भा ने कहा—"शायर को इतना खुश्क होना नुकसानदेह होता है, जरा रंगीन हो जाइये।"

नव्वन ने दृष्टि उठाकर देखा। सामने 'बार' था। अपने स्थान पर बैठे-बैठे ही नव्वन ने कहा—"जी यह शौक मुझे नहीं है।"

"उठिये तो सही, शौक पैदा करने से हुआ करता है।"

"जी नहीं माफ कीजिये।"

"उफ, अरे साहब बैठे रहियेगा, यकीन मानिए जबरदस्ती नहीं करूंगी। उठिये।"

बुरे फंसे, मन ही मन कुढ़ते हुए नव्वन कार से उतरा। रम्भा शायद इस भय से कि कहीं ठहर न जाय नव्वन का हाथ पकड़कर चल रही थी।

बार में एकान्त सेवियों के लिए बने छोटे-से पर्देदार केबिन में बैठ कर रम्भा ने दो पैग व्हिस्की का आर्डर दिया।

नव्वन ने बोलना व्यर्थ समझकर चुप ही रहना उचित समझा।

बैरा दो पैग तथा कुछ अन्य वस्तुएं रख गया, बेताबी से एक गिलास उठाते रम्भा बोली—"तकल्लुफ छोड़िये ना उठाइये गिलास।"

"जी नहीं।" कठोर स्वर में नव्वन बोला।

एक सांस में ही रम्भा हाथ का गिलास पी गई—"बहुत खुश्क

आदमी हैं आप शायर साहब !" इतना कहकर उसने दूसरा गिलास भी चढ़ा डाला।

कुछ देर वह मौन मेज पर सिर टेके बैठी रही। नव्वन ने सिगरेट सुलगाई और आँखें मूद कर गुनगुनाना शुरू किया।

"उहूँ।" लगभग दस मिनट बाद रम्भा ने सिर उठाया—"मजा नहीं आया। वाय-वाय।" वह चिल्लाई।

"जी।" उसने आकर कहा।

"एक पैग और लाओ।'

वाय चला गया, नव्वन की इच्छा हुई कि उठकर चल दे। किन्तु यह सोचकर रुक गया कि जरा देखें तो सही कितनी पीने वाली है यह ?

तीसरा गिलास भी आ गया।

रम्भा एक-एक घूंट मजा लेकर पी रही थी—"शायर साहेब ! आप मुझसे नाराज हैं, बहुत बुरी बात है। मैं बहुत बदनसीब औरत हूं। किस्मत ने मुझे लंगूर के साथ बांध दिया है, बताइये मैं क्या करूं ? दुनिया बड़ी लालची है शायर साहेब, सुन्दरलाल को देखिये ना, मैं समसमझती थी कि वह मुझे प्यार करता है। लेकिन वह हरामजादा अव्वल दर्जे का लालची निकला। मैंने इसे अपने यहाँ इसलिये नौकरी दी थी कि वह मेरा अहसान माने, मुझ से मुहब्बत करे, कमीना कहीं का, वह लाला की खुशामद करता है इसलिए कि वह उसे मिल का मैनेजर बना दे..........मेरी बदनसीबी पर तरस खाइये शायर साहेब।;

नव्वन ने कोई उत्तर नहीं दिया। न जाने क्यों यहाँ का वातावरण उसका दम घोटे डाल रहा था। रम्भा कहे जा रही थी—"मुझे आपकी दोस्ती पर नाज है जनाब, आप एक शानदार आदमी हैं।"

इतना कहकर रम्भा ने फिर मेज पर सिर रख दिया। अस्फुट स्वर में अब वह न जाने क्या-क्या बहक रही थी। अचानक वह उठी और लड़खड़ाती हुई आकर नव्वन के गले में बाहें डालकर बोली—"..........

दुनिया की परवाह नहीं करती.......आपकी दोस्ती मैं किसी प्रकार भी हासिल करूँगी।"

"बैरा।" नव्वन थे रम्भा की बाहों को झटके से हटाते हुए पुकारा।"

"बिल लाओ, जल्दी से......।"

"नहीं.......एक....पैग........।" नव्वन से लिपटने का प्रयत्न करते हुए रम्भा ने लड़खड़ाते हुए स्वर में कहा।

बाय बिल ले आया। पास पड़े रम्भा के बटुवे में से बिल चुका कर नव्वन ने रम्भा को हाथ से पकड़कर वहाँ से ले चलना चाहा, किन्तु केबिन से बाहर निकलते ही वह गिरते-गिरते बची। मजबूरन नव्वन उसे दोनो हाथों से थाम कर चला।

किन्तु बाहर आते ही नई समस्या उत्पन्न हुई। नव्वन यह सोचकर ठिठक गया कि ऐसी हालत में यह कार कैसे चलाएगी।

एक बार उसने आस-पास खड़ी कारों की ओर दृष्टिपात किया, थोड़ी दूर पर कुछ टैक्सी भी खड़ी थीं।

एक टैक्सी ड्राईवर को जो इन्हीं की ओर रम्भा का लड़खड़ाना देख रहा था नव्वन ने हाथ के इशारे से बुलाया। निकट आकर ड्राईवर ने कहा—"मेरी टैक्सी तो भरी है साब, दूसरी टैक्सी बुलाये देता हूँ।"

"टैक्सी नहीं चाहिए सरदार सासेब।" नव्वन ने कहा—"आपकी सवारी अन्दर बार में हैं क्या ?"

"जी हाँ साब।"

"क्या फौरन आने वाली हैं ?"

"अभी तो गयी है, आधा घंटा तो लगेगा ही।"

'तो फिर एक काम कीजिये, ये मेम साहेब बुरी तरह नशे में हैं और यही मोटर चलाती हैं। ये इनकी कार खड़ी है, पास ही तकरीबन यहाँ से एक फरलांग दूर बंगला है। जरा वहाँ तक कार ले चलो ना ?"

"चला चलूंगा, लाइये चाबी।" ड्राईवर ने कहा।

"चाबी ?"

"मोटर की चाबी।"

"ओह हाँ।" रम्भा को झझोड़ते हुए नब्बन ने पूछा—"चाबी कहाँ है ?"

"चाबी.........चाबी को पर्स में रहने दो.....जो मैं कहती हूँ उसे......सुनो।"

रम्भा का बटुवा नब्बन के ही हाथ में हाथ में था, उसमें से चाबी निकालकर ड्राईवर को देते हुए नब्बन ने कहा—"यह लीजिये, बहुत-बहुत शुक्रिया सरदार साहेब।"

कार का दरवाजा खोलकर पहिले रम्भा को पीछे की सीट पर डाल नब्बन स्वयं आगे ड्राईवर के पास आ बैठा।

एक मिनट में ही छदम्मीलाल की कोठी आगई—इसी कोठी में चलना है सरदारजी।" नब्बन ने कोठी की ओर इशारा करते हुए कहा

कोठी के बाहर लान में ही सुन्दरलाल टहल रहे थे। कार को देख कर वह उसकी ओर लपके, नब्बन और ड्राईवर को देखकर चौंकते हुए उन्होंने पूछा—"क्या बात हुई, ऐक्सीडेन्ट हो गया क्या ?"

"जी नहीं साहब, ऐक्सीडेन्ट होता तो कार पहिले टूटती, बात सिर्फ इतनी-सी हुई है कि कार की मालकिन ने जरूरत से ज्यादह पी ली है।" नब्बन मुस्कराते हुए गाड़ी से उतरा।

"रम्भा डार्लिंग अच्छी तो हो।" दरवाजा खोलकर रम्भा को बाहर खींचते हुए सुन्दरलाल बोले—"मैं एक घंटे से यहाँ तुम्हारा इन्तजार कर रहा हूँ।"

"सुन्दरलाल.......मुझे..... मुझे तुम से नफरत है। तुम...तुम पैसे के गुलाम हो।" कार से नीचे उतरकर लड़खड़ाते हुए नब्बन को ओर हाथ बढ़ाकर रम्भा बोली—"शायर साहब आपको..... आपको मेरी बात.......।"

"ओह।" एक कदम पीछे हटते हुए नब्बन ने कहा—"मिस्टर सुन्दर-

लाल आप ही हैं, जब यह होश में थी तो आपकी बहुत तारीफ कर रहीं थी। लाला साहेब घर में हैं·········?"

"जी नहीं तो·······।"

"मैं जानता हूँ कि वह कहाँ हैं, आयें तो उनसे कहियेगा कि अपनी अवारा बीवी के साथ एक नौकर रखा करें। संभालिये इन्हें, हम लोग चले, आइये सरदार साहेब।"

"लेकिन श्रीमान् का नाम ?" सुन्दरलाल ने पूछा।

नव्वन ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह वहाँ से चल चुका था। चलते-चलते अस्फुट-सी आवाज में रम्भा की वहक उसने भी सुनी—"मिस्टर लखनवी, बहुत·········बहुत ऊँचे दर्जे के शायर हैं·······समझे मिस्टर सुन्दरलाल·· ·······।"

कोठी से बाहर सड़क पर आकर नव्वन ने पाँच का नोट ड्राईवर की ओर बढ़ाते हुए कहा—"यह लीजिये सरदार साहेब आपकी मजदूरी।"

पाँच का नोट लेकर ड्राईवर ने जेब से चार रुपये निकाल कर नव्वन को देते हुए कहा—"ये पैसे वाले भी कितने गिरे हुए इंसान होते हैं।"

"रखिये इन्हें आप रखिये।" नव्वन ने कहा।

"नहीं साब, वह देते तो शायद रख भी लेता। आपसे एक रुपये से ज्यादह नहीं लूंगा, अपनी जायज मजदूरी मैंने ले ली है।" नव्वन के हाथ में चार रुपये थमा कर ड्राईवर तेजी से चला गया।

·········और नव्वन व्यर्थ ही नई दिल्ली की सड़कों पर धीमे-धीमे टहलता रहा। सामने एक सिनेमा घर दिखाई दिया, समय देखा तो सवा नौ बजे थे। टिकट लेकर वह सिनेमा में जा बैठा फिल्म था, 'साईकिल चोर' इटली का बना हुआ।

फिल्म समाप्त हुआ तो साढ़े ग्यारह बजे थे। बहुत दिनों बाद नव्वन ने ऐसा फिल्म देखा था, जो न सिर्फ पसन्द आया बल्कि सिनेमा घर से जी० बी० रोड तक पहुँचने तक वहने केवल फिल्म के विषय में ही सोचता रहा।

अन्दर कमरे में मैना थी, और लाला छदम्मीलाल थे।

नब्बन ने एक कोने में रखा अपना विस्तर उठाया और छत के एक कोने में बिछाकर लेट रहा। नींद हमेशा आम तौर से डेढ दो घंटे की दिमागी परेशानी के बाद ही आया करती थी। आज भी दो बजे बाद आँख लगी।

अभी सुबह की सफेदी ऊँची इमारतों के पीछे ही थी। तकरीबन पाँच बजे होंगे, मैना नब्बन को जगा रही थी—"उठिये नवाब साहेब, अन्दर चलकर लेटिये।"

"हूँ अच्छा।" हमेशा की भाँति नब्बन उठकर अन्दर जा लेटा।

नब्बन के निकट बैठते हुए मैना बोली–"क्या फौरन ही सोजाइयेगा, सिगरेट नहीं पीजियेगा।"

"एक बात सुनो बेगम।" आँखें खोलते हुए नब्बन ने कहा।

"फ़रमाइये।"

"आज की रात बहुत बुरी बीती ऐसा जी चाहता था कि जी भर रो लूँ, लेकिन इस ख्याल से न रो सका कि कहीं सिसकियों की आवाज से तुम्हारी नींद खराब न हो जाये, बेगम मेरे जैसी किस्मत खुदा दुश्मन की भी न बनाये।"

"नवाब साहेब"·····मेरी जिन्दगी। रुँधे कण्ठ से वह बोली। न जाने नब्बन के शब्दों में क्या जादू था कि आँखें भर आयीं।



२०

लाला छदम्मीलाल को कांग्रेस ने असेम्बली के लिये अपना उम्मीदवार घोषित कर ही दिया था। आज सरकारी तौर से असेम्बली और पार्लियामेंट के उम्मीदवारों की सूची भी प्रकाशित हो गई। छदम्मीलाल के मुकाबिले में असेम्बली के लिए जनसंघी उम्मीदवार लाला गूदड़मल थे, इलाके से सम्बन्धित पार्लियामेंट की सीट के लिये कांग्रेसी उम्मीदवार राजवैद्य पंडित पूरे गुसाईं थे, उनके मुकाबले में थे जनसंघी नेता श्री मोहन लाल।

गुसाईंजी मुहल्ले के मन की नब्ज निरंतर टटोलते रहते थे, उन्हीं के मुतबर्का पूर्ण प्रयत्नों से छदम्मीलाल की हवेली तो मानो हुई ही आप-साथ मुहल्ले वालों में ऊपर से स्वामी धमोटानन्द का जमा हुआ रोब भी उखड़ गया।

उन्होंने ही सबसे पहिले छदम्मीलाल को सूचना दी कि 'दूल्हड़राजी वाला प्रचार तो होता ही रहेगा। आवश्यकता यह है कि पहिले तुम अपने बिरादरी भाइयों को ढूँढने की फिक्र करो।'

भगवान् की कृपा से अब लाला छदम्मीलाल की बुद्धि भी इस दिशा में चलने लगी थी। याद आ गई जो इस काम को सफलता पूर्वक सम्पन्न कर सकता था, साँवलचन्द''''''नाम याद आते ही छदम्मीलाल की आँखों में कृतज्ञता उतर आई, राजो '''''' ''मैना और जाने कितनी ! रंगीन जिन्दगी चाचा साँवलचन्द की कृपा से ही तो लाला ने पाई थी।

साँवलचन्द की याद आते ही लाला बेकरार हो गये। इस समय वह लोहे वाली दूकान में थे। कार कहीं सुन्दरलाल ले गये थे, लाला तुरन्त उठ गये। बाहर सड़क पर खाली तांगा रोकते हुए बोले—"चांदनी चौक चलो।"

लाला साँवलचन्द की एक ही मंडी में कपड़े की कई दुकानें थीं। जिस समय छदम्मीलाल वहाँ पहुँचे तो लाला साँवलचन्द के आगे दूध का गिलास आगे रखा था और डिब्बे में से निकालकर च्यवनप्राश खा रहे थे।

"अरे आओ बेटा छदम्मी, आओ कैसे रास्ता भूल पड़े, अबे ओ।" नौकर को सम्बोधित करते हुए साँवलचन्द बोले—"आध सेर दूध ला हमारे बेटे के लिये।"

"नहीं चाचा मैं दूध नहीं पीऊँगा।"

"अरे च्यवनप्राश खिलाऊँगा, सदा जवान बना रहेगा। मुझे देख बुढ़ापे में इसी के सहारे जरा जिन्दगी कुछ रंगीन बनी हुई है।"

गद्दी पर बैठ कर जरा अच्छी तरह फैलते हुए छदम्मीलाल बोले—"चाचा तुम्हारे पास मैं एक जरूरी काम से आया हूँ, लोगों ने जबरदस्ती चुनाव में खड़ा कर दिया है, अब जितवाना तुम्हारे ही हाथ है।

"अरे, वाह बावले।" दूध का गिलास खाली करके एक ओर रखते हुए साँवलचन्द बोले—"तुझे इस रांडा निपूती में पड़ने की क्या जरूरत

थी। खैर-काम वता क्या काम है ?"

"इलाके में जितने अपनी विरादरी के आदमी हैं उन सबकी एक मीटिंग करनी है, अब मैं तो सीधे-सीधे इस काम को कर नहीं सकता, इसीलिए तुम्हें तकलीफ देनी पड़ी है।"

"बस इतनी-सी बात, आज ही शाम को ले।"

"इतनी जल्दी कैसे हो सकती है चाचा, सबको खबर भी तो भिजवानी पड़ेगी।"

"तो इसमें कौन महीने लगेंगे। मोटर जरा लौंडा ले गया है, अभी आजायगा। बस उसके आते ही मैं सबको खबर कर आऊंगा

"तो फिर कल रखलो, वह अपने लाला चुन्नीलाल की धर्मशाला है ना उसी में।"

"कल सही। हां तू है किसके साथ संघ वालों के या कांग्रेस वालों के ?"

"कांग्रेस वालों के, संघ वालों के साथ रहने में कुछ फायदा नहीं है चाचा।"

"तू जान वेटा, कल रात को मीटिंग हम तेरी जरूर कर देंगे।"

'आठ वजे का टैम रखना, अच्छा चाचा तो मैं चला, और भी कई काम हैं।"

"अरे वैठ, च्यवनप्रश खाकर जइयो। तेरे मुकाबले में कौन खड़ा हुआ है।"

"गूदड़मल।"

"अरे वह तेरा मामा घी वाला—सुसरा मामा होकर भानजे की काट में खड़ा हुआ है। यह अपनी वनिये की जात है वटेर की ही। किसी सुसरे को किसी की लिहाज नहीं है। खैर तू फिकर मत कर अबकी वार तुझे भी कमेटी की कुर्सी पर विठा ही देना है।"

"चाचा यह कमेटी की नहीं असेम्बली की कुर्सी हैं, अगर एक वार वैठ गया ना,......फिर देखना—चाचा तुम्हें राजगद्दी पे वैठा दूंगा....।"

"अरे मैं राजगद्दी सुसरी का क्या करूंगा, पर छदम्मी निकला तू उस्ताद आदमी।" इधर उधर देखकर जरा धीमे स्वर में सांवलचन्द ने कहा—"सुना है बाजार में आजकल तू जिसके पास जाता है वह क्या नाम है उसका""हां मैना, सबसे बढ़िया माल है वह बाजार भर में""।"

'देखो चाचा तुम्हारी बहू लगेगी वह।"

"हां हां बहू ही लगेगी. तू इतना घबरा क्यों रहा है। अपने को तो अपने पुराने चावल ही पसन्द हैं। मैं तो यह पूछ रहा हूँ कि क्या लोगों का कहना सच है?"

"चाचा औरत तो ऐसी है कि देखकर गश खा जाओगे, लेकिन उसका दलाल बड़ा कांइयां है, अब तक चार हजार मूंड़ चुका है मुझसे, मैं भी सोचता हूँ कि इतने पर भी घाटे का सौदा नहीं है, माल है असल माल""।"

नौकर दूध का गिलास ले आया, फलस्वरूप छदम्मीलाल की बात अधूरी ही रह गयी।

"ले।" च्यवनप्राश का डिब्बा छदम्मीलाल के आगे करते हुए सांवलचन्द बोले—"एक तोला रोज खाया कर। जिन्दगी भर जवान बना रहेगा।"

दूध के साथ च्यवनप्राश उड़ाकर छदम्मीलाल उठते हुए बोले—"तो चाचा कल की पक्की रही, देखना अब इज्जत आबरू तुम्हारे ही हाथों है।"

और सांवलचन्द ने भी खुले दिल से आशीर्वाद देते हुए कहा—"बेटा जब तक मैं जिन्दा हूँ, तुझे फिकर करने की क्या जरूरत है, सब सालों को देख लेंगे। अरे तेरी और मेरी इज्जत क्या दो-दो हैं।"

वहाँ से छदम्मीलाल सीधे अपनी कोठी पर पहुँचे। रम्भा के साथ प्रेम लीला में व्यस्त सुन्दरलाल को उन्होंने आदेश दिया कि—"कल शाम को लाला चुन्नीलाल की धर्मशाला में बिरादरी वालों की मीटिंग करनी है। तुम फौरन गुसाईंजी के पास चले जाओ, वह दो एक कांग्रेसी बनिये तुम्हारे साथ कर देंगे। इलाके के हर बनिये के पास जाकर उसे कल

रात को आठ बजे धर्मशाला में आने का न्योता दे दो।"

"यह काम तो रात को ही हो सकेगा, उस समय लोग घर पर होंगे, अच्छी तरह से उन्हें समझाया भी जा सकता है।"

"रात को ही सही, वैसे मैंने लाला सावलचन्द से भी कह दिया है। हां कल तुम एक बढ़िया-सा लैक्चर दो, लोगों को बताओ कि आजकल कांग्रेस में रहने से ही फायदे हैं।"

अगले दिन शाम को ही धर्मशाला सजानी शुरू कर दी गयी। धर्मशाला के लम्बे चौड़े चौक में दरियां और चांदनी बिछाई गयीं। चारों ओर तिरंगे झंडों की बन्दनवार सजाई गयी। धीरे-धीरे लोग आने शुरू हुए, लगभग पांच सौ के करीब बिरादरी भाई आठ बजे तक एकत्र हो चुके थे।

सभा की कार्यवाही लाला सांवलचन्द ने शुरू की। अपनी गालियों की बौछारों से भरी भाषा में उन्होंने कहा—"सब चोट्टी वाले कहते हैं कि बिरादरी में एका होना चाहिये, हम भी कहते हैं कि बिरादरी में एका होना चाहिये........लेकिन काहे के लिए। गवर्नमेंट से लड़ना भिड़ना नहीं है........कांग्रेस पूरे मुलक पर राज करती है........हमारे बिरादरी भाई पूरे मुलक में व्योपार करते हैं।........जो लाडो के कहते हैं कि कांग्रेस का राज बदल दो उनसे पूछो कि........क्या हमें गवर्नमेन्ट को नाराज करके अपना धन्धा ठप करना है। बोलो महात्मा गांधी की जय।"

केवल इतना कहने के बाद आगे सांवलचन्द को नहीं सूझा कि क्या कहें। उनके बाद लगभग डेढ़ घन्टे तक सुन्दरलाल बोले। विस्तार पूर्वक देश और समाज की स्थिति श्रोताओं के सम्मुख रखते हुए उन्होंने साबित किया कि छोटे हों या बड़े सभी व्यापारियों को कांग्रेस के साथ रहने में हित है। उसके बाद उन्होंने जनसंघ की बुराइयां बतानी शुरू कीं और साबित किया कि जनसंघ का साथ देकर व्यापारियों को छोटे-मोटे घाटे से लेकर दिवाले तक खतरा उठाना पड़ सकता है।

सुन्दरलाल की लन्तरानियों का श्रोताओं पर काफी अच्छा प्रभाव

पड़ा। लोगों ने कई बार तालियाँ भी बजाइ।

सुन्दरलाल के भाषण के बाद छदम्मीलाल की भी लालसा जगी कि क्यों ना आज से वह लेक्चर देना शुरू कर दें। बड़े साहस सहित उन्होंने मंच की ओर कदम बढ़ाया।

एक बार उन्होंने समस्त श्रोताओं पर दृष्टिपात किया। टूटती हुई हिम्मत को वह किसी तरह बाँधे हुए थे कि एक कोने में उन्हें लाला गूदड़मल बैठे दिखाई दे गये।

बस, सारे मनसूबे हवा हो गये। आँखें मूँद कर बड़ी कठिनाई से उन्होंने कहा""मैं ""मैं तो सब भाइयों का सेवक हूँ।"

उधर साँवलचन्द ने देखा कि यह तो सारा रंग ही बदरंग हुआ जा रहा है। दौड़कर मंच पर आते हुए उन्होंने कहा—"भाइयो, सबको पता है कि इस लौंडे को कांग्रेस वालों ने मैम्बरी के लिये खड़ा किया है। आगे तो खैर बिरादरी की सेवा करेगा पर इस समय भी इससे कुछ न कुछ सेवा सब भाइयों को लेनी ही चाहिए। कम से कम इसे दो हजार रुपये के बरतन खरीदकर बिरादरी की पंचायत को दे देने चाहिये, ताकि गरीब बिरादरी भाइयों को जो ब्याह शादियों के मौके पर दिक्कत होती है वह खतम हो जाय।"

छदम्मीलाल को जिनकी गूदड़मल को देखते ही देखते हवा खराब हो गई थी तनिक तसल्ली मिली। आँखें मूँदे-मूँदे ही उन्होंने ने कहा—"मेरे पास जो कुछ है सब कुछ बिरादरी का ही है। जो सब भाइयों का हुक्म होगा सदा मेरे सिर और आँखों पर रहेगा।"

छदम्मीलाल को सपने में भी आशा नहीं थी? इतनी जोर से तालियाँ बजीं कि दिल बाग़-बाग़ हो गया। धड़कते दिल से छदम्मीलाल मंच से नीचे उतर आये।

साँवलचन्द कह रहे थे—"अब सब भाई घर जायें, किसी भूतनी वाले के बहकाये में न आकर अपने लौंडे छदम्मीलाल की मदद करें। बोलो मैम्बरी की कुर्सी पर कौन बैठेगा?'

"लाला छदम्मीलाल।" चारों दिशाओं से आवाज आई।

छदम्मीलाल मंच के नीचे खड़े स्वर्ग-सी सुन्दर कल्पना के मजे ले रहे थे कि गूदड़मल की गम्भीर आवाज सुनाई दी—"सांवलचन्द जी मुझे भी कुछ कहना है।"

यह सही है कि लाला सांवलचन्द को भी राजनीति तथा प्रचलित सभावादी धर्म, अर्थात् सनातनधर्म प्रचारिणी सभा से लेकर आर्य समाज, हिन्दू सभा, कांग्रेस अथवा जनसंघ स कभी कोई लगाव नहीं रहा। सभा विज्ञान किस चिड़िया का नाम है वह नहीं जानते थे—फिर भी हकीकत है कि वह लाला गूदड़मल से पहिले अनाज खाना खाना सीखे थे। माइक को एक हाथ से कसकर पकड़ते हुए उन्होंने सीधी चोट की—ये मिटिंग बिरादरी की हैं कोई भी बिरादरी आकर खुशी से अपनी बात कह सकता है, लेकिन उन चोट्टी वालों को नहीं बोलने दिया जायगा जो लोग जाहिर में तो हिन्दू धर्म चिल्लाते हैं और पीछे से घी में चरबी मिलाकर बिरादरी तो बिरादरी पूरे हिन्दू-धर्म का धरम भ्रष्ट करते हैं।"

सांवलचन्द की इस घोषणा से श्रोतागणों में एकदम घुसर-पुसर मच गई। किन्तु गूदड़मल अब भी बैठे हुए व्यक्तियों के बीच राह बनाकर मंच की ओर बढ़े आ रहे थे।

छदम्मीलाल ने देखा और आंखें मूंद लीं। स्वर्ग की कल्पना धरातल फोड़ कर पाताल में घुसी जा रही थी। लाला को बचपन में बाप ने कई बार सम्पूर्ण हनूमान चालीसे का पाठ करवाया था। अब सम्पूर्ण तो उन्हें याद नहीं था, किन्तु आरम्भ की जो दो चार लाइने याद आगईं छदम्मीलालजी मन ही मन तेजी से उन्हे दुहरा रहे थे।

गूदड़मल को मंच की ओर आता देख सुन्दरलाल तेजी से मंच पर चढ़ गये और सांवलचन्द से माइक की रक्षा का भार अपने ऊपर लेते हुए बोले—"भाइयो! अभी-अभी जिन सज्जन ने बोलने के लिये समय मांगा है, आप सब जानते हैं कि वह लाला छदम्मीलाल और देश की लोक-प्रिय संस्था कांग्रेस के मुकाबले में चुनाव में खड़े हुए हैं। हमारा

किसी से झगड़ा करने का इरादा नहीं है। किन्तु इन सज्जन को भी यह बात समझ लेनी चाहिए कि यह सभा कांग्रेस पक्षीयों का है, उन्हें यहां आने का निमन्त्रण किसी ने नहीं भेजा था फिर भी हमने धीरज से काम लेकर वह आये तो उन्हें रोका नहीं। यह कितनी भद्दी बात है कि हमारी शराफत का नाजायज फायदा उठाकर अब यह खुले आम सभा में विघ्न डालने का प्रयत्न कर रहे हैं ....।"

"क्या कहने हैं आपकी शराफत के, यही आपकी सभ्यता है कि मंच पर खड़े होकर लोग दूसरों को भद्दी-भद्दी गालियां दें......।" गूदड़मल ने मंच के नीचे से कहा।

गूदड़मल की बात को काटा गुसाईंजी ने। अभी तक वह दरवाजे के निकट खड़े चुपचाप सभा की कार्यवाही सुन रहे थे। किन्तु अब चुप रहना उचित नहीं समझा, वहीं से वह बोले—"जो आदमी गाली खाने काबिल होगा उसे गालियां ही मिलेंगी।" मंच की ओर खिसकते हुए वह पूरा जोर लगाकर कहते चले आ रहे थे—"हम बापू के हत्यारों के पैर पूजने यहां इकट्ठे नहीं हुए हैं।"

"हत्यारे होंगे कांग्रेसी।" गूदड़मल इस झटके के साथ बोले मानों किसी को हलाल करने जा रहे हों—"एक हिन्दू के नाते मेरा ये कर्तव्य है कि पाकिस्तान बनवाने वाले कांग्रेसियों का कच्चा चिट्ठा यहां उपस्थित सभी भाइयों को सुना दूं।"

गूदड़मल लाख संघी रहे हों, किन्तु गुसाईं जैसे राजनैतिक धूर्त का मुकाबिला करने के लिये अभी उन्हें कई जन्म लेने पड़ेंगे। वैसे ही वह अन्ट सन्ट बोले जा रहे थे और इस बात से बिलकुल बेखबर थे कि गुसाईंजी के अगल बगल बैठे चेले चांटे इधर-उधर से सिमट कर उसकी जड़ में पहुंच चुके थे।

"लाला जी बात सुनिये।" गुसाईं के एक चेले ने लाला का हाथ पकड़कर दरवाजे की ओर खींचते हुए कहा—"आपको दूसरों की सभा में हुल्लड़बाजी करने का कोई अधिकार नहीं है।"

"निकालो इसे वाहर निकालो।" ठीक जड़ में वैठे हुए लौंडों ने एक स्वर में कहा।

श्रौर तभी दो लौंडों ने उठकर पीछे से लाला गूदड़मल को वाहर धकेलना शुरू किया।

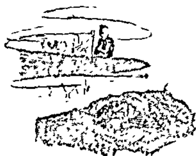
गुसाईंजी मंच पर खड़े शिष्टतापूर्ण स्वर में कह रहे थे—"मैं सब भाइयों से निवेदन करता हूं कि लालाजी को शान्ति पूर्ण तरीके से वाहर जाने दें। हालांकि उन्होंने कांग्रेस की सभा में विघ्न डालने का प्रयत्न किया है फिर भी हम उन्हें किसी प्रकार भी अपमानित करना नहीं चाहते।" कथनी ये थी श्रौर करनी इस प्रकार हुई कि लाला को धक्कम धक्का करके धर्मशाला के दरवाजे से वाहर कर दिया।

गूदड़मल यहां अपने आज्ञाकारी शिष्यों को क्या सोचकर लाये थे यह तो वही जाने, किन्तु उनके साथ जो तीन चार संघ पक्षी महानुभाव आये थे वह इस घटना को केवल मुंहवाये देखते रहे।

"वोट किसको देंगे ?"

"लाला छदम्मीलाल को।"

इस नारे के उपसंहार सहित सभा की कार्यवाही समाप्त हुई।



२९

धर्मशाला में हुई बिरादरी वाली सभा में जो कुछ हुआ, उसका बदला लेने का प्रयत्न लाला गूदडमल ने दूसरे दिन किया। जनसंघ की पहिली चुनाव सभा जो ठीक लाला गूदडमल के मकान के सामने हुई, जगह की कमी के कारण उसका फैलाव बेतुका अवश्य था किन्तु उपस्थिति ढाई तीन हजार थी। मोहनलालजी ने गालियों का जवाब गालियों में दिया और कांग्रेसियों को गुण्डे और उठाईगीरे सम्बोधित करते हुए उन्होंने चुनौती दी कि जनसंघ का विशाल अखिल भारतवर्षीय महान् आन्दोलन इन गीदड़ों के भौंकने से नहीं रुकेगा।

सभा की उपस्थिति पर आलोचना करते हुए कहने को गुसाईजी ने कह दिया कि—"सभा में सारी दिल्ली की मल्लो वाले छः छः आने देकर ला बैठाये थे, मुहल्ले का का कौन आदमी इनकी झांय-झांय सुनने आयेगा।

किन्तु वैसे गुसांईजी के पेट में पानी हो रहा था। यह रौब का सवाल था। चुनाव से सम्बन्धित कांग्रेस की पहिली आम सभा में जनसंघ से कम से कम ड्योढ़ी उपस्थिति होनी चाहिये।

इसी समस्या को हल करने के लिये गुसांईजी सुबह छदम्मीलाल की कोठी पर पहुँचे। जब तक उन्होंने छदम्मीलाल को जगाकर उन्हें होश की बात करने को तैयार किया तब तक सुन्दरलाल भी आ पहुँचे।

वेटी रम्भा।" छदम्मीलाल के पलंग के छोर पर सजी संवरी बैठी रम्भा को सम्बोधित करके गुसांईजी कह रहे थे—"संघियों की सभा में औरतें कतई नहीं थी अगर हमारी सभा में दो-तीन सौ औरतें भी आजायें तो गूदड़ के होश फाक्ता हुए ही समझो, कल शाम से हम भी सभाओं का श्री गणेश कर रहे हैं। मुहल्ले की दो-चार औरतों को साथ लेकर एक बार तुम पूरे इलाके के घरों में घूम आओ तो बस अपनी फतह हो गई समझो।"

"मैं तो चाचा जी जैसे आप कहें वैसे तैयार हूँ, कहिये तो नई दिल्ली की भी औरतों को वहाँ ले आऊँ। सौ औरतें यहाँ से भी ले जा सकती हूँ।"

"ठीक तो है यहाँ से भी ले चलो और वहाँ से भी इकट्ठी कर लेना।" औरतों के प्रश्न पर विशेष दिलचस्पी लेते हुए छदम्मीलाल बोले—"अच्छा है अगर पांच-सात सौ इकट्ठी हो गईं तो और भी मजा बंध जाएगा। क्यों चाचा?"

गुसांईजी ने सिर हिलाकर मौन स्वीकृति प्रकट की। मौका देखकर चट रम्भा बोली—"लेकिन इस प्रोग्राम में रुपये काफी खर्च होंगे। यहाँ से औरतों को ले जाना, फिर उनका थोड़ा बहुत आदर सत्कार भी तो............?"

"हाँ हाँ, जब चुनाव लड़ने की सोची है तो पैसा भी खर्च होगा ही।' छदम्मीलाल ने साधारण भाव से कहा। मन ही मन प्रसन्न हुई।

"यह सब तो खैर होगा ही।" सुन्दरलाल बोले—"लेकिन अब हमें फौरन ही चुनाव आफिस का काम बाकायदा ढंग से शुरू कर देना

चाहिये मैं समझता हूँ कि अब से लेकर चुनाव के दिन तक के लिये हमें दस आदमी और दस औरतें नौकर रख लेनी चाहिये । गुसांईजी क्षमा करना, बुजुर्गों के सामने ऐसी बात करनी तो नहीं चाहिए, किन्तु चुनाव जीतना है इसलिये कह रहा हूँ कि लड़कियाँ जरा नई उम्र की रखनी होंगी । यह बात मैं इस विचार से कह रहा हूँ कि प्रश्न केवल स्त्री मतदाताओं में काम करने का ही नहीं है, बल्कि पुरुष मतदाताओं को भी अनेकों ढंग से प्रभावित करना होगा ।'

"नहीं नहीं आप ठीक कह रहे हैं ।" गम्भीर भाव से गुसाईं जी बोले । छदम्मीलाल ने एक बुजुर्ग की भाँति सहमती सूचक सिर को ऊपर से नीचे हिलाया, उनके मन में नई उम्र की लड़कियों को रखने के सुझाव पर एक विशेष प्रकार की गुदगुदी-सी हुई, अलबत्ता उपस्थित महानुभावों से यह बात छुपाने में वह पूर्णतया सफल हुए ।"

"चलिये यह लड़कियां रखने का काम भी मुझ पर छोड़ दीजिये ।" रम्भा बोली ।

"एक बात का ध्यान रखियेगा ।" सुन्दर बोले—"नई उम्र के साथ सूरत शकल भी अच्छी होनी चाहिये । सभायें तो अब रोज ही करनी होंगी—सभा में मतलब की बातें सिर्फ बीच में की जानी चाहियें, शुरू और आखिर में गाने बजाने का प्रोग्राम रख कर हम अपनी सभा मे मुहल्ले वालो की दिलचस्पी और भी ज्यादह बढ़ा सकते हैं ?"

"बात तो ठीक है ।" गुसाइंजी बोले—"लेकिन हमे गाने इस तरह के रखने होंगे कि जनसंघ वालो को कुछ कहने का मौका न मिले.........। सभा में केवल राष्ट्रीय गाने ही होने चाहियें ।"

छदम्मीलाल बोले नहीं, केवल भुट्टू की तरह सुनते रहे ।

सुन्दरलाल कह रहे थे—"मैं गाने के बारे में नहीं गाने वालों के बारे मे कह रहा हूँ । हमें रेडियों के कुछ अच्छे गाने वालो से कन्ट्राक्ट कर लेना चाहिये । रम्भा जी आप किसी गायिका से परिचित हैं।"

"हां हां ।"

"क्या खयाल है लालाजी, कि रम्भाजी पांच छै गाने वालों को तय करलें ?"

"हां हां जरूर करलो।" छदम्मीलाल ने स्वीकृति देते हुए अपनी समस्या उपस्थित की—"भई यह बताओ कि मुझे क्या करना चाहिये। मैं बहुत चाहता हूँ कि लैक्चर दूं; और मेरा बोलना भी जरूरी है।"

"ठीक है आप रोज बोलिये।" सुन्दरलाल बोल।

असल बात शायद रम्भा ही समझती थी, दूसरी ओर सिर घुमाकर उसने मुंह बिचकाया और मुस्करा दी।

"रोना तो सारा यही है कि बोलूं कैसे। बिरादरी वाली सभा में सोच रहा था कि पूरे दो घण्टे बोलूंगा, लेकिन बोलने को खड़ा हुआ कि पसीने छूटने लगे। कुछ भी याद नहीं रहा कि क्या बोलूं।'

"शुरू-शुरू में ऐसा हुआ ही करता है, धीरे-धीरे आदत पड़ जायेगी।" गुसाईं जी ने धीरज देने का प्रयत्न करते हुए कहा।

"हां जरा दो-एक बार तो हिम्मत बांधनी ही पड़ेगी, आज शाम तक मैं आपको एक भाषण लिखकर दे दूंगा। कल तक उसे तीन-चार बार पढ़ियेगा, उसका काफी हिस्सा याद हो जायेगा। जब बोलने खड़े हों तो उसी आधार पर बोल जाइयेगा।"

"हां हां ये भी ठीक है।" गुसाईंजी उठते हुए बोले—"कल रात को मीटिंग करेंगे। अभी से हम सबको तैयारी शुरू कर देनी चाहिये।"

"चाचा जा रहे हो क्या, अपनी बहू को भी लेते जाओ। दो-चार औरतें साथ कर देना घूम आयेंगी इलाके में, सुन्दरलाल तुम मेरे साथ चलो फैक्ट्री में सैकड़ों आदमी रोज काम ढूंढ़ने आते हैं, उनमें से अपने काम के छांट लेना।"

"अनमने भाव मे रम्भा उठी और छदम्मीलाल के निकट जाकर बोली—"आज कई काम करने हैं कुछ रुपयों की जरूरत पड़ेगी ?"

"ले जाओ, ले आओ। दराज में से चैक बुक निकाल लो।"

दो हजार रुपये से जेब गरम करके रम्भा पति के चनाव का प्रचार

करने गुसाईंजी के साथ चली गई। नहा-धोकर लगभग ग्यारह बजे लाला ने भी सुन्दरलाल सहित फैक्ट्री की ओर चलने का ड्राईवर को हुक्म दिया।

सुन्दरलाल ने अपने वायदे के अनुसार छदम्मीलाल को भाषण लिखकर दे दिया। एक बार उसने स्वयम् लाला को पढ़कर भी सुन दिया।

छदम्मीलाल ने भी अपने शाम और रात के सारे कार्यक्रम रद्द करके एकान्त मे बैठकर तीन बार भाषण को पढ़ा। चौथी बार उन्होंने बाहर से दरवाजा बन्द कर लिया। भाषण को सामने मेज पर रक्खा और खड़े होकर बोल-बोलकर इस प्रकार पढ़ा मानो सामने विशाल जन-समुदाय बैठा है और वह शान्त चित्त होकर बड़े धैर्य के साथ अपना भाषण दे रहे हैं।

रात को एक अप्रिय घटना घटी। सपने मे लाला ने देखा कि जैसे ही वह भरी सभा मे भाषण देने मच पर आये सामने से लाला गूदड़मल घोड़े पर बैठे, बिगुल बजाते हुए आते दिखाई दिये। उनके पीछे बीस घुड़सवार नंगी तलवारें लिये हुए और भारी-भरकम काले घोड़ों पर जनसंघ का झण्डा लगाये भीड को रौंदते हुए मच के निकट आगये।

बिगुल बजाना बन्द करके गूदड़मल ने घुर्राकर कहा—"इस हरामी के पिल्ले छदम्मी के चार टुकड़े करके अलग-अलग दिशाओं मे फेंक दो"

घबराकर लाला छदम्मीलाल ने पीछे की ओर देखा। गुसाईंजी और सुन्दरलाल दोनो में से किसी का भी पता नहीं था। पुन. सामने की ओर देखा तो कई आदमी लपलपाती हुई तलवारें चमकाते हुए उन्ही की ओर बढ़े आ रहे थे।

"अरे कोई बचाओ ...... अरे कोई बचाओ।" लाला चिल्लाये।

इसके बाद जब आंखे खुली तो लाला ने देखा कि वह बिस्तरे स चार कदम के फासले से औंधे पड़े हैं, और तीन नौकर उन्हें उठाने का प्रयत्न कर रहे हैं।"

इस घटना से रम्भा भी कुछ घबरा गई थी। एक ओर खड़ी वह पूछ रही थी—"क्या बात हुई, तबियत तो ठीक है ना?"

छदम्मीलाल गो कि अब होश में थे, फिर भी रम्भा के चालू संवेदना-सूचक दो-वाक्य सुनते ही बिना इस बात को सोचे कि वहां एक नौकर उनके बाप की उम्र का भी है वह रम्भा की ओर इस तरह लपके मानो घंटों का बिछुड़ा शिशु माँ से लिपट जाना चाहता हो, और रम्भा ने भी जो इस अकस्मात घटना से कुछ भयभीत हो गई थी लाला को ममता की मूर्ति बन कर कलेजे से लगाकर फिर सुला दिया।

रम्भा की इस तनिक सी दया के प्रभाव से छदम्मीलाल सुबह उठे तो भले चंगे थे। रात के भयानक स्वप्न की स्मृति न दिल में टिकी न दिमाग में।

स्नान और भोजन से निपटकर लाला पुनः भाषण याद करने में जुट गये।..........और सारा दिन उन्होंने इसी साधना में बिता दिया।

शाम को लाला ने जीवन में प्रथम बार खादी पहिनी। गुसाईं जी की सलाह के अनुसार विगत सप्ताह उन्होंने लगभग पांच सौ रुपये श्री गान्धी आश्रम को खटवा दिये थे।

खादी के चूडीदार पाजामे पर कुर्ता और कुर्ते के ऊपर जोगिया रंग की ऊनी शेरवानी सिर पर किश्ती नुमा नेहरू-कैप जचा कर लाला ने शीशे के सामने जाकर अपने को निहारा—मन ही मन वह सोच रहे थे कि क्या अन्तर है? अगर थोड़े से गाल पिचके हुए हों और जरा-सा पाऊडर लगा लूं तो एकदम जवाहरलाल नेहरू-सा लगूं, क्या फर्क है उसमें और मुझ में? आज से लैक्चर देना सीख जाऊंगा, वह दो घण्टे लगातार बोलता है मैं चार घण्टे बोला करूंगा।

किन्तु बौद्धिक कल्पना शक्ति के भी दो पहलू होते हैं, सफेद और काला। अभी वह सफेद पहलू को जरा गुलाबी करके देख रहे थे कि केन्द्रीय मंत्रालय के एक और मंत्री जगजीवनराम की छवि जाने क्यों उन्हें याद आ गई। बौद्धिक कल्पना का दूसरा पहलू सामने आते ही लाला शीशे के सामने से हट गये।

जैसे ही लाला इलाके में पहुंचे तबियत खुश हो गई। गुसाईं जी की

दूकान के सामने सभा का मंच बनाया गया था। अभी साढ़े छ: बजे थे, अर्थात् सभा के प्रारम्भ होने मे भी आधा घंटा था। किन्तु एक हजार से अधिक भीड़ आकर जम चुकी थी। अपनी पत्नी रम्भा पर दाम्पत्य जीवन-काल मे लाला को आज गर्व हुआ, स्त्रियों के लिये बनाये गये विशेष स्थान पर लगभग सौ औरतें उपस्थित थी ""और अभी आ रही थी। लाला की प्रसन्नता का पारावार न रहा।

गाने वाले ठीक समय पर पहुंचे। राष्ट्र-गान और बापूजी की अमर कहानी के कोरस के बाद कोई कांग्रेसी नेता भजनलाल ने सभा की अध्यक्षता ग्रहण करके कार्यवाही आरम्भ की।

पहिले गुसांईजी बोले। हाथों को कुशल अखाड़े बाज की तरह पूरे डेढ घंटे तक घुमाते हुए उन्होने प्रयत्न किया कि मोहन लाल का लगाया हुआ एक टाका भी बाकी न बचे सारी बखिया उधड जाय।""""और वाकई बखिया उधड भी गई, गुसाईजी के भाषण मे कुल मिलाकर ग्यारह बार तालियाँ बजीं।

लाला छदम्मीलाल मच के कोने मे खड़े स्त्री समुदाय की ओर देखकर जरा हार्दिक शीतलता प्राप्त कर रहे थे कि भजन लाला ने घोषणा की— "अब आपके सामने लाला छदम्मीलाल, जिन्हे आप ही ने असेम्बली का उम्मीदवार बनाया है, अपने विचार रक्खेंगे।

लाला चौंक पड़े किन्तु यह सोच-विचार का मौका नही था। किसी तरह अपने पर काबू पाकर लाला मंच पर चढ कर माइक तक पहुँचे।

गुसाईजी के चेलों ने भीड के बीच से नारा लगाया—लाला छदम्मी लाल की""""""।"

'जय।" जोरो से आवाज हुई।

आँख मूंद कर जन समुदाय के सामने कई क्षण तक लाला हाथ जोड़े खड़े रहे। ठीक उसी समय जब लाला मुंह खोल ही रहे थे, बिजली की तरह कड़ककर दिमाग मे रात का स्वप्न कौंध गया।""""बुरी तरह पसीना-पसीना हुए लाला याद किया हुआ सारा ही भाषण भूल गये।

आरम्भ, अंतिम और मध्य, भाषण के सारे अंश दिमाग से इस तरह साफ होगये जैसे गधे के सिर से सींग और आदमी के पिछवाड़े से पूंछ···।

किसी तरह लाला ने खंखार कर गला साफ करते हुए कहना आरम्भ किया—'प्यारे भाइयो और देवियो, आपकी सेवा के लिये ही मैं····इस चुनाव में खड़ा हुआ हूं। यहां बड़े-बड़े नेता बोलने आये हैं·······आपका कीमती समय मैं बरबाद·······करना नहीं चाहता। सोच लीजिये···अगर मुझे इस·······इस काबिल समझो तो·······।"

तभी मंच के पीछे से गुसाईंजी चीखे—"बोलो लाला छदम्मी-लाल की।"

"जय।"

बदहवास से लाला छदम्मलील ने फिर जनसमुदाय की ओर हाथ जोड़े और माइक से खिसककर हांफते हुए मंच से नीचे उतर आये।"

भजनलाल घोषणा कर रहे थे—"अब दिल्ली के प्रसिद्ध नवयुवक बरिस्टर श्री सुन्दरलालजी अपने विचार आपके सम्मुख रक्खेंगे।"

लाला की इच्छा हो रही थी कि स्त्रियों के ठीक बीच में जाकर धम्म से गिरें और मूर्छित हो जायें।

तभी गुसाईंजी ने पीछे से पीठ थपथपाकर धीमे से कहा—"शाबाश बेटा, ऐसे ही थोड़ा-थोड़ा बोलकर बोलना सीख जाओगे।"

सुन्दरलाल बोल रहे थे—"भाइयों और बहनें, मुझे खुशी है कि मैं आपके सामने ऐसे व्यक्ति के पक्ष में बोलने आया हूँ, जिसका हृदय सेवा भाव से भरा है जिसका हृदय आज जनता के दुखों से इतना दुखी है कि·······।"



२२

पिछले रविवार को प्रेम लगभग दस बजे मैना के कमरे पर आया और मैना और नब्बन सहित लगभग चार बजे तक तीनों बैठे गप-शप करते रहे।

दूसरे रविवार को मैना ने उठते ही आदाब के बाद पहला प्रश्न ये किया कि—"प्रेम साहेब आज तशरीफ लायेंगे ?"

"अरे हाँ। प्रेम साहेब ने आज दस बजे आने को कहा था और मुझे उस वक्त ध्यान ही नहीं रहा कि एक साहेब से मुझे भी सही दस बजे मिलने पहुँचना है।"

बात वहीं समाप्त हो गई। नब्बन उठकर स्नानगृह में चला गया। मैना लेट गई।

लगभग पन्द्रह मिनट बाद नव्वन लौटा तो बोला—"अरे तुम फिर सो गईं क्या ? भई वह प्रेम साहेब आयेंगे उन्हें बैठाना, मैं ग्यारह बजे तक लौट आऊंगा, हो सकता है ग्यारह से पहिले भी लौट आऊं।"

"बैठिये ना, कहां जाना है।"

बालों को कंघा करके शेरवानी पहिनते हुए नव्वन मुस्करा कर बोला—"एक मोटी आसामी को तुम्हारा ग्राहक बनाया है। आज ही उससे मिलना जरूरी है।"

"छोड़िये भी……।" मैना बोली।

"वाह बेगम साहिबा, बजाय शाबाशी देने के 'छोड़िये भी' कह रही हैं। आपका दिया हुआ काम कितनी खूबी से अन्जाम दे रहा हूँ और आप हैं कि…………।"

मैना ने करवट बदलकर मुंह फेर लिया। नव्वन बात बदल कर कह रहा था—"मेहरबानी फरमाकर उठ जाइये, प्रेम साहेब आयें तो उन्हें बैठाईयेगा कहियेगा कि मैं ग्यारह बजे तक जरूर लौट आऊंगा।"

मैना शायद रुठ गई थी, उसने कोई उत्तर नही दिया। नव्वन जल्दी में था—'अच्छा बेगम मैं चलता हूँ।' इतना कह कर वह चला गया।

नव्वन के जाने के बाद मैना ने करवट बदली तो उसकी आंखों में आंसू थे। न जाने क्यों नव्वन जब इस प्रकार की बातें करता था तो मैना कुछ उत्तर न देकर रो देती थी। ऐसा क्यों होता है ? इसका उसे स्वयं भी पता न था।

प्रेम की सचमुच उसे प्रतीक्षा थी। प्रेम आता तो मुस्कराहट और कहकहे साथ लेकर आता। नव्वन का कठोर और उदास चेहरा उसके सामने खिल उठता था, इसलिए मैना की मनोकामना भी पूरी हो जाती थी।

मैना ने सामने रक्खी घड़ी देखी। सवा नौ बजे थे वह उठी स्नान-गृह की ओर चलदी।

केवल पन्द्रह मिनट में ही मैना नहाने-धोने से निपटकर लौट आई।

नब्बन की खास पसन्द वाली सफेद सिल्क की साड़ी पहिन कर वह बाल सुखाने धूप में खड़ी हो गई।

अभी दस बजने में कुछ मिनट बाकी थे कि जीने में से प्रेम की आवाज आई—"भाई साहेब।"

मैना में न जाने कौन से जन्म के संस्कार जगे। साड़ी का पल्ला सिर पर ओढ़ते हुए उसने कहा—"आइये प्रेम साहेब, अन्दर बैठिये मैं अभी एक मिनिट में आई।"

अन्दर कमरे में कोई भी नहीं था। "भाई साहेब कहाँ हैं?" अन्दर से ही प्रेम ने पूछा।

"अभी आते हैं।" इतना कह कर मैना ने जीने में जा कर पजाबी से कहलवाया कि चाय और कुछ नाश्ता ऊपर भेज दे। और फिर कमरे में प्रेम के निकट बैठते हुए बोली—"उन्हें कुछ काम था। अभी कुछ देर बाद लौट आयेंगे।"

निस्संकोच भाव से प्रेम ने कहा—"बहुत अच्छे रहे, हमें यहाँ बुला कर बैठा लिया और खुद गायब हो गये। क्या काम था?"

मैना मुस्कराई—"यह तो मुझे भी मालूम नहीं।"

"कुछ नहीं जी, भाई साहब हद से ज्यादह चरका देने लगे हैं। इनकी तबीयत भी दुरुस्त करनी पड़ेगी।"

"कैसे दुरुस्त कीजियेगा?" हँसी दबाते हुए मैना ने पूछा।

"आने दीजिये बताऊंगा। अच्छा ......" उठते हुए प्रेम ने कहा—"कुछ देर बाद मैं फिर आऊँगा।"

"बैठिये साहेब, वह आते ही होंगे।" आग्रह भरे स्वर में मैना ने कहा—"वह मुझ से खास तौर पर कह गये थे कि प्रेम साहेब आयें तो उन्हें बैठाना।"

अनमने भाव से वह बैठा गया।

"प्रेम साहेब।" वो कह रही थी—"मुझे आप शायद बेगाना समझते हैं?"

"क्यों ?'

"नवाब साहेब होते तो उठकर चल देने का सवाल ही नहीं था। वो नहीं हैं तो आप चले जाना चाहते हैं। नवाब साहेब आप के दोस्त हैं, इस रिश्ते से मैं भी आपकी कुछ न कुछ लगती ही हूं।"

"आपकी मैं भाई साहेब से भी ज्यादह इज्जत करता हूँ। ये महज आप को गलत फहमी हुई है।"

"शुक्रिया, प्रेम साहेब। यकीन मानिये आपके आने से मुझे बेहद खुशी होती है, जब से मेरी मां मरी है मैंने नवाब साहेब के होंठों पर मुस्कराहट नहीं देखी थी। एक मुद्दत के बाद वो मेरे सामने दिवाली पर हँसे थे—इसलिये कि आप तशरीफ लाये थे, या फिर पिछले इतवार को·······आप मेरी जिन्दगी में मुस्कराहट लेकर आते हैं प्रेम साहेब ?"

"ओह, आप मेरी इतनी अहमियत समझती हैं····· लेकिन·······?"

"फरमाइये रुक क्यों गये ?' मैना बोली।

"जी कुछ नहीं रुक मैं इसलिए गया था।" हंसते हुए प्रेम ने कहा—"कि आप से क्या कहकर बोलूं ?"

मैना भी मुस्कराई—"नवाब साहेब को आप भाई साहेब कहते हैं ?"

"जी हां, और भाई साहेब मेरी बीबी को बहिन कहते है। भैया दूज के दिन टीका भी कराके आये थे। खैर छोड़िये, इस सवाल पर फिर बहस कर लेंगे। हां मैं ये कह रहा था कभी आप ने ये भी सोचा कि भाई साहेब अक्सर उदास क्यों रहते हैं ?"

"प्रेम साहेब मैं हर वक्त यही सोचा करती हूं। लाख कोशिश की मगर उन्होंने कभी मुझे अपने दिल का हाल नहीं बताया। अगर मेरी जान के बदले भी उन्हें मुस्कराहट मिल सके तो मैं जान भी देने को तैयार हूँ। क्या आप उनकी उदासी की वजह जानते हैं।"

"शायद जानता हूँ। मेरे सवाल का जवाब दीजिये, क्या आपको उन की मुहब्बत पर यकीन है ?"

'वह मेरी जिन्दगी हैं।"

"यह मैं जानता हूँ मेरा सवाल यह था कि क्या आपको उनकी मुहब्बत पर यकीन है।"

"भगवान से ज्यादह·······।"

"मैं जानता था आप यही जवाब देंगी·······।"

'फरमाइये रुक क्यों गये ?"

"फिर इसी बात पर गाडी रुकी कि आप को क्या कहूँ, इसका आज फैसला कर ही लेंगे। हाँ देखिये, मैं कह रहा था कि उनका दिल आप से थोडी सी कुर्बानी चाहता है ··· ···?"

बडी सी ट्रे मे चाय नाश्ता आदि सजाये जमूरा हाजिर हुआ

"रख जाओ।"

ट्रे रखकर जमूरा सीटी बजाता हुआ चला गया।

"हाँ प्रेम साहब ?' अधीरता पूर्वक मैना ने कहा।

"भाई साहेब का दिल चाहता है कि आप यह धधा छोड़ दें।"

"······ लेकिन ·······प्रेम साहेब उन्होंने आज तक कभी मुझ से यह बात नहीं कही।"

'वह आप से जिन्दगी भर यह बात नहीं कहेंगे।"

"क्यो ?"

"इसलिए कि वह अपनी मुहब्बत पर खुदगर्जी का दाग नहीं लगाना चाहते।"

कुछ क्षण मैना मानसिक उथल-पुथल के कारण कुछ भी नही बोल सकी। प्रेम ने भी कुछ कहने की आवश्यकता नही समझी।

"मैं यह पेशा छोड दूँ, फिर··· ····इसके बाद ?"

"इसके बाद आम लोगों जैसी जिन्दगी जीने के लिए भी दुनियां मे बहुत बडी जगह है।"

"प्रेम साहेब।" संशय भरे स्वर मे मैना ने प्रश्न किया—"क्या ऐसा होना मुमकिन है ?"

"जी हाँ, मगर आप चाहें तो।"

तभी नव्वन की गुनगुनाहट सुनाई दी—

"कैदे-ह्यात श्रो वन्दे-गम श्रस्ल में दोनों एक हैं।........

"श्रादाव श्रर्ज है प्रेम साहेब, माफ कीजियेगा.........।"

"जी नहीं माफ नहीं करूँगा।"

"तो फिर शौक से सजा दीजिये।"

दिमागी परेशानी में व्यस्त मैना ने ट्रे श्रपने समीप खींच कर कप्पों में चाय उंडेलनी शुरू कर दी।

"श्रौर वेगम साहिबा, क्या श्राप भी नाराज़ हैं ?"

"जी नहीं तो।" मैना मानो नींद से जगी।

"नहीं तो कैसे ?" तपाक से प्रेम बोला—"जी हां यह भी नाराज हैं।" धीमे स्वर में मैना से कहा—"चाय मत देना इन्हें।"

"शुक्रिया श्राप लोग पीजिये, हम सिर्फ श्राप को चाय पीते देखने की ही श्रारज़ू रखते हैं।"

"श्रारज़ू श्राप शौक से रखिये।"

"श्राप को तो कोई एतराज नहीं है वेगम ?"

मैना उत्तर में केवल मुस्करा दी। दरश्रसल श्रभी तक वह दिमागी उथल पुथल से छुटकारा नहीं पा सकी थी।

पहिला कप प्रेम की श्रोर बढ़ते हुए मैना ने दूसरे हाथ से दूसरा कप नव्वन की श्रोर बढ़ाया तो नव्वन ने कहा—"प्रेम साहेब इजाजत है ?"

"जी हां मजबूरी है, यहां सिर्फ मेरा एक हीं वोट है श्रौर श्रापके दो—श्रव कहिये, वेगाना कौन समझता है, मैं या श्राप ?" मैना की श्रोर देखते हुए प्रेम ने पूछा।

"यह श्रपने वेगाने का क्या मसला है ?"

"जी कुछ नहीं।" मैना बोली।

"मैं वताता हूँ।" प्रेम बोला—"श्रभी श्राप फरमा रहीं थी कि मैं श्रापको श्रपना समझता हूँ, श्रौर इन्हें वेगाना. लेकिन श्रभी इन्होंने ही यह सावित किया कि यह श्रापको तो श्रपना समझती हैं श्रौर मुझे वेगाना।"

"क्या आप सचमुच नाराज हो गये प्रेम साहेब ?" मैना ने पूछा ।

"जी बिलकुल, झूठमूठ मैं नाराज नहीं हुआ करता ।"

"तो फिर मैं नवाब साहेब से चाय वापिस लिये लेती हूँ ।"

"फौरन ले लीजिये ।"

"लाइये नवाब साहेब ।"

"या ठहरिये, देखिये भाई साहेब एक बात का फैसला अगर आप करदें तो आपका जुर्म माफ किया जा सकता है ………।"

"फरमाइये ।"

"अभी मैं सोच रहा था कि इनसे क्या कहके बोला जाय, चलिये अब आप ही इस बात का फैसला दे दीजिये ।"

"मसला अहम है, कुछ मुहलत दीजिये ।"

"चलिये मुहलत भी दी ।"

"तो फिर चलिये दोपहर में कोई फिल्म ही देख लिया जाय, क्यों बेगम साहिबा ?"

"मुझे कोई ऐतराज नहीं है; शौक से चलिये ।"

"प्रेम साहेब चाय जल्दी खतम कीजिये ।"

तीनों की दोपहरी सिनेमा में बीती । लौटकर आ रहे थे कि प्रेम अजमेरी गेट पर ही तांगे से उतर गया ।

राह में नब्बन ने कुछ नहीं कहा, परन्तु, घर पहुँचते ही पूछा— "क्या बात है बेगम, आज सुबह से ही तुम कुछ उदास-सी हो रही हो । मुझसे कोई गलती हुई क्या ?"

"आपसे कोई गलती नहीं हुई ।" मैना ने कहा—"लेकिन आज मैं सारे दिन आपके बारे में सोचती रही हूँ यानी आपकी जिन्दगी के बारे में । सच बतलाइयेगा, अगर मैं यह धंधा छोड़ दूँ तो आप खुश होंगे ?"

नब्बन चौंक पड़ा, उसके चेहरे के भावों से प्रकट हो रहा था मानो उसने चोरी करने की कोशिश की हो और रंगे हाथों पकड़ा गया हो— "नहीं तो ।" शेरवानी उतारने के बहाने मैना से मुँह छिपाते हुए नब्बन

बोला—"शायद प्रेम ने तुमसे इस किस्म की बातें कहीं होंगी । दोस्तों की बेहतर जिन्दगी के बारे में गलत और सही सोचते और सुझाव देते रहना उनकी आदत है, आप बुरा न मानियेगा ।"

"बुरा मानने का सवाल नहीं है नवाब साहेब, अगर आप सचमुच ऐसा सोचते हों तो मुझे निहायत ही खुशी होगी ।"

"ऐसी कोई बात नहीं है बेगम......।" नव्वन इतना कहकर दरवाजे से बाहर पांव रख ही रहा था कि मैना ने उसका हाथ पकड़ लिया ।

"नवाब साहेब, इधर मेरी तरफ देखिये । आपकी खुशी, मुस्कराहट और हँसी में ही मेरी जिन्दगी है । सच बताइये आप क्या चाहते हैं ?"

मैं कुछ नहीं चाहता बेगम ।" नव्वन के शब्दों में विस्मयपूर्ण कृतज्ञता थी—"तुम मेरी हो । जानता हूँ कि तुम सिर्फ मेरी हो । बस, मेरे लिये इससे बढ़कर और खुशी नहीं है । तुम्हारे साथ मैं बहुत खुश हूँ ।"

"सच ?"

'हाँ ।"

"मेरी कसम ?"

"पागल हुई हो बेगम, तुम्हारी कसम, तुम्हारी मुहब्बत जिस दिन से मुझे मिली है उसी दिन से मैं अपने आपको दुनिया का सबसे बड़ा खुश किस्मत इन्सान समझता हूँ । तुम्हारी खुशी ही मेरी खुशी है और हमेशा रहेगी ।"



२३

चार दिन से जनसंघ वालों में निराशा का वातावरण छाया हुआ था। यूं रात की सभा सुबह का जुलूस तो नित्य का धंधा था और अब भी निरन्तर चल ही रहा था।

किन्तु चार दिन पूर्व रम्भा के नेतृत्व में एक औरतों का जुलूस निकाला था। जिसमें लगभग छः सौ स्त्रियां सम्मिलित थीं और उतनी ही तिरंगी झंडियाँ थीं।

इस घटना से लाला गूदड़मल की तो बिसात ही क्या, मोहनलाल जैसे धैर्यवान नेता भी विचलित हो उठे। अगले दिन उन्होंने प्रभात फेरी से लौटने वाले स्वयं-सेवकों को आदेश दिया कि—"कल स्त्रियों का जुलूस हमें भी निकालना है हमारी संख्या कांग्रेसियों से कम नहीं होनी चाहिये।"

किन्तु व्यर्थ ही स्वयं सेवक निजी काम धंधा छोड़कर सारे दिन बेटी के व्याह जैसा दीनता-पूर्ण बुलावा देते घर-घर फिरे, और अगले दिन केवल तीस औरतें एकत्र हुई।

जग हँसाई थोड़े ही करानी थी, तीस औरतों का जुलूस निकाल कर। कार्यक्रम रद्द कर दिया गया। झुँझलाहट के मारे गूदड़मल ने दो चार जनसंघ का दम भरने वाले व्यक्तियों से शिकायत की कि उन्होंने अपनी पत्नी बहिन अथवा मां को जुलूस में क्यों नहीं भेजा ?

एक ने जवाब दिया—"लालाजी घर में केवल मैं ऐसा ही हूं जो जाति का हित समझ कर जनसंघ को जान देने को तैयार हूं, परन्तु पिताजी.........।"

दूसरे ने कुछ अधिक खरा जवाब दिया—"गूदड़मलजी आप आज्ञा देंगे उसका हम सहर्ष पालन करेंगे। किन्तु हमारी पत्नी हिन्दू देवियां हैं, हम उन्हें कांग्रेसियों की भांति मुंह खुलवा कर गलियों में घुमाना पसन्द नहीं करते।"

ये बातें बीच सड़क पर हो रही थीं। एक रास्ते चलता जो यूंही जरा दिल्लगी लेने इस भीड़ में खड़ा हो गया था, चख लेता हुआ बोला—"ये बात गलत कही आपने, हमारी स्त्रियां हिन्दू दासियां हैं—एक हिन्दू अपनी निजी दासी को क्यों गलीगली दूसरे के स्वार्थ के लिए घुमाये।"

शायद चख-चख का सिलसिला अभी और चलता कि सामने से मोटर आई और ठीक हुजूम के निकट खड़ी हो गई। उसमें से बदंवास से मोहनलाल उतरे। खुश्की के कारण उनके होंठो पर पपड़ी-सी जमी हुई थी।

"लालाजी जरा आइये तो।" पीछे-पीछे आने का संकेत देकर मोहन लाल सीधे गूदड़मल की बैठक में घुस गये। आज्ञाकारी सेवक की भांति गूदड़मल भी कदम से कदम मिलाते हुये बैठक में पहुंचे।

"अभी तक कुछ बात नहीं बनी।" चिंतित मुद्रा में मोहनलाल बोले—"स्त्रियों का प्रबन्ध कैसे किया जाय.........।"

"विधवा आश्रम वालों ने इन्कार कर दिया क्या ?" गूदडमल ने प्रश्न का उत्तर प्रश्न दिया।

"इन्कार तो नहीं किया, परन्तु वह लोग केवल नब्बे-सौ के लगभग स्त्रियां दे सकते हैं, और प्रत्येक स्त्री पर दस रुपये चाहते हैं। उनकी बुद्धि रामराज्य-परिषद वालों ने भ्रष्ट कर रक्खी है। वो उन्हे दस रुपए प्रत्येक स्त्री पर दे देते हैं। उनका उम्मीदवार ठहरा सेठ जानकीदास, करोड़पति आसामी है—वह दे सकता है। किन्तु हम तो इतना नहीं दे सकते।

"मेरे विचार में तो जैसे भी हो, ये प्रबन्ध कर ही लेना चाहिये।" अर्थात् अगर एक हजार स्त्रियों को लाने का कार्यक्रम बनाया जाय तो दस हजार उन्हें पूज दें।"

"आप तो सौ की बात कह रहे थे ना?"

- "हाँ वह तो सौ ही देंगे।"

"सौ के लिये हजार ही तो देना पडेगा। वाकी तो" वह चन्दादेवी ने क्या उत्तर दिया ?

'वह दो सौ के लगभग तरुण छात्राएं भेज सकती है,किन्तु डरती है कि कहीं विद्यालय कमेटी उन्हें नौकरी से न हटा दे। विद्यालय की कमेटी में कांग्रेसी ही अधिक हैं, और फिर विद्यालय को सरकारी सहायता भी मिलती है।"

'विद्यालय जाय चूल्हे में हमें विद्यालय से क्या मतलब है, चन्दादेवी की नौकरी पर अगर संकट आया तो उन्हें कहीं दूसरी जगह नौकरी दिला देंगे।"

'किन्तु यह सब भी तो कुल मिलाकर तीन-सौ ही होती हैं, मैं एक हजार स्त्रियों का जुलूस निकालना चाहता हूँ।" निराशा भरे स्वर मे मोहनलाल ने कहा।

बैठक मे शांति छा गई। मोहनलाल ठोडी पर हाथ रखकर विचार-मग्न हो गये। गूदडमल सामने टंगी हनुमानजी की तस्वीर को एक टक""

किन्तु शून्य दृष्टि से देख रहे थे।

लगभग दस मिनट बाद गूदड़मल बोले—"प्रान्तीय संगठन इस विषय में हमारी सहायता करे तो ......?"

बीच में ही बात काटकर मोहनलाल झुँझलाते हुए बोले—"यह सम्भव नहीं है, इस क्षेत्र में हमारे प्रतिनिधि चुनाव लड़ रहे हैं। सुयोग्य स्त्री कार्यकर्त्रियों की अभी से यहाँ कमी है।"

निश्चित तो नहीं है कि काम हो ही जायगा, किन्तु मैं जरा जमना जी की ओर जा रहा हूँ। घाट वाले महन्त घिस्सूजी से पूछता हूँ, अगर कोई प्रबन्ध हो जाय तो। हिन्दूकोड-बिल के विरोध में जो प्रदर्शन हुआ था उसमें वह कई सौ स्त्रियों को लाये थे।"

"हाँ, ले तो गये थे" उत्सुकता से बोले—"बात कर देखो.......... किन्तु शहर में घिस्सू महाराज बदनाम बहुत हैं। लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि उनका घाट दिल्ली की बदचलन औरतों द्वारा आसामी फंसाने का सबसे बड़ा अड्डा है।"

"हुआ करे हमें क्या मतलब है। हमें तो स्त्रियों से मतलब है और स्त्रियों को देखकर कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि वे घिस्सू महाराज के द्वारा आई होंगी।"

डूबते को तिनके का सहारा मिला। मोहनलाल ने इस प्रयोग के लिये गूदड़मल को सहर्ष आज्ञा दे दी।

टमटम जुतवाई, गौरी शंकर के मंदिर के सामने से एक फूलों का हार लिया, एक फूल पुड़िया ली, और फिर बृजवासी की दुकान से सवा सेर पेड़े लेकर टमटम में बैठते हुए उन्होंने कोचवान को आदेश दिया—"बस अब सीधे जमना जी चलो।"

महन्त शत्रुघानन्द के गद्दीधारी शिष्य घिसुआनन्द धर्म के प्रति श्रद्धा के प्रतीक इस कलियुग में भी लाखों की अचल सम्पत्ति के स्वामी थे। शहर में दो मन्दिर और उससे सम्बन्धित जायदाद तो आपकी थी ही अब यह घाट भी आपने एक सेठानी शिष्या की मनोकामना पूरी करके

दोवारा नया बनवा लिया था। घाट के पीछे छोटे-बड़े आठ कमरे थे। एक उनका अपना निजी कमरा था, दूसरा सत्संग भवन कहलाता था। बाकी छः साधु-संन्यासियों और बाहर से आने वाले भक्तों के लिये थे, ताकि वह सपरिवार आकर जमुना स्नान का लाभ उठाना चाहे तो रहने के लिये उन्हें शहर मे न जाना पड़े।

आयु लगभग पैंतीस वर्ष, एकदम गोल-मटोल और लाल-सुर्ख, घुटा हुआ सिर, रेशमी परिधान पहिने महन्तजी आठ-दस भक्तों से घिरे सत्संग भवन की चौकी पर विराजमान थे।

कमरे में प्रवेश करते समय अत्यंत श्रद्धा सहित गूदड़मल ने सिर झुकाया।

"आइये लालाजी।" बैठे बैठे ही मुस्कराते हुए महन्तजी ने कहा—"कहिये प्रसन्न तो हैं।

"आपकी कृपा है महन्तजी।" निकट जाकर गूदड़मल ने फूलों का हार महन्तजी के गले में डाला, और चरण स्पर्श करके हाथ आँखों से लगाये।

"सुखी रहो।" महन्तजी बुदबुदाये।

पेड़ों से भरी थैली महन्तजी के निकट रखते हुए गूदड़मल बोले—"आज्ञा हो तो ज़रा जल चढ़ा आऊँ।"

"अवश्य, अवश्य।"

फूल पुड़िया लेकर लाला घाट पर पहुँचे। एक लोटा लेकर उसे माजा, फिर यमुना में कई कदम आगे बढ़कर उसे भरा और ऊपर आकर शिवजी की पिंडी पर पहिले लोटे का जल आँखें मूँदकर बड़बड़ाते हुए उड़ेला, फिर फूल पुड़िया खोलकर पिंडी पर बिखेरते हुए उन्होंने माथा नवाया और "जय जय भोले" कहा।

पुनः सत्संग भवन मे जाकर गूदड़मल एक कोने में बैठ गये। महन्त किसी भक्त से धर्म-चर्चा मे व्यस्त थे। लगभग पन्द्रह मिनिट बाद उन्होंने गूदड़मल को निहारा—"कहिये लालाजी, स्वामी घसीटानन्दजी तो

प्रसन्न हैं ?"

"जी हाँ, चुनाव आन्दोलन में व्यस्त हैं। सुबह प्रभात फेरी के समय तक तो सेवक के ही क्षेत्र में रहते हैं तत्पश्चात् अन्य स्थानों पर चले जाते हैं—लगभग सभी जनसंघ के उम्मीदवारों की सभा में उनका प्रवचन हो चुका है।"

"अति सुन्दर। आपके निवास स्थान पर ही तो भेंट हुई थी उनसे—मैंने आदर्श संन्यासी पाया, धर्म की जय के अतिरिक्त इस दुनियां में उनका कोई भी स्वार्थ नहीं है।" इतना कह कर वह फिर अन्य भक्तों से बातचीत करने लगे।

लगभग एक घंटे तक गूदड़मल इस प्रतीक्षा में बैठे रहे कि भीड छँटे तो वह अपनी दाल गलाने का यत्न करें; परन्तु एक जाता तो दो आ जाते। मजबूर होकर वह उठे और महन्तजी के निकट जाकर कहा—"कुछ निवेदन करना था ?"

"कहिये, कहिये," महन्तजी बोले।

"जी वार्ता एकान्त में होती तो उत्तम रहता।"

महन्तजी उठे। भक्तों को चलते हुए आदेश दिया—"आप धर्म-चर्चा कीजिये, मैं अभी आता हूँ।" और लाला को निजी कमरे में ले जाकर आसन देते हुए कहा—"कहिये।"

"बड़े संकट में पड़ गया हूँ महंतजी, केवल आप ही मुझे उभार सकते हैं!"

"आज्ञा कीजिये, आज्ञा कीजिये ?"

"जी निवेदन यह है कि चार दिन पहिले कांग्रेस वालों ने लगभग छः सौ औरतों का जुलूस पूरे क्षेत्र में निकाला है। प्रयत्न करने पर भी हम सौ से अधिक स्त्रियों का प्रबन्ध नहीं कर पा रहे हैं। आप तो दिल्ली के सभी धर्म प्राण स्त्री-पुरुषों के लिये पूज्य हैं, नैया पार लगानी ही होगी। मेरे लिये नहीं, धर्म के सम्मान के हेतु, यह कष्ट आपको उठाना ही होगा।"

महन्तजी ने दृष्टि झुकाने की बजाय आँखें मूँद लीं, देखने से ऐसा प्रतीत होता था मानो ध्यान मग्न होने का प्रयत्न कर रहे हों।

"लालाजी।" कुछ क्षण बाद आँखें खोलते हुए महन्तजी गम्भीर वाणी में बोले—"लालाजी आप से स्पष्ट बात कहनी ही होगी, फिर चाहे आप मुझे अपने मन में लालची ही क्यों न समझें।"

"नहीं गुरुदेव, यह आप क्या कर रहे हैं ?"

"लालाजी, जब से गुरुदेव की गद्दी पर बैठा हूँ तभी से प्रयत्न किया है कि धनियों को धन के घमण्ड से, निर्धनों को पेट की ज्वाला से मुक्त कराने की व्यवस्था करूँ।"

"धन्य है, धन्य हैं गुरुदेव।" कृत्रिम गद्-गद् कंठ से गूदड़मल बोले।

"किन्तु एक ओर मैं अकेला, और दूसरी ओर समस्त संसार से घुन की तरह लिपटा हुआ स्वार्थ" ""कभी-कभी मैं अपने को पराजित-सा अनुभव करता हूँ। अपनी ही समस्या को लीजिये। अगर धनिक स्त्रियों से कहता हूँ कि वो आपके जुलूस में भाग लें तो वह कोई न कोई बहाना बना कर टाल देंगी। इसके विपरीत निर्धन स्त्रियाँ जो बेचारी दिन भर पेट के लिए परिश्रम करती हैं—आशा के विपरीत एक ही प्रश्न करेंगी कि पेट की ज्वाला का क्या प्रबन्ध होगा ?"

गुरुदेव, आप मेरी स्थिति भली प्रकार समझते हैं। वैसे आपकी बात नग्न सत्य है, अब जैसा भी आप उचित समझें। नैया आपको पार लगानी ही होगी।"

फिर बिना एक-दूसरे का असम्मान किये एक-दूसरे की सौदेबाजी शुरू हुई। लम्बी और उकता देने वाली व्यापारी ढंग की बात-चीत। महन्तजी ने सर्व प्रथम प्रत्येक स्त्री पर पन्द्रह रुपये माँगे। गूदड़मल निरन्तर गिड़-गिड़ाते रहे। अन्त में पाँच रुपये पर सौदा तय रहा। एक बात और भी तय हुई कि महन्तजी के शिष्यों के साथ गूदड़मल के स्वयं-सेवक प्रत्येक उस स्त्री के पास जायेंगे जो प्रदर्शन के लिये आयेगी। धोबी वाली पक्की स्याही से उसका नाम उसके सामने लिख कर उसकी सफेद धोती ले

आयेंगे। यह इसलिए कि गूदड़मल और मोहनलाल दोनों की ये महत्वाकांक्षा थी कि जुलूस में सम्मिलित स्त्रियाँ अगर समस्त परिधान नहीं तो कम से कम धोती अवश्य भगुआ रंग की पहिने हों।

अब कल्पना कार्य-रूप में परिणित होनी आरम्भ हुई। इलाके के समस्त स्वयं-सेवकों की तीन दिन भाग-दौड़ के बाद विधवा आश्रम से, चन्दादेवी जिस स्कूल की मुख्य-अध्यापिका थीं उस स्कूल की छात्राओं से, और महन्त घिस्सू महाराज के द्वारा लगभग साढ़े आठ सौ धोतियाँ इकट्ठी हुईं— जो हौजकाजी के गुलामअली रंगरेज को भगुआ रंगने के लिए दी गईं।

पाँचवें दिन अर्थात् रम्भा द्वारा आयोजित स्त्री जुलूस के नौवें दिन गूदड़मल और मोहनलाल का भी स्वप्न यथार्थ में परिणित हुआ।

गूदड़मल की हवेली पर दोपहर होते-होते स्त्रियों का हुजूम जुड़ने लगा। जो भी स्त्री आती बैठक में नियुक्त लगभग दस स्वयं-सेवक तुरन्त उसे उसकी भगुआ रंगी हुई धोती निकाल कर दे देते अन्दर जाकर वह भगुआ धोती पहिन आती और जो धोती पहिने होती उसे आकर स्वयं-सेवकों के पास जमा करा देती।

लगभग तीन बजे शाम को गूदड़मल की हवेली के बाहर की छटा निहारने योग्य थी। मानो सारा संसार ही भगुआ हो गया हो।

तीन-चार पकी उम्र की स्त्रियाँ जो सीधी महन्तजी के घाट से यहाँ आई थीं, शायद कोई नशीला पदार्थ खा आई थीं। जब से आई थीं तभी से जोश में थीं, कांग्रेस और कांग्रेसी-नेताओं को बड़ी प्यारी-प्यारी गालियाँ देते हुए घड़ी-घड़ी वह जनसंघ की जय पुकार उठती थीं।

जुलूस चला और नेतृत्व इन्हीं तेज तर्रार देवियों के हाथ में रहा। मोहनलाल ने अच्छी तरह समझा दिया था कि सब जगह कौन करेगा देश अखंड ? भारतीय जनसंघ। वो किस कोट देना चाहिए ? 'लाला गूदड़मल और मोहनलाल को।' आदि नारे लगाने हैं। किन्तु दो विशेष स्थानों पर तेजी के साथ—धर्म के दुश्मन, देश के दुश्मन, का नारा जोरों के साथ लगाना है।

जुलूस चला तो मकानों की छतों पर नर-नारियों की भीड़ उमड़ पड़ी। गलियों के किनारों पर लोग-बाग इस तरह चिपक कर खड़े हो गये मानों रामलीला की सवारी देखनी हो।

मोहनलाल की सूझ सचमुच कारगर साबित हुई। स्त्रियों के इतने बड़े जुलूस को एक रंग में देख कर लोग आश्चर्य-चकित रह गये।

छदम्मीलाल की हवेली पर पहुँचते ही जुलूस का रंग बदला। शुरू में उन तीनों औरतों ने ऐन हवेली के दरवाजे के सामने—धर्म के दुश्मन—देश के दुश्मन, कहकर नारे लगवाना शुरू किया। किन्तु थोड़ी देर बाद अपनी मर्जी से नारा बदल कर उन्होंने छाती और माथा पीटना शुरू किया— 'धर्म के दुश्मन—हाय हाय।"

"धर्म के दुश्मन ? हाय हाय।"

गली गूँज उठी, कुछ देर बाद कुछ और भी हेकड़ औरतें उनके साथ आ मिलीं। मुहर्रम का-सा नजारा था—औरतें बुरी तरह चिल्ला रहीं थीं। मुँह से झाग निकल रहे थे किन्तु छाती माथा कूटना और—"धर्म के दुश्मन हाय-हाय।" चिल्लाना जारी था।

पुलिस के आठ सिपाही जो शुरू से ही जुलूस के साथ थे—' सोच रहे थे कि क्या करें ?"

अगले दिन इस जुलूस के जवाब में कांग्रेस की ओर से सारे क्षेत्र में पोस्टर चिपकाये गये, शीर्षक था—

जनसंघी गुण्डा गर्दी पर उतर आये।

जनसंघियों द्वारा आयोजित कल जो महिलाओं का जुलूस निकाला गया उसे मुहल्ले के सभी नागरिकों ने देखा और शर्म से गरदन झुका ली। संघी शहर भर की बेशर्म और बदनाम औरतों को किराये पर लाये और उनसे जो हुरदंग मचवाया गया वह सभ्य नागरिकता के नाम पर कलंक है

यह बात हम किसी द्वेष वश नहीं कर रहे हैं। हमने उनके अनेकों फोटो लिये हैं जो शीघ्र प्रकाशित कर दिये जायेंगे। उन फोटुओं से भली-

प्रकार स्पष्ट हो जायगा कि यह औरतें कौन थीं और इनकी हरकतों का मुहल्ले की बहू-बेटिओं पर कैसा प्रभाव पड़ा होगा ?

चुनाव में प्रत्येक राजनैतिक दल को अपने विचारों को प्रचारित करने का वैधानिक अधिकार है किन्तु क्या इस प्रकार की गुण्डा-गीरी सहन की जा सकती है ?

आप स्वयं फैसला कीजिये।

कांग्रेस कमेटी
चुनाव क्षेत्र नं० X



२४

कई दिन से नब्बन को बुखार आ रहा था। आरम्भ में उसने हठ-पूर्वक अपना बिस्तरा बाहर सहन में डाल लिया ताकि मैना के काम में बाधा न पड़े। किन्तु आज शाम को होते-होते बुखार बहुत तेज हो गया। अब मैना से सहन न हो सका। दो अन्य औरतों की सहायता से वह उसे अन्दर कमरे में लाई। नब्बन तेज बुखार के कारण तनिक बेहोशी-सी में था; इससे मैना और घबरा उठी। नीचे पंजाबी के होटल में उसने खबर भिजवाई। पंजाबी, नत्थन और मुबारक सभी दौड़े आये। जिस डाक्टर का इलाज चल रहा था मुबारक उसके पास दौड़ा गया।

डाक्टर आया; डाक्टरों के प्रचलित व्यापार के अनुसार उस डाक्टर ने इन्जेक्शन लगाकर सांत्वना देते हुए कहा—"कोई घबराने की बात नहीं है। सिर पर ठंडा कपड़ा रखते रहो थोड़ी देर बाद बुखार हल्का हो जायगा।" फीस मुटी में दबाकर डाक्टर रफूचक्कर हो गये।

पंजाबी की दूकान एक प्रकार से बाजार का सूचना-केन्द्र थी। बाजार के जिस आदमी से भी नब्बन की दुआ-सलाम थी वही खबर पाते ही हाल पूछने आता, फलस्वरूप अनिच्छापूर्वक मैना ने दरवाजे की चटखनी खुली ही रख छोड़ी थी।

लगभग आठ बजे यकायक छदम्मीलाल का प्रवेश हुआ। नब्बन के सिरहाने बैठी मैना को उन्होंने बांह पकड़कर खींचते हुए सीने से लगाना चाहा परन्तु हमेशा आलिंगनपाश में नाजुक कली की भांति सिमट जाने वाली मैना ने छदम्मीलाल के हाथ से अपनी बांह झटकते हुए कहा—"लाला साहेब आज आप लौट जाइये, नवाब साहेब की तबियत ज्यादह खराब है। शाम से ही होश में नहीं हैं।

"हाँ, हाँ, तो क्या हुआ। हस्पताल······।" एक तो जीना चढ़कर यहाँ तक आने का परिश्रम ऊपर से मैना की बेरुखी हड़बड़ाये स्वर में छदम्मीलाल कह रहे थे—"······ हस्पताल, बड़े हस्पताल भिजवा दूं।"

गुस्से से मैना के नयन जलने लगे। किसी प्रकार संयत स्वर में उसने कहा—'हस्पताल वो जाते हैं जिनके आगे पीछे कोई होता नहीं है। आप सिर्फ़ इतनी मेहरबानी कीजिये कि आज ऐसे ही वापस चले जाइये।'

"मैंने ···मैंने अभी पिछले हफ्ते एक हज़ार का चैंक दिया था।" छदम्मीलाल आवेश से कांपते हुए बोले।

"तो इससे मुझे इन्कार कब है। आप दो-चार दिन बाद तशरीफ लाइये। तब तक इनकी तबियत सुधर जायेगी।"

सम्भवतः मैना की शिष्टता से ही छदम्मीलाल को साहस हुआ। बोले—"बीमार तो सब ही होते रहते हैं। यह कोई मर थोड़े ही रहे हैं···········।"

इतना कहना था कि मैना ने बिजली की तेज़ी से उठकर छदम्मीलाल को दरवाजे से बाहर धकेलते हुए कहा—"मरो तुम और तुम्हारे घर के, निकल जाओ यहां से, वरना अभी आदमियों को बुलाकर जूते लगवाकर निकलवा दूंगी।"

छदम्मीलाल के हौसले एक ही डाँट मे हवा होगये । बदन की समस्त तेजी को पैरों मे समेटकर वह धड़म-धड़म जीना उतर गये । अपने पैसे की अपार महिमा के प्रताप से आज तक उन्होंने इस बाजार की नारियो का यह रूप नही देखा था ।

छदम्मीलाल चले गये । नब्बन अब भी अचेत था । आँसू जो इस विषम परिस्थिति मे साहस खो बैठने के कारण आँखों से बह निकले थे आंचल मे पोछते हुए मैना ने चटखनी बन्द की और नब्बन के सिरहाने आ बैठी ।

दरवाजा फिर किसी ने खटखटाया । मैना ने उठकर खोला तो देखा उसका एक ग्राहक था । जो छदम्मीलाल से भी कही अधिक पैसा दे चुका था

"क्या कोई अन्दर है ।' आगन्तुक ने प्रश्न किया ।

'जी मेरे नवाब साहेब हैं । कई दिन से उन्हे तेज बुखार है । आप किसी और दिन तशरीफ लाइयेगा ।" इतना कहकर बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये मैना ने दरवाजा बन्द कर लिया ।

"कौन, कौन है ? नब्बन की बेहोशी टूटी और तनिक आँखें खोलते हुए मन्द स्वर मे उसने कहा ।

"कोई नही ।" मैना की आँखो मे प्रसन्नता चमक उठी—"कैसी तबियत है नवाब साहेब ?"

"अच्छी है ।" अस्फुट स्वर मे नब्बन ने उत्तर दिया ।

"थोड़ा-सा दूध लाऊं ।"

"नही ।"

"मेरी कसम बहुत थोडा-सा ....बस आधा गिलास ।"

"............ ...।" नब्बन ने कोई उत्तर नही दिया ।

सम्भवत: प्रथम बार मैना गिलास लेकर अकेली जीने से नीचे उतरी । पजाबी मे दूध लाकर बाँह के सहारे नब्बन को उठाया । और गिलास उसके मुँह से लगा कर कहा—"डाक्टर आया था । कहता था

दो-तीन दिन में ठीक हो जाओगे।"

वड़ी कठिनता से नव्वन ने दूध गले से उतारा, पीड़ा के कारण वह दूध पीने के बाद एक क्षण के लिए भी वैठा नहीं रह सका। पुनः लेट गया

"सर में बहुत दर्द है वेगम......।" कुछ क्षण पश्चात् नव्वन बोला।

मैना सिर दवाने लगी। किन्तु नव्वन ने अपने हाथ से उसके हाथ रोकते हुए कहा— 'रहने दो, मेरी वजह से तुम्हें पहिले ही वहुत-सी परेशानियां उठानी पड़ रही हैं।"

मैना ने कोई उत्तर नहीं दिया, एक हाथ से नव्वन का हाथ थामकर दूसरे से चुपचाप सिर दवाती रही।

कुछ देर वाद नव्वन फिर बोला—"वेगम...... प्रेम साहेव नहीं आये ? वह मुझ से नाराज़ हो गये हैं। दो हफ्ते हो गये उन से मिले हुए।"

"कहिये तो किसी के हाथ बुलवा लूं ?"

"नहीं यहां कोई उनका घर नहीं जानता।"

"वता दीजियेगा पता। मैं नत्थन को बुलाती हूं।" उठते हुए मैना बोली।

"रहने दो वेगम। उसके काम का वक्त है, सुबह देखा जायेगा।"

"उसे मजदूरी दे देंगे।" इतना कहकर मैना चली गई।

"लगभग दस मिनिट वाद मैना नत्थन सहित लौटा।

"कहिये नवाव साहेव क्या हुक्म है ?"

"कोई खास वात तो नहीं है, अगर वक्त हो तो जरा वाजार सीताराम तक भेजना चाहता था। मैं तो वेगम साहिवा से पहिले ही कह रहा था कि काम का वक्त है......।"

"अजी यह साले काम तो चलते ही रहेंगे। आप अपना काम वताइये ?"

"एक दोस्त रहते हैं वहां, अगर घर पर मौजूद हो तो ज़रा बुलाकर

ले आना है।" इसके उपरान्त नब्बन ने विस्तार सहित प्रेम के घर का पता बता दिया।

चलने को हुआ तो मैना ने नब्बन के तकिये के नीचे से दस रुपये का एक नोट नत्थन की ओर बढ़ाते हुए कहा—"ताँगे में चले जाइयेगा, और ताँगे में ही·······।"

"हाँ हाँ, इन्हें आप रखिये पैसे मेरे पास हैं।"

"ले लो भाई जान, बीमारी के दौर में वैसे ही तुम ने बहुत-से अहसान किये हैं।"

मैना ने उठकर नोट नत्थन की जेब मे डाल दिया। नत्थन जा ही रहा था कि नब्बन बोला—"भाई जान, अगर वह मिलें तो कहना कि शिकायतें और गिकवे तो जीते जिन्दगी के हुआ करते हैं। तुम्हारा दोस्त अब मौत के दरवाजे पर खड़ा है।"

नत्थन ने दरवाजे से बाहर पैर रखा कि मैना की रुलाई फूट पड़ी। दरवाजे से सटकर वह सिसक-सिसक कर रोने लगी।

"बेगम, सुनो तो बेगम।" नब्बन ने बिस्तरे पर लेटे-लेटे ही कहा—"मेरी जान की कसम रोओ मत। ये तो मैंने इसलिए कहा है कि प्रेम साहेब गुस्सा भूलकर नत्थन के साथ चले आयें। तुम उन्हें नहीं जानतीं, उनका गुस्सा बहुत ही तेज है। देखो ना, इस इतवार के बाद सोमवार को मिले और बातों ही बातों में ऐसे नाराज हुए कि आज तक इधर का रुख भी नहीं किया, बेगम मेरी जान की कसम, तुम मेरे पास आओ।"

मैना सुबकते हुए आकर सिरहाने बैठ गई—"इधर आओ मेरी आँखों के सामने।" हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचते हुए नब्बन बोला।

मैना पैताने आ बैठी। किन्तु नब्बन की निस्तेज-सी आंखों से आखें न मिला सकी। उसने अपना मुख नब्बन के वक्षस्थल पर झुका दिया और सिसकती रही।

नब्बन कह रहा था—'तुम जैसी नेक दिल खातून की मुहब्बत पाकर कौन बदनसीब मरना चाहेगा बेगम, उठो आओ मुँह-हाथ धो लो—

शायद प्रेम साहेब आ ही जायें। उठो ना।"

मैना उठ कर चली गई, थोड़ी देर में लौटकर आई तो नब्बन ने कहा—"बेगम एक ख्वाहईश है अगर पूरी कर दो तो?"

"फरमाइये।"

"मेरे पास बैठ कर कोई गजल सुना दो।"

"कौनसी गज़ल सुनियेगा।"

"जो तुम्हारी पसन्द की हो और पूरी याद हो।"

"अगर गज़ल सुनने का शौक है तो दिन-रात गज़ल सुनाया करूंगी। इस वक्त गजल सुनने से सर-दर्द और बढ़ेगा।"

"गज़ल सुनने से सर-दर्द नहीं बढ़ा करता बेगम, दिल को सुकून मिलता है।" मैना ने नब्बन से ही गजलों का तरन्नुम सीखा था। अपनी पसन्द की उसने दो 'मीर' की गज़लें सुना दीं।

इसके बाद वह सिर दबाने लगी। अभी तक नब्बन ने अपनी बीमारी के दिन बाहर सेहन में बिताये थे। रात में मुंह ढांप कर पड़ा रहता और प्रयत्न करता कि उसके कराहने की आवाज़ अन्दर तक न जा सके। किन्तु आज उसे महसूस हुआ कि मैना की उपस्थिति म बीमारी में भी एक विशेप हार्दिक सांत्वना मिलती है। मन ने प्रश्न किया कि वह क्यों व्यर्थ की आदर्शवादिता के चक्कर में पड़ कर अभी तक बाहर सेहन में पड़ा रहा?

तभी बाहर से आवाज आई—"भाई साहेब।" और बदहेवास-सा प्रेम कमरे में दाखिल हुआ। आते ही वह नब्बन के पास ही पलंग पर बैठ गया। हाथ में हाथ थाम कर नब्ज देखने का उपक्रम करता हुआ बोला—"कैसी तबीयत है?"

"ठीक है" नब्बन मुस्कराया—"तबीयत ठीक है प्रेम साहेब, सोचता था कि ऐसे तो आप आयेंगे नहीं—इसीलिए इस झूठे बहाने की जरूरत पड़ी।"

किन्तु प्रेम का स्वर दूसरा ही था—"आप उन इन्सानों में से हैं

भाई साहेब, जो अपनी मर्जी से अपनी जिन्दगी को बिगाड़ कर इस आरज़ू मे दिन बिताते हैं कि मौत आये और ले जाये। आप······किधर देख रही हैं, आप भी ऐसे ही नाकारा लोगों मे शामिल हैं ?" अन्तिम वाक्य प्रेम ने मैना को सम्बोधित करते हुए कहा।

मैना बोली—"इनसे तो आप की कहा-सुनी हुई, लेकिन आप तो मुझ से भी नाराज मालूम होते हैं। जानबूझ कर तो कोई गलती की नहीं है, अगर अनजाने में हुई हो तो बता दीजिये, माफी माँग लूँगी।"

"गलतियों की माफी मुझसे माँगने की तो जरूरत नहीं है। अलबत्ता अगर दुनियाँ से बाहर कोई ऐसी जगह है जहाँ इन्सान को अपनी गलतियों का जवाब देना पड़ता है, तो वहाँ आप को यकीनन इस बात का जवाब देना पड़ेगा कि—आप दोनों ने अपनी अच्छी-खासी जिन्दगी को क्यों जहन्नुम बनाया हुआ था ?"

और कोई समय होता तो नव्वन प्रेम को इस प्रकार की बातें करने से रोक देता, किन्तु आज न जाने क्यों उसे ये बातें अच्छी लग रही थीं।

मैना कह रही थी—"प्रेम साहेब, मैं बेपढ़ी-लिखी औरत हूँ। साफ बताने की मेहरबानी कीजिये कि मेरी गलती क्या है ?"

"मैंने आपको सब कुछ बताया है, आपके नवाब साहेब को भी महीनों जिन्दगी और उसके फर्ज के बारे में बताने की कोशिश की है·······।"

"बेगम, तुम तो आते ही प्रेम साहेब से लड़ने लगी।" नव्वन अभी तक सीधा लेटा हुआ था। दोनों की ओर मुँह रहे इस विचार से उसने करवट बदली।

"नहीं नवाब साहेब मैं इनकी आपसे ज्यादह इज्जत करती हूँ। लड़ने-झगड़ने का सवाल ही नहीं है।"

"तो फिर इनके लिये चाय वगैरह ·······।"

"मुझे चाय-वाय कुछ नहीं पीनी है। आइन्दा मैं कभी आपको तकलीफ भी नहीं दूँगा।" निश्छल-भाव से प्रेम ने कहा।

मैना बात अनसुनी कर के उठी। बाहर जा ही रही थी कि प्रेम

बोला—"मैं सच कहता हूँ कि मैं चाय नहीं पियूँगा।"

"क्यों नहीं पियेंगे ?" मैना मुस्कराते हुए बोली।

"मरज़ी मेरी।" प्रेम का गुस्सा था कि ठंडा होने में ही न आ रहा था—"आप लोग मेरे होते ही कौन हैं ? यही ना कि इत्तफाक से भाई साहेब से सड़क पर मुलाकात हुई और यूं ही कुछ ताल्लुकात बन गये। इनकी तबियत ठीक होते ही मैं सारे ताल्लुकात खतम कर दूंगा।"

मैना के चेहरे पर पूर्ववत मुस्कराहट थी—"ताल्लुकात खत्म करने के लिये नहीं बना करते प्रेम साहेब।" प्रेम के निकट आकर वह बोली—"नवाब साहेब से आप शौक से लड़ते रहियेगा। मेरी आपकी सुलह हुई। वायदा करती हूँ कि आज से आपका हर एक हुक्म मानूंगी। अपनी गलती मैं महसूस करती हूँ, मुझे आपका पहला हुक्म ही मान लेना चाहिये था। अब तो चाय मँगा लूं।"

"नहीं-नहीं आप बैठिये।"

"देखिये प्रेम साहेब, नवाब साहेब आपसे बड़े हैं। भले ही आप बेटे के बाप बन चुके हैं—मैं......भाभी लगती हूँ आपकी, देवर-भाभी का झगड़ा भी मजाक हुआ करता है और मजाक तो मजाक है ही। समझे मैं डरती नहीं हूँ आपसे।" दोनों हाथों की उँगलियों से प्रेम के बाल बिखेर कर मैना भाग गई।

"बहुत अच्छे।" अब नब्बन बोला—"देखा प्रेम साहेब, कितनी अच्छी है मेरी बेगम।"

"वह कुछ भी हैं।" प्रेम के स्वर में अब भी क्रोध के भाव थे—"हिन्दुस्तानी मिट्टी का बनी हुई हैं—आपकी तरह नहीं हैं।"

"मैं शायद विलायती मिट्टी का बना हुआ हूँ ?"

"यह आप खुद ही जानिये, अरब के रेगिस्तान की तरह खुश्क, मिश्र के पिरामिडों की तरह........।"

"बुलन्द।" नब्बन ने चुटकी ली।

"जी नहीं मिश्र के पिरामिडों की तरह सुनसान.......।"

"बस बस, मैं समझ गया यह किसको तारीफ हो रही है।"

"आपके दिल की।"

"बहुत तारीफ हो गई। प्रेम साहेब जिन्दगी के बारे में यकीनन आपके तजुर्बे ज्यादह कारगर हैं। चलिये सुलह हो गई। लेकिन मैं आपको नाराजगी का सबब अभी तक नहीं समझ पाया, आखिर इतने दिनों तक आप इधर आये क्यों नहीं?"

"इसलिये कि आपको मेरी जरूरत नहीं थी। जिस दिन मैंने इतने बातें की थीं आपको अफसोस हुआ। आप अपनी मुहब्बत को खुदगर्ज नहीं बनाना चाहते थे, और चाहते थे कि मैं आपकी दोस्ती का फर्ज आपकी बरबादी का तमाशा देखकर अदा करूँ। मैं इतना ऊँचा आदमी नहीं हूँ, मामूली इन्सान हूँ जिन्दगी के हर पहलू की जरूरतों को पहले देखता हूँ, सोचा कि मुझ जैसा मामूली आदमी आप जैसे देवता की दोस्ती के काबिल नहीं है। इसलिये ......"

"चलिये अब छोड़िये, मुझे तो आपके आने की कतई भी उम्मीद नहीं थी, आज बड़ी जल्दी आ गये दूकान से?"

"आजकल दूकान शाम होते ही बन्द हो जाती है, इसके बाद दूकान के सब लोग रहमतीलाल के चुनाव के सिलसिले में उसके इलाके में जाते हैं।"

"अच्छा फिर तो आप भी ...... ?"

"मैं आज तक नहीं गया, और तय किया है कि आइन्दा भी नहीं जाऊँगा, ऐसे कमीने आदमी के लिये लोगों से वोट देने को कहने का मतलब है कि मुल्क को और भी जहन्नुम के गहरे कुएँ में धकेल दो।"

"चाय आ रही है जनाब।" मैना ने आकर बैठते हुए कहा।

"बेगम!" नन्दन ने कहा—"तय यह हुआ था कि तुम दोनों के रिश्ते के बारे में फैसला करूँगा। तुम्हें मेरे फैसले का इन्तजार करना चाहिये था।"

"अब तय ये हुआ है कि तुम्हारे किसी भी फैसले को मैं नहीं माना

करूँगी, आज से मुझ पर देवर साहेब का ही हुक्म चलेगा।"

"जिन्दाबाद।" नब्बन ने कहा—"हमें मंजूर है। लेकिन प्रेम साहेब अब ये रिश्ता आप भी जाहिरा तौर पर कबूल फरमाइये। हमारे सामने एक दफ़ा इन्हें भाभी कहिये?"

"मैं नहीं कहूँगा।"

तभी हवा के झोंके की तरह जमूरा आया और मेज़ पर चाय की ट्रे रख कर पलक मारते ही भाग गया।

"हाँ तो प्रेम साहेब कह डालिये।"

"जी नहीं, नहीं कहूँगा।"

"तो मैं क्या समझूं कि देवर साहेब अभी तक नाराज़ हैं?"

"नहीं भाभी मैं आपसे नाराज नहीं हूँ, चाय बनाइये।"





२५

आखिर वह दिन भी आ गया जिसके लिए गुसाईं, सुन्दरलाल और रम्भा के हाथों पैंतीस हज़ार छदम्मीलाल की तिजोरी में से जा चुके थे—और लाख खींच करने के बावजूद मोहनलाल तथा गूदडमल भी ग्यारह हज़ार के लिये चित हो चुके थे।

अभी पौ भी नहीं फटी थी, रविवार के दिन आम नौकरी पेशा नागरिक इच्छा रखते हैं कि तनिक देर तक बिस्तरे की गरमाई के आनंद ले सकें। किन्तु वोट को पठान के ब्याज की तरह वसूल करने के इच्छुक चुनाव कार्यकर्ताओं के हड़कम्प ने उन्हें समय से पहिले बिस्तरा छोड़ने पर मजबूर कर दिया।

सरकारी तौर पर आज के दिन लाउड स्पीकर पर तो पाबन्दी थी ही, साथ-साथ जुलूस अथवा नारे लगाने की भी आज्ञा नहीं थी। किन्तु

चुनाव कार्यकर्ता लोगों के आत्मीय-मित्र का सफल अभिय करने में व्यस्त थे। लोगों से तनिक सज्जनता का व्यवहार पाकर ही यह घरों में घुस जाते और चूल्हे अथवा बिस्तरे के निकट जाकर वोट के सही उपयोग का महत्व बताने लगते।

कभी-कभी ऐसा भी हो रहा था कि जनसंघ और कांग्रेस के कार्यकर्ता किसी घर के दरवाज़े पर अथवा किसी घर में अकस्मात् टकरा जाते और बिना किसी दुआ-सलाम के ही ओछी बहस पर उतर पड़ते। ऐसे समय पर यह घटना नर-नारियों के लिये बिना टिकट के तमाशे जैसी होती। लोग दोनों के इर्द गिर्द इस प्रकार खड़े हो जाते मानों मुर्गों की लडाई देख रहे हों। स्त्रियाँ भी अपनी उत्सुकता नहीं छुपा पातीं। यूँ ही केवल नाम-मात्र के लिए आँचल स सिर ढाँपने का प्रयत्न करते हुए एक-दूसरी स्त्री की ओट लेने का निरर्थक उपक्रम करके इस तमाशे को देखतीं।

आठ बजते बजते दरवाजों पर आवाजें आने लगीं—"भाई साहेब चलिये।" संघी कह रहे थे—"श्रीमान्जी अन्य काम तो जीवन भर चलते हैं, बहिनजी सहित आ जाइये और पोलिंग खुलते ही इस काम को भी सम्पन्न कर दीजिये।"

कांग्रेसी अपनी हांक रहे थे—"भाईजी, राष्ट्रीय-नेताओं के महान् बलिदान के बाद आज यह अवसर आया है कि आप अपनी सरकार स्वयं चुनें, उठिये।'

कुछ ऐसे व्यक्ति भी थे जो चुनाव-कार्यकर्ताओं के आग्रह से विवश होकर मतदान केन्द्रों के निकट आकर खड़े हो गये। दस बजते-बजते मतदान केन्द्र के द्वारों पर मतदाताओं की लम्बी लाइनें लग चकी थीं।

मतदान आरम्भ हुआ। जो मतदाता मतदान कर जाता उसकी ओर दृष्टि उठाकर देखने की भी किसी चुनाव-कार्यकर्ता को फुरसत न थी। किन्तु जा लोग अभी घर से नहीं निकले थे उनके घर द्वारों पर कांग्रेसी और जनसंघी दोनों ही दलों के कार्यकर्ता और कार्यकर्तृ पाँच-पाँच मिनट बाद पहुँच रहे थे।

मतदान अभी लगभग अठारह-उन्नीस प्रतिशत ही हुआ था कि एक बज गया। वैसे बारह बजे से ही मतदाताओं की भीड़ छट गई थी। एक बजते बजते मतदान-केन्द्र मतदाताओं से खाली हो गये।

वैसे एक से दो बजे तक मतदान बन्द भी रहना था। यह कार्यकर्ताओं तथा चुनाव कार्य सम्पन्न कराने को नियुक्त सरकारी व्यक्तियों का 'लंच टाइम' था।

दोनों दलों के चुनाव-कार्यालयों में लड्डू कचौड़ियाँ उड़ाई जा रही थीं।

छदम्मीलाल की हवेली के एक बन्द कमरे में लाला छदम्मीलाल, सुन्दरलाल, गुसाईंजी और रम्भा कार्यकर्ताओं द्वारा प्राप्त रिपोर्ट पर बहस कर रहे थे।

सुन्दरलाल कह रहे थे—"मैं भी यही समझता हूँ कि हमारे और जनसंघ के अभी तक तकरीबन बराबर वोट पड़े हैं। यह ठीक है कि हमारा प्रचार संघियों से अधिक था। लेकिन श्यामाप्रसाद मुकर्जी के भाषण का भी लोगों पर बहुत प्रभाव पड़ा है।"

'यूँ ही सही।' गुसाईंजी बोले—"लेकिन फिर भी हमें अभी कोई रेट नहीं तय कर देना चाहिये। जैसा आदमी हो उसे वैसे ही ढंग से फाँसना ठीक रहेगा।"

"गुसाईंजी ठीक कहते हैं। रम्भा बोली—"कोई निश्चित रेट हमें नहीं तय कर देना चाहिये।"

"सवाल यह है कि जो आदमी पैसा लेकर वोट देना चाहते हैं, उनसे हम कैसे वोट लें। अगर हमारा रेट खुला हुआ होगा तो वह सीधे हमारी तरफ आयेंगे, मान लीजिये हमारे आदमी उन आदमियों को इधर लेकर चलें, रास्ते में संघी कहते हैं कि आओ हम पाँच रुपये वोट देंगे। तब उन आदमियों को हमारे आदमी कैसे काबू में रक्खेंगे ? क्यों लालाजी ?" सुन्दरलाल ने कहा।

"यह सब मैं कुछ नहीं जानता। मैंने आज सुबह ही गुसाईंजी को चालीस हज़ार के नोट सम्भलवा दिये हैं। सब बाँट दो खुले दिल से,

अरे जब ओखली में सिर दिया है तो मूसलों से क्या डरना। रम्भा तुम दो, चार, पाँच, दस जितने चाहो रुपये औरतों को दो, लेकिन सब वोट अपने बक्से में आने चाहियें।"

'घबराइये नहीं. मर्दों से ज्यादह वोट औरतों के पड़े हैं, और आपके सब वर्करों ने मिलकर भी इतने वोट नहीं बनाये होंगे जितने मैंने, औरतों के पचहत्तर फी सदी वोट आपके बक्से में पड़ रहे हैं।"

"मैं भी" गद्गद् होकर छदम्मीलाल ने कहा—"अगर मंत्री बना तो जितना भी काम करूँगा औरतों के लिए ही करूँगा।"

गुसाईंजी को बेवक्त की रागिनी पसन्द नहीं आई। उन्होंने अपने खास-खास चेलों को जो अलग-अलग मतदान-केन्द्रों के मतदाताओं को घर से निकालकर मतदान केन्द्रों तक पहुँचाने के इंचार्ज थे बुलाया और अलग ले जाकर काफी देर तक समझा कर विदा कर दिया। एक और व्यक्ति को आदेश दिया—"घर से एक बोतल और बैठक में अलमारी के पीछे एक सत्यनारायण की तस्वीर पड़ी है उसे ले आओ।"

"क्या पूजा कीजियेगा ?" सुन्दरलाल ने पूछा।

"हाँ जी, जब यह सब बवाल सिर पर लिया है तो पूजा भी करनी पड़ेगी।"

कमरे के एक कोने में उन्होंने एक मेज और दो कुर्सियाँ रखवाईं और बैठ गये। छदम्मीलाल सीधी कुर्सी पर से उठे और दूसरे कोने में पड़ी आराम कुर्सी पर लेट गये।

दो बजने वाले थे, रम्भा और सुन्दरलाल चले गये।

गुसाईंजी ने जिस आदमी को घर भेजा था वह फ्रेम में जड़ी सत्य-नारायण की तस्वीर और एक खाली बोतल ले आया। 'बोतल में पानी भर लाओ।" गुसाईंजी ने तस्वीर को मेज के एक किनारे पर खड़ा करके उस आदमी को आदेश दिया।

कुछ क्षण बाद सत्यनारायण की तस्वीर के साथ पानी से भरी बोतल भी डाट लगाकर रख दी गई।

कुछ देर बाद गुसाईंजी के भेजे हुए एक कार्यकर्ता के साथ एक बूढ़ा-सा आदमी कमरे में आया।

"आओ जी ! छंगा चौधरी आओ।" गुसाईंजी इतने उत्साह में बोले कि छदम्मीलाल जो आराम कुर्सी पर पड़े खर्राटे भर रहे थे चौंक कर सीधे बैठ गये।

"कहो !" कथित छगा चौधरी को कुर्सी पर बैठाते हुए गुसाईंजी बोले—"क्या कह रहे हैं आपकी बिरादरी के आदमी ?"

"अजी बड़ा खराब वक्त है, एक तो साले पहले से ही जाहिल थे ऊपर से लाला गूदड़मल के आदमियों ने सुबह से ही उन्हें लालच दे दिया कि तीन रुपये फी वोट के हिसाब से देंगे—सुसरे वोट बेचने को तैयार बैठे हैं। बड़ी मुश्किल से अब तक रोक रक्खा है उन्हें ......।"

'यह सब तो है चौधरी, पर उनका वोट हमारे ही बक्से में डलवाना होगा। अब जो कुछ तुम कहो उसका इन्तज़ाम मैं कर दूं।"

"वैद्यजी, तुम तो जानते ही हो। मैं तो हमेशा जैसे तुम ने कहा है वैसे ही चला हूं, अब जैसे तुम कहो ?"

"कितने आदमी हैं ?"

"पन्द्रह।"

"और औरतें ?"

"औरतें उन्नीस हैं।"

"आदमी साथ लाये हो ?"

"हां जी आपका हुक्म भला टाल सकता था।"

"बुलाओ उन्हें एक-एक करके।"

बात हुई, इस तरह जैसे दूकानदार और ग्राहक में हुआ करती है। अन्त में तीन रुपये प्रति वोट पर सौदा तय हुआ। प्रत्येक व्यक्ति को उलटे हाथ में तीन रुपये थमाये गये और सीधे हाथ में पानी की बोतल थमा कर गुसाईंजी कहते—"देखो भाई गंगाजी तुम्हारे हाथ में है। यह सत्य-

नारायण हैं, हमारे सामने एक बार कह दो कि दोनों वोट बैल के डिब्बों में डालोगे।"

छदम्मीलाल की नींद उचटी कि फिर नहीं लगी। मन में धुकड़-पुकड़ हो रही थी कि क्या नतीजा निकलेगा। अलबत्ता रुपये-पैसे की चिन्ता नहीं थी—बहुत पहिले ही मन को समझा चुके थे कि एक लाख रुपये की यह भी धूम-धड़क्का सही।

बहुत देर तक वह गुसाईंजी की गंगाजली का तमाशा देखते रहे। फिर जमुहाई लेते हुए उठे और अकेले ही जरा बाहर टहलने के इरादे से चल दिये।

"लालाजी लालाजी।" एक चुनाव-कार्यकर्ता जो भागा हुआ आ रहा था छदम्मीलाल को देख कर रुकता हुआ बोला—"लालाजी कच्ची गली वाले लाला जंगलीमल के कटरे के वोट गूदड़मल ने तोड़ लिए समझो। वह एक वोट के पांच रुपये दे रहे हैं।"

'घबराओ मत, जाकर तुम उन्हें फिर तोड़ लो। गुसाईंजी से फी वोट छः रुपये दिलवा दो सब को।"

कार्यकर्ता फिर उलटे पांव दौड़ गया।

छदम्मीलाल के दिल की मशीन बड़ी तेजी से चलने लगी। उनकी इच्छा हो रही थी कि वह खुद मतदाताओं के पास दौड़े जायें और छः-छः रुपये देकर सारे वोट बैल के डिब्बे में गिरवा दें।

मैना की बेरुखी को वह भूले नहीं थे। तभी से उनके दिल में एक ही महत्वाकांक्षा थी, एक बार मंत्री बन जाऊँ तो इस हरामजादी को जरा जेल की चक्की पिसवा दूं। इस सुसरी ने बड़ा धोखा किया है।

तभी सामने से चम्पा आती दिखाई दी। चुनाव के काम के लिये जितनी लड़कियां नौकर रक्खी गई थीं उन सब में लाजवाब माल लाला की नजरों में यही थी। बड़ी इच्छा थी कि.......किन्तु हर समय सुन्दरलाल, गुसाई और रम्भा की उपस्थिति ने इनके मन की मन में ही रक्खी।

"क्यों।" चम्पा को देख कर लाला ने मुस्कराते हुए कहा—"सब ठीक-ठाक है ना ?"

'जी हाँ, रम्भाजी को ढूंढ रहा हूँ। कुछ औरतें हैं जो साफ कहती हैं कि बिना रुपये लिए वोट नहीं डालेंगी।"

"तो इसमें रम्भा को ढूंढने की कौन-सी बात है, कितनी औरतें हैं ?"

"चार।"

"आओ गुसाईंजी से रुपये दिला देता हूँ। जरा धर्म-कसम खिला कर जितने रुपये वह मांगें दे देना।"

किन्तु छदम्मीलाल उसे गुसाईं के पास न ले जाकर ऊपर ले जाना चाहते थे। किन्तु अभी जीना चढ़ ही रहे थे कि बेकाबू हो गये।

"ठहरो।" वह बोले —"कितना रुपया काफी होगा।"

"जी बीस रुपये।"

"बस।" लाला ने पर्स खोल कर पहिले दस-दस के दो नोट निकाले और फिर तनिक सोच कर एक सौ का भी निकाल लिया—"लो यह एक सौ बीस रख लो अगर कोई और औरत मिले तो उसका वोट भी डलवा देना।" जीने के एक ओर सिमटी-सी खड़ी चम्पा को अपनी तोंद के भार से दबाते हुए लाला ने कहा—"तुम मुझे बहुत अच्छी लगती हो, चुनाव के बाद भी नौकरी करना चाहो तो आ जाना।"

चम्पा के चेहरे पर घृणा के भाव उभरे और मिट गये उसके हाथ में नोट थे जिन्हें आधुनिक-युग का ईश्वर कहा जाता है।

क्षण भर बाद जब चम्पा जीने से उतरी तो तेजी से हवेली के मुख्य द्वार की ओर दौड़ी। उसका एक हाथ गाल पर था। शायद ''''''।

जीने से उतर कर छदम्मीलाल तनिक हाँफते हुए बाहर जाना ही चाहते थे कि सामने से लाला सांवलचन्द आते दिखाई दिये।

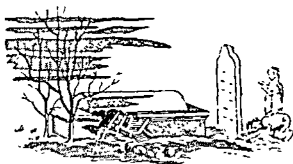
"लो बेटा, अपनी गली का एक-एक वोट दो बैलों वाले डिब्बे में डलवा दिया है, अब बताओ कहीं और मुर्गियाँ फाँसनी हो तो ?"

"आओ चाचा गुसाईंजी ही बतायेंगे।"

गुसाईंजी को अपनी भी चिन्ता थी। उन्होंने सांवलचन्द को अपना काम सौंपकर इच्छा प्रगट की—"मैं जरा मुगल्लों का चक्कर लगा आता हूं। लाला सांवलचन्द जी इस काम को आप सम्भालिये। बिना गंगाजली उठवाये किसी को रुपया मत देना। रकम दराज में है।"

ज्यों-ज्यों समय बीत रहा था वोटों की कीमत बढ़ रही थी। चार से पांच............फिर बढ़ते-बढ़ते मामला पन्द्रह पर आ पहुंचा।

अन्त में पांच बजे, और चुनाव समाप्त हो गया।



२६

दो हफ्ते से अधिक बुखार से पीड़ित रहने के बाद आज नब्बन ने प्रथम बार स्नान किया।

इस दौर में मैना का धन्धा बन्द-सा ही हो गया। सुबह प्रेम आता तब वह स्नान आदि के लिए कुछ समय कमरे से बाहर जाती थी अन्यथा ये दिन उसने नब्बन के निकट बैठकर ही बिताये थे।

रात को फिर प्रेम आता और घण्टों बैठा रहता। मानवीय सम्बन्धों का मूल्य मैना ने इन्हीं दिनों समझा।

आज सोमवार था, नित्य की भाँति प्रेम आज भी सुबह एक घण्टे की हाजिरी देने आया।

"आइये देवर साहेब!" मैना जो अभी बाल सँवार कर आइने के सामने से हटी थी बोली—"नवाब साहेब का गुसल हो गया है।"

"बैठिये प्रेम साहेब, कहिये क्या प्रोग्राम है ?" नव्वन बोला।

"कोई प्रोग्राम नहीं है दूकान जा रहा हूँ।"

"अगर आज दूकान न जाओ तो ?"

"क्यों ?"

नव्वन ने दृष्टि उठाकर मना की ओर देखा, वह मुस्करा दी।

"ये आँखों ही आँखों में क्या बातें हो रही हैं भाभी साहिबा ?"

"आज·······हम लोग जा रहे हैं। आप की दिल्ली से हमेशा के लिए ; विदाई नहीं दीजियेगा।'

"सच, भाई साहेब भाभी ठीक कह रही हैं ?"

"जी हाँ, सोचा कि बड़ी मुश्किल से आपकी नाराजगी दूर हो सकी है, कहीं ऐसा न हो कि आप फिर नाराज होकर हम पर सितम ढाने लगें। इसलिए वक्त से पहिले ही दिल्ली छोड़ कर अपने वतन चले जाना चाहते हैं।"

प्रेम ने मैना की ओर हाथ बढ़ाया—"भाभी नई जिन्दगी मुबारक हो।"

लजाते हुए मैना ने हाथ प्रेम की ओर बढ़ाते हुए कहा—"यह सब कुछ आप की मेहरबानी है।"

"प्रेम साहेब, आज मुमकिन हो सके तो दूकान न जाइये और·······।"

"अब मैं दूकान नहीं जाऊँगा, वैसे भी आज चुनाव के नतीजे निकलने हैं, दूकान शायद ही खुले।"

"तो फिर दो काम हैं, एक तो मरहूम जनाब 'शायराने जहां' मिर्जा ग़ालिब का मजार दिखाइये, दूसरे जाने से पहिले एक बार मैं बहिन से भी मिलना चाहूँगा।"

"चलिए फिर मजार देख आयें।"

"बेगम तुम भी चलोगी ?"

"क्यों नहीं चलेंगी, भाभी ग़ालिब की कब्र पर चलो। पुकार कर कहना कि उस्ताद तुम्हारे शागिर्द इतने नाकारा और······।"

"प्रेम साहेब, यह ग्राप किम बुनियाद पर कह रहे हैं। उस्ताद गालिब के शागिर्द मैदान छोड़ कर नही भागते।"

"लेकिन मैदान मे बेजान बुत की तरह खड़े रहते हैं।"

"जी नहीं मैदान मे बाग्रदब हुक्म की इन्तजार मे खड़े रहते हैं। खुद जनाब गालिब का कलाम है :—

मेहरबाँ हो के बुला लो मुझे चाहे जिस वक्त,
मैं गया वक्त नही हूँ कि फिर ग्रा भी न सकूँ।"

प्रेम कुछ कह ही रहा था मैना बोली—"ग्रगर चलना है तो चलिए, वरना ग्रगर ग्राप दोनों मे छिड गई तो शाम यही हो जायेगी।"

"यानी ग्राप तैयार हैं, तो फिर चलें प्रेम साहेब ?"

"चलिए।"

"ग्राप दोनो कुछ मिनिट बाद नीचे उतरियेगा, "मैं बहुत दिन बाद नीचे जा रहा हूँ बाजार के लोगों से दुग्रा-सलाम में कुछ वक्त लगेगा।"

"जी हाँ, ग्राप चलिये।" प्रेम ने कहा।

"नव्वन पहिले चला था, फिर भी लोगों से मिलता-जुलता पीछे रह गया। प्रेम ग्रौर मैना ग्रजमेरी दरवाजे के एक ग्रोर खड़े लगभग दस मिनिट तक उसकी प्रतीक्षा करते रहे।

"ग्राइये टैक्सी में चलेंगे।" नव्वन ने उन दोनों के निकट पहुँचते हुए कहा।

ग्रपने स्थान पर खड़े-खड़े प्रेम बोला—"भाई साहेब भले ग्रादमियो जैसी जिन्दगी शुरू कीजिये। थोडी देर में बस ग्रा जायेगी, उसी में चलेंगे।"

"हुक्म सर ग्राँखों पर।" नव्वन वहीं खडा हो गया।

बस ग्राई। चढे तो नव्वन को एक मजाक सूझा, बोला—"ग्राप दोनों भले ग्रादमी एक साथ बैठिये, मैं यहाँ दूसरी सीट पर बैठता हूँ।"

"चलिये ग्रब बैठ जाइये। सीट तीन ग्रादमियो की है। इसकी कोई गारन्टी थोड़े ही है कि ग्राप के स्थान पर तीसरा जो कोई ग्रौर बैठेगा

वह भला आदमी ही होगा, बैठिये बैठिये ।"

पहिले मैना बैठी। दूसरी वार नव्वन के लखनवी इसरार पहिले आप ने प्रेम को बैठने पर मजबूर किया। प्रेम के बराबर नव्वन बैठा।

बस चली। रास्ते भर कोई बात नहीं हुई। नव्वन गुनगुनाता रहा, प्रेम कुछ सोचने में मग्न था। मैना खिड़की के किनारे बैठी थी सम्भवतः इसीलिए बाहर की ओर देखती रही।

"निजामुद्दीन चौकी।" बस कन्डेक्टर ने यात्रियों को सूचना दी। तीनों उतर गये।

"आइये।" मुख्य सड़क से उतर कर छोटी सड़क की ओर चलते हुए प्रेम ने कहा, "यह पीछे जो गुम्बज दिखाई दे रहा है, हुमायूं का मकबरा है। जिस सड़क पर हम लोग चल रहे हैं यह सीधी हज़रत निज़ामुद्दीन की दरगाह तक जाती है।"

आगे बढ़े तो पुराने ढंग का बना हुआ एक मकान था, अन्दर से बच्चों की आवाजें आ रही थीं।

"यह शायद स्कूल है ?" नव्वन ने पूछा।

"जी हाँ। भाभी इधर चलो।' एक जीर्ण चबूतरे से कुछ अध कच्ची-सी कबरें बिखरी पडी थीं। चबूतरे के पीछे साधारण सी दीवार थी जिसके एक कोने पर छोटा-सा दरवाजा था।

मैना को सहारा देकर प्रेम ने चबूतरे के किनारे से ऊपर चढ़ाया। फिर प्रेम और नव्वन भी ऊपर चढ़े।

दीवार के सहारे बने दरवाज़े के किवाड़ों को हाथ के सहारे से प्रेम ने खोला अन्दर साधारण-सी चहार दीवारी में कुछ कब्रें थी।

"जाइये।" दरवाजे से आगे बढ़ते हुए प्रेम ने एक कब्र की ओर इशारा किया।"

"कहाँ ?"

"आखिरी कब्र ग़ालिब साहेब की है।"

"मजाक छोड़िये।" चौंकते हुए नव्वन ने कहा।

"इसमें मजाक की क्या बात है।" प्रेम ने नब्बन का हाथ पकड़ा और आखिरी कब्र के निकट ले जाकर खड़ा कर दिया—"पढ़ लो सब कुछ तख्ती पर लिखा हुआ है।

नब्बन विस्मय और दुःख के संयुक्त आक्रमण से ठगा-सा रह गया। कभी प्रेम की ओर देखता कभी मैना की ओर।

धरातल से केवल एक बालिश्त उठा हुआ चूने का जीर्ण चबूतरा, और सिरहाने साधारण-सा नाम और अवसान की तिथि आदि से खुदा हुआ पत्थर! विश्वास नहीं होता था कि उर्दू शायरों का हृदय सम्राट, हिन्दुस्तान का महान कवि अपने लाखों करोड़ो श्रद्धालुओं के होते हुए भी तकरीबन एक ही सदी से इस बीरान खण्डहर में सोया हुआ है।

नब्बन कब्र के पैताने बैठ गया। भावुकतामय विषाद के कारण प्रचलित सम्मान का ढंग भी वह भूल गया।

धीरे-धीरे उसने अपने हाथों से कब्र को सहलाना आरम्भ किया, मैना और प्रेम की उपस्थिति वह बिल्कुल भूल गया। मैना ने एक बार उसे उठाना भी चाहा किन्तु प्रेम ने इशारे से रोक दिया।

पूरी कब्र की धूल बड़े यत्न से नब्बन ने हाथों से झाड़ दी। जब सिर उठाया तो प्रेम और मैना ने देखा नब्बन की आंखें डबडबाई हुई थी।

वह उठा—"बेगम, प्रेम साहिब चलिये। मैंने कभी ख्वाब में भी नहीं सोचा था कि मौत के बाद भी मुल्क ने मिर्जा साहेब के सोने के लिए अपनी अरबों की दौलत में से कुछ सिक्के खर्च करके सायदार जगह भी न दी होगी।

खिन्न हृदय से वहाँ से वापस चल दिये।

जैसे ही मुख्य सड़क पर आये सामने सब्ज बुर्ज दिखाई दिया। नब्बन ने पूछा—"यह भी किसी का मकबरा है प्रेम साहेब?"

"जी हाँ। यहाँ एक तख्ती टंगी हुई है, जिस पर लिखा है मुगलिया जमाने के किसी गुमनाम आदमी की कब्र।"

नब्बन के चेहरे पर व्यंगमय मुस्कराहट खेल गई—"मुल्क के शायरों

से तो यह गुमनाम आदमी ज्यादह मशहूर रहेंगे। कहिये प्रेम साहेब अब किधर चलियेगा ?"

"जिधर चाहे चलिये, भाभी हुमायूं का मकबरा देखोगी।"

"ज़रूर देखूंगी, जब लाये हो तो जो कुछ देखने लायक है सभी कुछ दिखाइये।"

"तब फिर आइये। भाई साहेब, वैसे उम्मीद है कि जल्द ही ग़ालिब साहेब की कब्र के ऊपर न सिर्फ छत बन जायेगी बल्कि पूरे मदफन की हालत भी बेहतर बना दी जायेगी। अखबारों में छपा था कि कोई अंजुमन इसी सिलसिले में पब्लिक से पैसा इकट्ठा करेगी।"

"यह मुल्क की खुशकिस्मती होगी।" नब्बन ने कहा।

दोपहर का समय हुमायूं के मकबरे पर बीता। फिर मैना ने कुतुब मीनार देखने की इच्छा प्रकट की। वहां से तांगा लेकर तीनों कुतुब चले।

वहाँ से लौटते-लौटते शाम हो गई। बस ने जब दिल्ली स्टेशन पर उतारा तो छः बज रहे थे।

"आज तो शायद आप लोग नहीं जा सकेंगे ?" प्रेम ने कहा।

"क्यों ? नब्बन ने पूछा।"

"शाम हो चुकी है अब क्या जाइयेगा।"

"गाड़ी नौ बजे जाती है। अभी तीन घंटे बाकी हैं। बस अब एक बार बहिन से मिलना बाकी है। बेगम क्या ख्याल है अगर चांदनी चौक हुए पैदल ही प्रेम साहेब के घर चलें।"

"मुझे भी ले चलियेगा ?"

"तुम्हें ही तो लेकर चलना है। एर रोज बहिन पूछ बैठी 'बीवी है' मुंह से निकल गया कि है। कहने लगी 'कसी दिन दिखा देना' सोचता हूँ कि यह वायदा भी आज पूरा कर चलूं। बस प्रेम साहेब आपके घर से जरा उस जहन्नुम तक जाना होगा कि ओढ़ने पहनने के कपड़े वहाँ से समेट लें — वहाँ सीधे स्टेशन और स्टेशन से लखनऊ।"

कम्पनी बाग से सीधे निकलकर तीनों चांदनी चौक पहुंचे।

"मुझे कुछ खरीदना है प्रेम साहेब।"

"शौक से खरीदिये।"

नब्बन ने एक रेशमी साड़ी खरीदी प्रेम को आश्चर्य तो हुआ कि नब्बन ने बिना मैना की पसन्द पूछे साड़ी कैसे खरीद ली। इसका रहस्य तब खुला जब एक दूकान में घुसकर नब्बन ने तेईस रुपये के खिलौने खरीद डाले।

भाई साहेब। दूकान से बाहर निकलते ही प्रेम ने कहा—"यह सब क्या मजाक है।"

'है तो मजाक ही, लेकिन तुम्हारी भाभी के हुक्म से हो रहा है। मेरा ख्याल है कि देवर-भाभी के मजाक में किसी गैर को दखलअन्दाजी नहीं करनी चाहिये।"

"लेकिन भाभी".........।"

"फरमाइये।" मैना बोली।

"यह सब काम अकल वालों का नहीं है।"

"अक्ल आपको मुबारक, मैं बेवकूफ ही अच्छी हूँ।"

फिर जो बहस चली तो तभी रुकी प्रेम का घर आ गया।

कितना अद्भुत है हमारा भारतीय समाज और उसकी नारियाँ, मैना का जिससे प्रेम की पत्नी आज से पहिले नाम तक से परिचित न थी, इस प्रकार स्वागत किया मानो उसकी सगी बहिन हो।

नब्बन चलने की जल्दी मचाता रहा, किन्तु प्रेम की पत्नी ने एक न सुनी।

वह कहती रही—"बस पाँच मिनट लगेंगे।" और पूरी-हलवा आदि बनाने का काम फैला बैठी, मजबूरन नब्बन मैना को वहीं छोड़कर प्रेम सहित जी. बी. रोड पर आया। सामान दो बक्सों में भरा और ओढ़ने-बिछाने के कपड़ों का बिस्तर लपेटकर खाली कमरा मुबारक की सम्भलवाया, पंजाबी का हिसाब साफ किया जो मिला उससे विदा ली और सामान सहित दोनों प्रेम के घर की तरफ चले।

आठ से अधिक बज गये किन्तु प्रेम की पत्नी और मैना की विदाई ही समाप्त होने में न आती थी। इस एक सवा घण्टे में मैना ने प्रेम के पुत्र को बीसियों बार चूमा—कितनी ही बार प्रेम की पत्नी से कहा—"इसे मुझे दे दो।"

और इससे दुगनी बार प्रेम की पत्नी ने स्वीकृति दी—"ले जाओ।"

बड़ी कठिनता से विदाई हुई गली के बाहर तांगे तक प्रेम की पत्नी भी मैना को छोड़ने आई।

तीनों जब स्टेशन पहुँचे तो गाड़ी छूटने में केवल दस मिनट बाकी थे।

इन्टर क्लास के दो टिकट लेते हुए नब्बन प्रेम की ओर मुस्कराया। बोला—"ये आखिरी गलती है प्रेम साहेब, आइन्दा जिन्दगी भले आदमी की तरह ही गुजारूँगा, समझ लीजिये कि..........।

"मैंने समझ लिया है, आइये कुली काफी आगे निकल गया है।"

कुली ने डिब्बे में सामान रख दिया, किन्तु नब्बन और मैना अभी प्रेम के साथ प्लेटफार्म पर ही खड़े थे। नब्बन कह रहा था—"इरादा है प्रम साहेब की किसी अखबार में नौकरी करूँगा। जब तक अखबार में नौकरी नहीं मिली कोई और मजदूरी करूँगा। उम्मीद हैं बेकार नहीं रहूँगा।......और हाँ 'मजारे गालिब' की बेहतर तामीर के लिये जो लोग पैसा इकट्ठा कर रहे हैं। उनका पता लगाकर लिखियेगा, अपनी मेनहत की मजदूरी में से मैं जरूर कुछ न कुछ उन्हें भेजूंगा।"

प्रेम ने दृष्टि उठाकर मैना को देखा—"भाभी भूल मत जाइयेगा, याद रखियेगा।"

"आपने हमें नई जिन्दगी दी है।" प्रेम के कन्धे पर स्नेह से हाथ रखते हुए मैना ने कहा—'आप मेरे और नवाब साहेब के देवता हैं।"

"देवता बनने का शौक मुझे नहीं है। बस देवर समझकर ही याद रखियेगा.......। और वह भी याद रखियेगा कि भाई साहेब की नई जिन्दगी की बुनियाद आपसे ही शुरू हो रही है। इस बुनियाद पर उनकी शोहरत की शानदार इमारत खड़ी होनी चाहिये और बेटे बेटियों की खूब-

सूरत फुलवारी……।"

तभी सीटी की आवाज सुनाई दी। ट्रेन के दूसरे छोर पर गार्ड हरी रोशनी दिखा रहा था।

"चलिये बैठिये।" प्रेम ने कहा—"कौन जाने आज के बाद दोनों से कब मुलाकात होगी।

इंजन ने सीटी दी। प्रेम ने दोनों से हाथ मिलाया। इच्छा रहने पर भी कोई बोल नहीं सका, तीनों की ही आँखें डबडबाई हुई थी।

गाड़ी धीमे-धीमे रेंगने लगी। दोनों खिड़की से सटे प्लेट फार्म पर खड़े प्रेम को उस समय तक देखते रहे जब तक कि वह आँखों से ओझल नहीं हो गया।

गाड़ी चली गई। जिन मित्रों के साथ कई महीने हँसते और झगड़ते बीते थे उनकी जुदाई से कुछ उदास-सा प्रेम घर वापस चल दिया।



२७

उधर दिल्ली से बाहर एक अनाज के गोदाम में, जहां मतदान की पेटियां सील मुहर लगाकर बन्द की गई थी, आज सुबह से ही वोट गिने जा रहे थे।

दोपहर बाद तीन बजे से छदम्मीलाल और गुसाईंजी तथा गूदड़मल और मोहनलाल के वोटों की गिनाईचल रही थी।

लाला गूदड़मल बहुत अशान्त थे। पहली चार पेटियां गिनी गईं उन्हीं से उनके घुटने टूट गये, पैरों का मानों दम-सा निकल गया। निढाल होकर वह बाहर आ गये। उनके पीछे-पीछे मोहनलाल भी आये।

बाहर परिणाम की परीक्षा में हजारों की भीड़ एकत्रित थी, गूदडमल का हाथ पकड़कर जबरन खींचते हुए मोहनलाल उन्हें एक ओर ले गये—"क्या हालत हो रही है तुम्हारी, जरा साहस से काम लो।

अभी जीत-हार का कैसे अनुमान किया जा सकता है।"

रोने में केवल आँसुओं की कसर थी। गूदड़मल ऐसे बोले जैसे प्राण निकल रहे हों—"मोहनलाल जी, मुझे तो आशा नहीं दिखती। मैं""मैं तो पैंतीस हज़ार के नीचे आगया।"

"घबराने से काम नहीं चलेगा, अगर मान लो ऐसा हुआ भी तो मैंने बहुत-सी बातें नोट कर रखी हैं, अदालत से छदम्मीलाल को न केवल असेम्बली की मेम्बरी से हटवा दूंगा, बल्कि भविष्य में चुनाव में खड़े होने के अयोग्य भी प्रमाणित करा दूंगा।"

किन्तु गूदड़मल की हिम्मत न बधी। उसकी इच्छा हो रही थी कि बीच मैदान में बैठकर घटे भर तबीयत से रो लें। पैंतीस हज़ार"""""।"

"चलो अन्दर चलो, वह देखो साँवलचन्द वगैरह तुम्हारी तरफ ही देख रहे हैं, व्यर्थ ही उपहास कराने से क्या लाभ है, आओ।" और पुनः हाथ पकड़कर मोहनलाल गूदड़मल को अन्दर ले गये।

पाँच बजते-बजते लगभग आधे वोट गिने जा चुके थे। गूदड़मल दो सौ चालीस वोट से हार में चल रहे थे, और गुसाईं जी के मुकाबिले मोहनलाल की हार लगभग निश्चित थी, वह लगभग सात सौ वोटों से पीछे थे।

धीमे-से किन्तु कुछ उखड़े-उखड़े स्वर में गूदड़मल बोले—"मोहनलाल यहाँ कहीं आसपास पाखाना है?'

"आइये बाहर होगा।" मन ही मन गूदड़मल की कायरता से खिन्न होकर मोहनलाल उसके साथ बाहर चले।

एक ओर लोग-बाग गूदड़मल पर फब्तियाँ कस रहे थे, दूसरी ओर उनके समर्थक, क्या हुआ? यह जानने के लिये उनके पीछे दौड़े, और लाला गूदड़मल थे कि उन्हें टट्टी पकड़नी भारी हो गई।

झल्लाकर मोहनलाल बोले—"यहाँ तमाशा नहीं हो रहा है, लाला शौचालय गये हैं, जाओ भीड़ मत करो।"

नेता का आदेश मानकर बेचारे संघी उलटे पाँव लौट गये। लगभग

पन्द्रह मिनट बाद गूदड़मल टट्टियों में से निकले। कुल्ला करके लगभग बीस कदम ही चले होंगे कि बोले—"मोहनलाल जी आप चलिये, मैं एक बार और जाऊँगा।" और बिना उत्तर प्रतीक्षा किये वह फिर टट्टियों की ओर दौड़ते चले गए।

मन-ही मन कुढ़ते हुए मोहनलाल खड़े हो गये अब की बार लाला ने पहिले से भी अधिक देर लगा दी।

गूदड़मल के निकलते ही मोहनलाल ने कठोर स्वर में कहा—"लाला जी आप घर जाइये। यहाँ जो कुछ होगा मैं देख रहा हूँ।"

अनेकों ताँगे और मोटरों के बीच गूदड़मल की टमटम फँसी खड़ी थी, कई व्यक्ति कोचवान को ढूंढ़ने दौड़ाये गये। मोहनलाल के मन में बस एक ही खटका था कि कहीं गूदड़मल को फिर हाजत न हो जाये।

गूदड़मल को टमटम में बैठा दिया गया। जैसे ही टमटम चली मोहनलाल संतोष की साँस लेकर पुनः गोदाम की ओर चल दिये।

सात बजते-बजते बाकायदा घोषणा हो गई कि गूदड़मल के मुकाबले लाला छदम्मीलाल छै सौ सात वोटों से जीत गये।

इधर लाला छदम्मीलाल एक स्थूल शरीर होने के कारण वैसे ही अधिक भाग-दौड़ करने में असमर्थ थे—उधर उनके मैम्बर बनने की घोषणा होते ही उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ मानो उनके मंत्री बनने का स्वप्न सिद्ध हो गया हो। सिर में सितार के तारों जैसी टुनाटुन होने लगी पैरों में झनाझन झुनझुनी-सी बजने लगी।

"चलो।" गुसाईंजी कह रहे थे। इलाके के बाहर ही बैण्ड बाजा हार-फूल, सब चीजें लिये आदमी तैयार मिलेंगे। जल्दी करो।"

अनिच्छा पूर्वक छदम्मीलाल उठे। उनकी इच्छा थी कि यहीं गोदाम में मुँह ढककर सो जायें।

गोदाम से बाहर निकलते ही छदम्मीलाल की जय के नारों से आकाश गूंज उठा। भीड़ को चीर कर कार तक पहुँचने में छदम्मीलाल की साँस लुहार की धौंकनी की भाँति चलने लगी। कार में एक ओर गुसाईं

जी और दूसरी ओर सांवलचन्द बैठे।

मोटर चली तो जरा दम आया—"चाचा आज अकेले का जलूस रहने दो, कल तुम्हारा भी नतीजा निकल जायगा तब दोनों साथ ही चलेंगे?

इससे पहिले कि गुसाईंजी कुछ उत्तर दें सांवलचन्द बोले—"पागल हुआ है, सब बुरा मानेंगे।"

"और मेरा भी नतीजा निकल ही गया समझो, मोहनलाल को ऐसा चित्त पछाड़ा है कि जिन्दगी भर याद करेगा।

निरुत्तर होकर छदम्मीलाल ने पीछे देखा, सांवलचन्द की खुली कार में सुन्दरलाल और रम्भा भी पीछे-पीछे ही आ रहे थे।

जैसे ही कार चुनाव क्षेत्र के नुक्कड़ पर पहुँची, प्रतीक्षा में खड़े पाँच सौ आदमियों ने नारों से कानों के परदे फाड़ने आरम्भ कर दिये। फूल मालाओं से छदम्मीलाल और गुसाईंजी को लाद दिया गया। बैन्ड बजना शुरू होगया।

आगे-आगे बैन्ड, उसके पीछे छदम्मीलाल, गुसाईंजी और सांवलचन्द पीछे-पीछे पूरे पाँच सौ आदमी; यहाँ आकर सुन्दरलाल और रम्भा कहाँ चले गये थे, इसका किसी को पता नहीं था।

गूदड़मल के मकान के आगे जैसे ही जुलूस पहुँचा नारों में आवश्यकता से अधिक गरमी आगई। सांवलचन्द के कान में गुसाईंजी ने कुछ कहा, उसने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया।

बैन्ड बन्द कर दिया गया। नारे लगाने वालों को चुप रहने का आदेश दिया गया।

छदम्मीलाल का हाथ पकड़ कर गुसाईंजी गूदड़मल के घर में घुस गये।

गूदड़मल अन्दर (जनान खाना कहिये) पलंग पर पड़े थे। आस-पास ही पत्नी, पुत्र और पुत्र वधु बिखरे हुए से बैठे थे।

कमरे में घुसते ही गुसाईंजी ने जोर से कहा—ताकि सभी उपस्थित व्यक्ति सुनलें—"चलरे छदम्मी अपने मामा और मामी के पैर छू। चुनाव

पन्द्रह मिनट वाद गूदड़मल टट्टियों में से निकले। कुल्ला करके लगभग बीस कदम ही चले होंगे कि बोले—"मोहनलाल जी आप चलिये, मैं एक वार और जाऊँगा।" और बिना उत्तर प्रतीक्षा किये वह फिर टट्टियों की ओर दौड़ते चले गए।

मन-ही मन कुढ़ते हुए मोहनलाल खड़े हो गये अब की वार लाला ने पहिले से भी अधिक देर लगा दी।

गूदड़मल के निकलते ही मोहनलाल ने कठोर स्वर में कहा—"लाला जी आप घर जाइये। यहाँ जो कुछ होगा मैं देख रहा हूँ।"

अनेकों ताँगे और मोटरों के वीच गूदड़मल की टमटम फँसी खड़ी थी, कई व्यक्ति कोचवान को ढूँढ़ने दौड़ाये गये। मोहनलाल के मन में वस एक ही खटका था कि कहीं गूदड़मल को फिर हाजत न हो जाये।

गूदड़मल को टमटम में वैठा दिया गया। जैसे ही टमटम चली मोहनलाल संतोष की साँस लेकर पुनः गोदाम की ओर चल दिये।

सात वजते-वजते वाकायदा घोषणा हो गई कि गूदड़मल के मुकावले लाला छदम्मीलाल छै सौ सात वोटों से जीत गये।

इधर लाला छदम्मीलाल एक स्थूल शरीर होने के कारण वैसे ही अधिक भाग-दौड़ करने में असमर्थ थे—उधर उनके मैम्वर वनने की घोषणा होते ही उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ मानो उनके मंत्री वनने का स्वप्न सिद्ध हो गया हो। सिर में सितार के तारों जैसी टूनाटुन होने लगी पैरों में झनाझन झुनझुनी-सी वजने लगी।

"चलो।" गुसाईजी कह रहे थे। इलाके के वाहर ही वैण्ड वाजा हार-फूल, सव चीजें लिये आदमी तैयार मिलेंगे। जल्दी करो।"

अनिच्छा पूर्वक छदम्मीलाल उठे। उनकी इच्छा थी कि यहीं गोदाम में मुंह ढककर सो जायें।

गोदाम से वाहर निकलते ही छदम्मीलाल की जय के नारों से आकाश गूंज उठा। भीड़ को चीर कर कार तक पहुँचने में छदम्मीलाल का साँस लुहार की धौंकनी की भाँति चलने लगी। कार में एक ओर गुसाईं

जी और दूसरी ओर सांवलचन्द बैठे।

मोटर चली तो जरा दम आया—"चाचा आज अकेले का जलूस रहने दो, कल तुम्हारा भी नतीजा निकल जायगा तब दोनों साथ ही चलेंगे ?

इससे पहिले कि गुसाईंजी कुछ उत्तर दें सांवलचन्द बोले—"पागल हुआ है, सब बुरा मानेंगे।"

"और मेरा भी नतीजा निकल ही गया समझो, मोहनलाल को ऐसा चित्त पछाड़ा है कि जिन्दगी भर याद करेगा।

निरुत्तर होकर छदम्मीलाल ने पीछे देखा, सांवलचन्द की खुली कार में सुन्दरलाल और रम्भा भी पीछे-पीछे ही आ रहे थे।

जैसे ही कार चुनाव क्षेत्र के नुक्कड़ पर पहुँची, प्रतीक्षा में खड़े पाँच सौ आदमियों ने नारों से कानों के परदे फाड़ने आरम्भ कर दिये। फूल मालाओं से छदम्मीलाल और गुसाईंजी को लाद दिया गया। बैन्ड बजना शुरू होगया।

आगे-आगे बैन्ड, उसके पीछे छदम्मीलाल, गुसाईंजी और सांवलचन्द पीछे-पीछे पूरे पाँच सौ आदमी; यहाँ आकर सुन्दरलाल और रम्भा कहाँ चले गये थे, इसका किसी को पता नहीं था।

'गूदड़मल के मकान के आगे जैसे ही जुलूस पहुँचा नारों मे आवश्यकता से अधिक गरमी आगई। सांवलचन्द के कान मे गुसाईंजी ने कुछ कहा, उसने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया।

बैन्ड बन्द कर दिया गया। नारे लगाने वालो को चुप रहने का आदेश दिया गया।

· छदम्मीलाल का हाथ पकड़ कर गुसाईंजी गूदड़मल के घर मे घुस गये।

गूदड़मल अन्दर (जनान खाना कहिये) पलंग पर पड़े थे। आस-पास ही पत्नी, पुत्र और पुत्र वधु बिखरे हुए से बैठे थे।

कमरे मे घुमते ही गुसाईंजी ने जोर से कहा—ताकि सभी उपस्थित व्यक्ति सुनलें—"चलरे छदम्मी अपने मामा और मामी के पैर छू। चुनाव

का मुकाबला कोई लड़ाई झगड़ा नहीं है।'

और छदम्मीलाल भी इससे पहिले कि ... झुककर बैठें उनके पैरों में औंधे पड़ गए।

"जीते रहो बेटा।" हारकर गूदड़मल उठे ... छदम्मीलाल की कमर सहलाते हुए बोले—"मैं तो तुम्हें वहीं बधाई देता किन्तु आज सुबह से ही तबियत खराब थी, वहां से भी जल्दी चला आया था।

"क्या बात हुई।" गुसाईंजी ने लपककर गूदड़मल की नब्ज पकड़ते हुए कहा।

"कुछ नहीं ऐसे ही कुछ पेट में गड़बड़ हो गई है।"

"हूँ।" नब्ज देखकर गुसाईंजी बोले—"मेदे में जरा गरमी है, मैं किसी के हाथ चार पुड़िया भिजवा दूंगा, सुबह तक तबियत ठीक हो जायगी। चल भई छदम्मी।"

मामी (अर्थात् गूदड़मल की पत्नी) से आशीष प्राप्त करके गुसाईंजी सहित छदम्मीलाल बाहर आगये।

मकान से दस कदम चलकर बैन्ड फिर बजने लगा नारे फिर लगने लगे।

रात के ग्यारह बजे तक यही सब तमाशा चलता रहा। अंत में विजय जुलूस समाप्त करके गुसाईंजी तथा अन्य व्यक्तियों ने चुनाव क्षेत्र के दूसरे सिरे पर विदा ली।

वहाँ केवल सांवलचन्द की कार उपस्थित थी। छदम्मीलाल की कार शायद रम्भा ले गई थी।

छदम्मीलाल सांवलचन्द की कार में ही बैठ गये, गुसाईंजी प्रसन्न हृदय से घर की ओर चले भगवान् की दया से पालियामेन्ट का मैम्बर बनने में उनकी जेब से एक कौड़ी भी खर्च नहीं हुई थी।

"बोलो बेटा!" सांवलचन्द ने चलती कार में पूछा—"कहाँ चल... का इरादा है, आज की तो पूरी रात रंगीन होनी चाहिए।"

"कुछ देर पहिले घर चले चलो चाचा।"

"ड्राईवर, छदम्म ... चलना है।" सांवलचन्द ने जरा ऊंची आवाज में कहा।

छदम्मीलाल ... किसी प्रकार के भी विजय चिन्ह नहीं थे, चौकीदार बैठा ...। अन्दर कोठी के प्रवेश द्वार पर एक कोने में फर्श पर बिस्तर ... पहाड़ी नौकर सो रहा था।

पहाड़ी को ठोकर से जगाते हुए छदम्मीलाल बोले—"खड़ा हो बे, साला दिन छिपे से ही सो जाता है।"

एक बार पहाड़ी चौंका, किन्तु दूसरे ही क्षण वह खड़ा हो गया। आगे-आगे छदम्मीलाल और सांवलचन्द पीछे-पीछे पहाड़ी ने अन्दर प्रवेश किया।

हाल में पहुँचते ही पहाड़ी ने सफाई दी—"बाबू जी ने कहा था कि आज रात आप शहर की हवेली में ही रहेंगे ?"

"गधा साला, कहाँ हैं बहू जी ?"

"जी ऊपर अपने कमरे में।"

"चाचा तुम जरा बैठो मैं अभी आया।" और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये छदम्मीलाल सीढ़ियों की ओर दौड़ गए। पीछे-पीछे पहाड़ी भी तेजी से चला।

"लाला जी !" अभी लाला सीढ़ियों पर पाँव भी न रख पाये थे पहाड़ी ने आकर धीमे स्वर में कहा—"ऊपर उनके साथ वकील साहब भी हैं।"

छदम्मीलाल के पैरों तले से मानो जमीन खिसकने लगी—"कौन मुरारलाल ?"

"जी ?"

पहाड़ी वही खड़ा रह गया। वहाँ से छदम्मीलाल सांवलचन्द के पास पहुँचकर बोले—"चाचा तुम्हारी बदौलत ही मैं चुनाव में जीता हूँ"......अपने बेटे की एक तमन्ना और पूरी करदो।"

"बोलो, बेटा बोलो ?"

"उस हरामजादी मैना ने बड़ा नाँवा खाया है मेरा, आज उसे यहाँ

पकड़कर लादो। जानते होगे, चांद बिल्डिग में है।"

"अरे नहीं, वह देखेगी तो ?"

"उसकी चिन्ता मत करो, चाचा मेरा काम तुम्हें करना ही होग

"काम तो खैर हो जायगा, ज्यादा-ज्यादा यह होगा कि सौ दे रुपये माँग लेगी सो दे दूंगा।

"तो फिर चाचा ले आओ।"

"ले तो आऊं पर वह ?"

"चाचा तुम उसकी फिकर मत करो—तुम्हें मेरी कसम व मे काम करदो।"

बूढ़े सांवलचन्द जवानों जैसी फुर्ती से उठे—"जाता हूँ, तू याद करेगा कि चाचा सांवलचन्द मिला था। आधे घण्टे के अन्द वह तेरी बगल में होगी। हम तो सोच लेंगे कि आज की रात तेर ही और खराब कर दी।"

इतना कह कर सांवलचन्द ने तो कोठी के दरवाजे से बाह रक्खा और छदम्मीलाल ने पुकारा—"यहाँ आ वे पहाड़ी।"

"जी, लाला जी।" कहता हुआ पहाडी छलांग लगाकर भा हुआ आया।

"देख सब नौकरों को जगा ले, और सब इकट्ठे होकर वह दरवाजे के बाहर बैठ जाओ। जैसे ही सुन्दरलाल कमरे से बाहर साले को जूते मारते मारते सड़क तक छोड़ आना।"